महान् परिवर्तन

['The Big Change' का अनुवाद]

लेखक

फ्रेडरिक लुई एलन

भाषान्तरकार

ए० के० जैन

बी. ए., एल-एल. बी.

वोरा एण्ड कम्पनी पब्लिशर्स प्राइवेट लिमिटेड

३, राउण्ड बिल्डिंग, कालबादेवी रोड, बंबई--२

यह पुस्तक

श्री फ्रेडरिक लूई एलन की इस पुस्तक में अमेरिकी जीवन-यापन-प्रणाली में उपस्थित चमत्कारिक परिवर्तनों और उनके कारणों पर प्रकाश डाला गया है। लेखक ने अपनी विषय-माला में अमेरिकी जीवन के सभी पक्षों का समावेश किया है, जैसे — राजनीति, अर्थ, व्यापार, साहित्य, कला, क्रीड़ा, खेल और दैनिक व्यवहार आदि। आधुनिक अमेरीकी जनता की अवस्था में आवश्यक सुधार प्रस्तुत करने के लिए लेखक ने कई सुझाव दिए हैं।

लेखक ने अपनी इस उपयोगी पुस्तक में उन अनेक शक्तियों का वर्णन किया है, जिन्होंने देश के सार्वभौमिक अभ्युदय और परिवर्तन में सहयोग दिया। इन शक्तियों में प्रचुर उत्पादन, आटोमोबाइल उद्योग में क्रान्तिकारी परिवर्तन, भयंकर मंदी, बड़ी सरकार का शुभागमन और महाशक्ति के रूप में अमेरिका की प्रतिष्ठा आदि उल्लेखनीय हैं। पुस्तक में विद्वान लेखक ने बतलाया है कि बिना किसी विशेष गड़बड़ी के किस प्रकार अर्थतन्त्र में सुधार कर लिया गया और किस प्रकार अमीर और गरीब के बीच की बड़ी खाई को पाटने का सफल प्रयास कार्यान्वित हुआ।

अन्ततया लेखक ने एक रोचक प्रसंग यह भी दिया है कि अमेरिका के विषय में विदेशियों की जो कल्पना है, उससे वह सर्वथा भिन्न है और यही नहीं, कई अमेरिकी लोगों की धारणा में जो चित्र है उससे भी भिन्न — अलग है।

श्री एलन का विश्वास है कि हमने एक ऐसे समाज की रचना कर ली है जो काफ़ी आकर्षक, उत्साहमय और स्थिर है। और विशेष बात तो यह है कि इस सामाजिक पुनर्रचना कार्य ने व्यक्ति के निजी प्रयत्न में कहीं कोई बाधा नहीं पहुँचाई है। व्यक्ति के विचार, व्यवसाय, रहन-सहन और अधिकार आदि सर्वथा सुरक्षित हैं।

लेखक-परिचय

'हार्पर्स मैगज़ीन' के भूतपूर्व सम्पादक श्री फ्रेडरिक लुई एलन का जन्म बोस्टन नगर में १८९० में हुआ था। ग्रॉटन और हार्वर्ड के विद्यालयों में विद्याभ्यास करने के उपरान्त श्री एलन सन् १९१२ से १९१४ तक हार्वर्ड में अध्यापक रहे। अगले दो वर्ष तक आपने 'द अटलांटिक मन्थली' नामक प्रसिद्ध पत्र का सम्पादन किया। इसके बाद, प्रथम महायुद्धकाल में आप राष्ट्रीय सुरक्षा समिति, वाशिंग्टन के सहयोगी रहे। पुनः आप हार्पर्स मैगज़ीन के सम्पादकीय विभाग में सम्मिलित हुए और उन्नति करते हुए १९४१ में उसके प्रधान सम्पादक बन गये। तब आपने इस कार्य से अवकाश ग्रहण किया और अपना अधिकांश समय साहित्य सृजन में व्यतीत करने लगे।

श्री एलन की पठनीय पुस्तकों में १९३१ में प्रकाशित 'ऑनली यस्टरडे', 'द लॉर्ड्स आफ़ क्रियेशन' १९३५, 'सिन्स यस्टरडे' १९४९, 'द ग्रेट पीयर पान्ट मॉर्गन' १९४९ हैं, इनके अतिरिक्त 'द अमेरिकन प्रॉसेशन', 'मेट्रोपोलिस' और 'द बिग चेन्ज' भी काफ़ी लोकप्रिय पुस्तकें हैं।

१९४२ से १९४८ के ६ वर्षों तक श्री एलन निर्वाचित पर हार्वर्ड के निरीक्षक नियुक्त हुए और आपने सफलतापूर्वक अपने कार्य का संचालन किया। आप बैनिंग्टन कालिज के ट्रस्टी भी रहे। अमेरिकन लेखकों की दो प्रसिद्ध संस्थाओं आथर्स गिल्ड और आथर्स लीग की समितियों के भी आप वर्षों तक सदस्य रहे हैं।

आजकल आप फ़ोर्ड फाउन्डेशन के ट्रस्टी हैं।

नूतन शताब्दी का प्रारम्भ

वेन कोर्टलेएट पार्क में न्यूयार्कवासी प्रथानुसार १ जनवरी १६०० को प्रातः-काल स्केटिंग करने की तैयारी कर रहे थे कि तभी बर्फ पड़नी शुरू हो गयी। किन्तु तीखी सर्दी उस जनसमुदाय के जोश को ठंडा न कर सका। वह जनसमुदाय लोवर ब्रोडवे में गत रात बीसवीं शताब्दी का प्रारम्भ अथवा यों कहिये कि उन्नीसवीं के अन्तिम वर्ष का आदि महोत्सव मनाने के लिए एकत्र हुआ था।

'न्यूयार्क टाइम्स' ने अपने प्रथम जनवरी के सम्पादकीय लेख में आशाप्रद भविष्य का संकेत किया था। उसने लिखा था, "व्यवसाय और उत्पादन की दृष्टि से वर्ष १८६६ आश्चर्य का अथवा यथार्थ में अद्भुत चमत्कार का वर्ष था। हमें विश्वास हो गया है कि सर्वोत्तम विशेषता प्राप्त करने का श्रेय वर्ष १६०० को मिलेगा, अन्यथा विगत १२ महीनों को ही सर्वोत्तम वर्ष कहा जा सकता था। हम अत्यन्त उज्ज्वल भविष्य लेकर नव वर्ष के प्रांगण में पदार्पण कर रहे हैं।"

ढलता हुआ वर्ष अपने अन्त की ओर ढुलक रहा था। नगर के ऊपरी भाग में छत्तीस नम्बर वाली गली और मेडिसन एवेन्यू के कोने पर भूरे पत्थरों का एक विशाल भवन खड़ा था। इसी प्रासाद में महोगनी की लकड़ी की आलमारियों से सजे अपने पुस्तकालय में श्री जान पियरपोंट मोर्गन अकेले बैठे ताश के पत्ते लगा रहे थे। श्री मोर्गन विश्व में सबसे बड़े बैंक के प्रधान तथा सम्पूर्ण अमेरिका के व्यवसायियों में अग्रणी हैं। आगामी बारह महीनों में श्री मोर्गन यूरोप की यात्रा करने वाले हैं। वहाँ वे बड़े-बड़े चित्र, दुर्लभ पुस्तकें एवं पांडुलिपियाँ अधिकाधिक संख्या में खरीदेंगे तथा अपनी पुत्री के विवाह के अवसर पर दो हजार चार सौ अतिथियों के स्वागत योग्य और अपने भवन के समीप ही अस्थायी नृत्यगृह बनवायेंगे। यही नहीं, वे लौह व्यवसाय के उदीयमान नक्षत्र श्री एंड्र्यू कार्नेगी से यूनाइटेड स्टेट्स स्टील कारपोरेशन की स्थापना के लिए बातचीत भी करेंगे। यह प्रतिष्ठान इतना बड़ा होगा जितना दुनिया ने कभी देखा न होगा। सन् १६०० में श्री कार्नेगी की आयकर से मुक्त व्यक्तिगत आय २ करोड़ ३० लाख

डालर होगी। श्री मोर्गन को इन सारी बातों का अनुमान भी न था। वे ताश के पत्ते बिछाने में लीन थे। लेकिन फिर भी वे संतुष्ट थे। उनके भावी जामाता तथा सुहृद जीवनी लेखक ने ३१ दिसम्बर १८९९ को उसी संध्या की चर्चा करते हुए लिखा है :

"श्री मोर्गन का भवन उनके मनचाहे स्थान पर बना था और वह उनकी जीवनचर्या के अनुकूल था। श्रीमती मोर्गन कुशलपूर्वक थीं और साथ में उनकी अविवाहित पुत्रियाँ लुईसा और एन उनके पास घर पर ही रहती थीं। उनकी विवाहित सन्तान और उनके बच्चे सुखपूर्वक रह रहे थे। और स्वयं उनका स्वास्थ्य भी ठीक था। उनकी मित्र-मण्डली भी समीप ही रहती थी। उनके समाज के लोगों ने भी उन्हीं की तबियत पायी थी और बैंक तथा व्यवसाय वाले लोग भी जिनके संसर्ग में वे आ चुके थे, अधिकतर उन्हीं जैसे दृष्टिकोण और नैतिक मान्यता रखते थे। न्यूयार्क नगर का जीवन अभी तक मैत्रीपूर्ण और पड़ोसियों जैसा प्रेममय था और निवास की दृष्टि से वह रोचक स्थान था।"

निःसंदेह लाखों न्यूयार्कवासी ऐसे थे जिनके लिये वह नगर मुश्किल से 'निवास की दृष्टि से उपयुक्त स्थान था।' लोअर ईस्ट साइड में इतनी घनघोर गरीबी, गन्दगी और कष्ट विद्यमान थे कि आज सहसा हमें उस पर विश्वास न होगा। बाहर से आये हुए कुटुम्ब अमेरिका के बहुत से अन्य नगरों व उद्योग केन्द्रों में रह रहे थे। उनकी दशा भी प्रायः वैसी ही बुरी अथवा उससे भी बुरी थी। शिकागो के क्षेत्र में रहने वाले पोल, लिथ्यूओनी और स्लोवकों की दुर्दशा का यहाँ संक्षिप्त वर्णन दिया जाता है जो कुछ वर्ष बाद अप्टन सिन्क्लेयर ने किया था और जिसके संबंध में दो मत नहीं हो सकते।

"यूरोपवालों की क्रूरता द्वारा अज्ञान के अंधकार में ढकेले तथा कुंठित बनाये गये और अमेरिकावासियों की उपेक्षा से सर्वनाश के मुख में झोंके गये वे लोग गृह दलालों, राजनीतिक नेताओं और न्यायाधीशों द्वारा लुट चुके थे, जो उनके किसी अधिकार को मानने के लिए तैयार ही न थे। कब उनके बच्चे शीतगर्भित एवं कष्टप्रद क्वार्टर के निकट स्थित दुर्गंधित काईवाले जलाशयों में डूब जायेंगे, कब उनकी पुत्रियाँ वेश्यावृत्ति के लिए विवश हो जायेंगी, कब उनके पुत्र मालिकों

की तरफ से कोई भी सुरक्षात्मक व्यवस्था न होने के कारण उबलते हुए कढ़ाव में गिर जायेंगे, इसे न कोई जानता था और न इसकी कोई चिन्ता ही करता था।''

''न कोई जानता था और न कोई चिन्ता ही करता था''....पर ऐसा क्यों ? क्योंकि वह समय उदासीनता का था। १९ वीं सदी के मध्य काल में व्याप्त मंदी के अन्त के बाद से अमेरिका में आर्थिक विषमता के विरोध की भावना धीमी पड़ गई थी। जैसा कि इस बैंक अधिपति के जीवनी लेखक ने उनकी संतोष वृत्ति का वर्णन किया है, यदि आत्मतुष्टि की हल्की-सी झलक मिल भी जाती है, तो वह उस समय के प्रायः सभी सम्पन्न लोगों की मनोवृत्ति की द्योतक है। उन सबके मन में उज्ज्वल भविष्य की आशाएँ हिलोरें ले रही थीं।

श्री मोर्गन का विश्वास था कि स्थायी एवं विवेकपूर्ण युग का आविर्भाव होने ही वाला है। उनकी पक्की धारणा थी कि उस युग में श्री मार्क हेना जैसे राजनीतिक नेता समानता के कोई भी मूर्खतापूर्ण विचार प्रशासन में कहीं प्रविष्ट न होने देंगे। और अमेरिका के व्यवसाय का संचालन राजनीतिज्ञों के हाथ में न होकर अपने जैसे उन बैंकपति धनिकों और विवेकशील भद्र पुरुषों के हाथ में होगा जिनसे वे अपने प्रिय क्लबों में मिलना पसन्द करते थे।

यदि श्री मोर्गन कल्पना कर पाते कि आगामी अर्ध शताब्दी राष्ट्र के लिए क्या वरदान लायगी और किस तरह विभिन्न और बहुधा युद्धरत शक्तियाँ मिल-कर एक ऐसे अमेरिका का निर्माण करेंगी जो न केवल १९०० के अमेरिका से भिन्न होगा, बल्कि उनकी कल्पनाओं से बिलकुल परे, ऐसा अमेरिका जिसमें आश्चर्यजनक उत्पादन सामर्थ्य के साथ समृद्धि का ऐसा व्यापक वितरण होगा जैसा कि दुनिया में अन्यत्र कहीं नहीं देखा गया, तो वह भौंचक्के हुए बिना न रहते।

संभावित परिवर्तन का मर्म तथा उसकी व्यापकता को समझने के लिए हमें पहले १९०० शताब्दी में लौटना होगा और तत्कालीन दृश्य तथा लोगों के जीवन पर चारों तरफ दृष्टि डालनी पड़ेगी।

२

यदि भली प्रकार ठीक किया गया कालयंत्र आपको सन् १९०० के

अमेरिका के किसी नगर की प्रधान गली में ले जा सकता और आप अपनी इन्हीं आँखों से देख सकते, तो पहले आप शायद यही कह उठते, "अरे इन घोड़ों को तो देखो।"

१९०० में सारे अमेरिका में केवल १३,८२४ मोटरगाड़ियों की रजिस्ट्री हुई थी जब कि सन् १९५० में ४ करोड़ ४० लाख से अधिक मोटरगाड़ियों की रजिस्ट्री हुई। और वे वास्तव में बड़े शहरों व रमणीय स्थानों को छोड़कर शायद ही कहीं दिखायी देती थीं। इसका कारण यह था कि सन् १९०० में लोग मोटरगाड़ी को धनवानों का और केवल धनवानों का ही क्यों, बल्कि कुछ मनचले और साहसिक धनिक खिलाड़ियों के मनबहलाव का साधन समझते थे। यह लोग ऐसी अनिश्चित मशीन का उपयोग करने में आनन्द मानते थे, जो किसी भी क्षण उनको नष्ट कर सकती थी। नगरों के बाहर कहीं भी पक्की सड़कें न थीं और रास्तों पर न तो गैरेज होता था और न पेट्रोल की टंकी। मोटरवालों को स्वयं अपना साहसिक कारीगर भी बनना पड़ता था।

टेलीफोन तब तक थोड़ी संख्या में लगे थे और रेडियो तो था ही नहीं। आने जाने के लिए लोगों को रेलगाड़ी, घोड़े और छकड़े पर निर्भर रहना पड़ता था; बड़ी-बड़ी बस्तियाँ किस तरह एक दूसरे से पृथक् रहती थीं आज यह अनुभव करना कठिन है। जो नगर रेल के रास्ते पर न पड़ता था, वह वास्तव में अधिक दूर माना जाता था। यही कारण है कि प्रत्येक प्रदेश, प्रत्येक नगर, प्रत्येक फार्म को अधिकतर अपने ही साधनों व अपनी ही उपज, सामाजिक संबंध, आमोद-प्रमोद के साधनों पर निर्भर रहना पड़ता था। यात्रा और सम्पर्क की दृष्टि से अमेरिका वास्तव में बहुत बड़ा देश था।

फिर भी कोई आश्चर्य नहीं कि अधिकतर अमेरिकावासी अपने वंशजों की अपेक्षा अरक्षा के उस भयानक विचार से कम उत्पीड़ित होते थे जिसका आविर्भाव आर्थिक, राजनीतिक तथा अन्तर्राष्ट्रीय शक्तियों के संघर्ष से होता है। वे अपने परिवार के स्तर की बातों की चिन्ता न करते थे। उनका विचार-क्षेत्र सीमित था। वे अपने जाने-पहचाने लोगों और चिरपरिचित वस्तुओं के बीच अपना जीवनयापन करते थे। व्यक्ति, परिवार और उनके साथी सभी प्रायः उनकी ही तरह के थे। वे एक दूसरे के विचारों से परिचित होते थे।

तब व्यक्ति की सफलता या असफलता उसकी अपनी अंतर्दृष्टि, परिस्थिति तथा घटनाचक्र पर आज की अपेक्षा अधिक निर्भर हुआ करती थी। अपने बेटों और पोतों की अपेक्षा वह बहुधा कम ही समझता था कि उसका भाग्य या यों कहिये कि उसका जीवन वाशिंगटन या बर्लिन अथवा मास्को में किये गये किसी निर्णय पर अवलम्बित है। अपनी पारिवारिक गाड़ी के ऊपर से उसकी दृष्टि जिस संसार पर पड़ती थी वह मैत्रीपूर्ण भले ही न रहा हो परन्तु उसके अधिकांश से उसको आत्मीयता अनुभव होती थी।

३

यदि आप सन् १६०० की किसी मुख्य सड़क के किनारे टहलते हुए पहुँच गये तो आप दूसरी बार आश्चर्य से कह उठेंगे इन स्कर्टों को तो देखिए।

क्योंकि कस्बे की हर प्रौढ़ा ऐसे वस्त्र पहनती थी जो सड़क को झाड़ता हुआ-सा लगता। और यदि कहीं पहननेवाली को स्वच्छता के लिए उसे ऊपर उठाना याद न रहता, तो रगड़ से दामन को मैला करते और फाड़ते हुए कभी-कभी तो वह वस्तुतः सड़क झाड़ने लगता। कमर तक की कमीज़ के ऊँचे कालर से लेकर नीचे ज़मीन तक वर्ष १६०० की स्त्री परिधानों में अधिक ढकी रहती थी। यहाँ तक कि देहात में पहनने के लिए और वस्तुतः गोल्फ़ या टेनिस खेलते समय भी जो स्कर्ट इस्तेमाल होता था वह भी ज़मीन से दो या तीन इंच ही ऊँचा होता था। और एक टोप, प्रायः नाविक का कड़ा टोप अधिकतर पहना जाता था।

हर मौसम में स्त्रियाँ कमीज़, पाजामे, चोली, चोली के ऊपर का वस्त्र और एक या एक से अधिक पैटीकोट, अन्दर के कपड़ों की तह के बाद तह में बँधी रहती थीं। उन दिनों की चोली एक भयानक व्यक्तिगत कैदखाना होती थी और व्हेल मछली की लचकदार हड्डियों की सहायता से तनाव डालकर स्त्री के ढाँचे को काँच की घड़ी जैसी टेढ़ी शक्ल में बदल देती थी।

आधुनिक दृष्टि से देखा जाय तो मनुष्यों के वस्त्र भी नियमबद्ध और कठोर होते थे। कालर चौड़े और कड़े होते थे। कारबारी आदमी अपने मोटे सूट (तीन बटनवाला कोट और तंग पतलून) के नीचे भी अलग होने वाले कड़े कफ

की और शायद छाती पर कलफ लगी कठोर कमीज़ पहनता था। वेस्ट-कोट पहनना तब अनिवार्य था। यदि वह बैंकवाला या व्यापारी होता तो १५ मई से १५ सितम्बर तक छोड़कर जब कि कड़े तिनकों का (अथवा धनिकों के लिये संभवतः पनामा) टोप पहनना रीति नियमित था, दफ्तर के लिए वह अनुमानतः फ्राक, कोट और डर्बी सूट से छोटी किस्म के बजाय रेशमी टोप पहनता था। घूमने-फिरने के अलावा सुसज्जित पुरुष को बिना टोप के अन्यत्र जाना कल्पनातीत था।

स्त्री-पुरुष के इन कट्टर पहनावों ने नर-नारी के प्रचलित संबंधों का प्रतिनिधित्व किया था। आदर्श स्त्री वह समझी जाती थी जो मलमल से ही नहीं अपितु पवित्रता और सच्चरित्रता से ढकी हुई सुरक्षित श्रीमती होती थी, और आदर्श पुरुष चाहे सदाचार का स्तम्भ या व्यभिचार का पुतला ही क्यों न हो, बड़ी सावधानी से अपने सुपुर्द किये गये सुकोमल प्राणियों के शरीर और मर्यादा की रक्षा करता था। यदि लड़की कुंवारी हुई और कभी सायंकाल के विनोद के लिए उसने बाहर जाने की हिम्मत की तो उसके साथ एक रक्षक अवश्य जाता। श्री जेम्स डब्लू गेराई ने उस समय के उन कठोर नियमों का उल्लेख किया है, जिनसे न्यूयार्क का समाज उस समय शासित होता था। श्री गेराई ने अपने बुढ़ापे में लिखा, तीस वर्ष का हो जाने पर भी यदि मैंने किसी लड़की से अपने साथ अकेले में भोजन करने का आग्रह किया होता तो लात मारकर सीढ़ियों के नीचे गिरा दिया जाता। यदि मैं उसे काकटेल पर आने को कहता तो मैं अपने जंगलीपन के लिए समाज से बहिष्कृत कर दिया जाता।

उस देश में जहाँ २०.४ प्रतिशत स्त्रियाँ अपनी आजीविका के लिए काम पर जाती हों सुरक्षित श्रीमती के इन नियमों का निभाना अवश्य कठिन था। जीवन की इस दुखद यथार्थता ने उन दिनों के नीतिज्ञों को गहरी चिन्ता में डाल दिया था। यदि स्त्रियों की निरंतर बढ़ती हुई संख्या दफ़्तरों में काम करती थी तो समझा जाता था कि वे दुर्भागी आर्थिक स्थिति की शिकार हैं, उनके बेचारे पिता उनका ठीक तरह से पालन-पोषण नहीं कर सकते और आशा की जाती थी कि उनका अभद्र व्यवसायी लोगों के अनिवार्यतः सम्पर्क में आना उनकी पवित्रता को नष्ट नहीं करेगा। छः या आठ डालर प्रति सप्ताह जैसी कम मजदूरी

पर, जो मोटे तौर पर वर्ष १९५० को अठारह से पच्चीस डालर प्रति सप्ताह के बराबर है, दुकानों और फैक्टरियों में लाखों लोगों को उपलब्ध 'सुविधाएँ यदि स्त्रियों को नहीं मिलती थीं तो यह मान लिया जाता था कि वे भयानक प्रलोभनों के वशीभूत हो जायेंगी।

अनगिनत नौकरपेशा लड़कियाँ भी थीं, परन्तु शहरों में वे अधिकतर बाहर से आये हुए कुटुम्ब या अश्वेत जाति की होती थीं और इसलिए ऐसा मान लिया गया था कि उनके भाग्योदय की आशा हो ही नहीं सकती। परन्तु फुरसत की घड़ी स्वल्प होने के कारण वे प्रलोभनों से किसी प्रकार बच जाती थीं।

यदि दुखद परिस्थितियाँ एक 'भले घर की' तरुण स्त्री को आजीविका के लिए काम करने को विवश करतीं तो स्कूल की मास्टरनी, गायन शिक्षिका और शिक्षित नर्स जैसी जीवनवृत्ति उसके लिए स्वीकार योग्य होती थी। यदि वह उपयुक्त प्राकृतिक देन से विभूषित होती तो यह लेखिका, कलाकार या गायिका अथवा नाट्य गायिका हो सकती थी। कुछ तो अपने को समाज से बाहर होने का गम्भीर खतरा मोल लेकर रंगमंच पर चली जाती थीं। क्योंकि उस समय अभिनेत्रियाँ अधिकतर 'पतिता' समझी जाती थीं। कुछ अगुआ होती थीं जो उत्कट उमंग में हर तरह के विरोध के प्रतिकूल डाक्टरी जैसी अन्य जीवन-वृत्तियाँ स्वीकार कर लेती थीं, परन्तु यह असाधारण समाज में होता था जहाँ ऐसा करने के कारण उन्हें अस्त्रियोचित रुचि की औरत नहीं समझा जाता था। और उनके निर्णय के विरुद्ध सबसे जोरदार तर्क यह दिया जाता था कि वह स्वार्थबुद्धि के वशीभूत हो रुपया कमाने के लिए बाहर जाकर अपने पिता को बेमतलब संताप पहुँचाती है। कुछ लोग ऐसा भी सोचते थे कि शायद उसका पिता भरण-पोषण नहीं कर सका। लड़कियों के संबंध में सर्वसम्मत राय यह थी कि वे घर पर रहें और गृहकार्य में अपनी माँ का हाथ बटायें तथा 'उपयुक्त पति' की बाट जोहें।

४

१९०० के अमेरिका को वापस होने पर आपको जगह-जगह छोटे-छोटे नगर तथा कस्बे मिलते। क्योंकि उस वर्ष अमेरिका महादेश की कुल आबादी

५० वर्ष बाद की आबादी से आधी थी — केवल ७ करोड़ ६० लाख — जबकि १९५० में वह १५ करोड़ हो चुकी है। आज जहाँ गाँव बसे हैं और जहाँ के गाँवों ने अब कस्बों का रूप ग्रहण कर लिया है, वहाँ तब आपको खुले मैदान के दर्शन होते। परन्तु स्थिति की असमानता का भान तो हमें नगरों तथा उसके आसपास के इलाकों को ही देखकर हो सकता था।

पश्चिमी हिस्से की थोड़ी जनसंख्या आपको स्मरण करायेगी कि उन दिनों अमेरिका के उद्योग का आकर्षणकेन्द्र तथा अमेरिका की सांस्कृतिक संस्थाएँ पूर्व के हिस्सों में कितनी अधिक थीं और पूर्वी शहरों में भी आधुनिक नागरिक जीवन की बहुत-सी विशेषताएँ आपको नहीं मिलतीं। उदाहरण के लिए, देश में सबसे ऊँची गगनचुम्बी इमारत आईविन्स सिण्डीकेट न्यूयार्क की पार्क रो में थी जो मीनारों सहित २९ मंजिलों की थी तथा जिसकी ऊँचाई ३८२ फुट थी। अभी न्यूयार्क के दर्शकों में 'फेमस स्काईलाइन' पर टिप्पणी करने की जागरूकता आयी थी। दूसरे शहरों में तो दस या बारह मंजिल की इमारत आश्चर्य की वस्तु समझी जाती थी।

गली में बिजली की रोशनी नहीं थी, अमेरिका के किसी भी नगर में झुटपुटा हो जाने पर शहर के लेम्पों को जलाने वाले का अपनी सीढ़ी सहित प्रकट होना सामान्य दृश्य होता था। सीढ़ी को वह बत्ती के खम्भे पर टेक देता और चढ़ कर गलीवाली गैस की बत्ती जला देता। न तो अभी बिजली से रोशन विज्ञापन होते थे और न अभी तक ब्राडवे वास्तव में ग्रेट व्हाईट वे बना था।

शहरों में आम जनता के आने-जाने के लिए पूरा किया हुआ केवल एक उप-मार्ग था। एक छोटा-सा मार्ग बास्टन में भी था; हाँ, १९०० में एक मार्ग के लिए न्यूयार्क में और तैयारी कर ली गयी थी। अधिकतर गाँववासी नगरों को ठेलेगाड़ी में आते जिसके किसी मोड़ पर घूमते समय पहियों की चरमराहट ग्रामीणों को आधुनिक सभ्यता का प्रामाणिक स्वर लगती थी।

हर नगर के बाहर निवास-क्षेत्र होते थे। रेल की पटरी अथवा ट्राली लाइन से उनकी दूरी कोई खास अधिक नहीं होती थी। पैदल ही यहाँ आसानी से पहुँचा जा सकता था। एक या दो परिवार के घरों की लम्बी पंक्तियाँ खाली मैदानों और खेतों के बीच सूनी खड़ी हुई थीं, अधिक सम्पन्न व्यक्तियों के लिए वास के

मैदान से घिरे हुए आरामदेह मकान थे। और बहुत से लोगों ने रेल के सीजनल टिकट ले रखे थे जो रेल का कष्टप्रद सफर कर काम पर आया करते थे। परन्तु ये बाहरी कस्बे आधुनिक मोटर वाहन के युग के कस्बों से बिल्कुल भिन्न थे। स्टेशन पर घोड़े और गाड़ी यदि मिल भी जायें तो भी जब तक कि साईस का खर्च उठाने की सामर्थ्य न हो, तब तक रेल या ठेलेगाड़ी की लाइन से एक या एक से अधिक मील दूर बसना सुविधाजनक न था। हाँ, सबल पाँव वालों के लिए बात और थी। इसलिए नगर के बाहरी भाग छोटे होते थे और उनके पीछे खुला प्रदेश होता था। एक सामान्य जन के लिए यह कल्पनातीत बात थी कि एक पीढ़ी बाद ही खेत और जंगल, जहाँ वह इतवार को टहला करता था, सैकड़ों देहाती झोंपड़ों से भर जायेंगे और उन तक मोटर वाहनों में आसानी से पहुँचा जा सकेगा।

अभी अमेरिका में खेलने के लिए बहुत स्थान था। हज़ारों मील समुद्र का किनारा, सैकड़ों झीलें और नदियाँ, सैकड़ों पहाड़ जिन पर आप जी भर के खोज कर सकते थे। अगर किसी प्रकार आप उन तक पहुँच गये तो बिना किसी की आज्ञा लिए डेरे डाल सकते थे, नहा सकते थे, शिकार खेल सकते थे और मछली पकड़ सकते थे। ऐसे दूरदर्शी लोग भी थे जो समझते थे कि अमेरिकावाले देश पर अपना आधिपत्य जमाने के लिए भूमि को नष्ट कर रहे हैं, जंगल को साफ कर रहे हैं, खेतों का दुरुपयोग और सीमा से अधिक उपयोग कर रहे हैं। प्राकृतिक साधनों को हर तरफ से लूट रहे हैं। वे महसूस करते थे कि इस सम्पत्ति को बचाने के लिए तथा लोगों को खेलने के वास्ते अधिक स्थान देने के लिए सार्वजनिक पार्कों की आवश्यकता होगी। परन्तु बहुत से लोगों के लिए ऐसी चेतावनी का कोई अर्थ न होता था। यदि लकड़हारे ने एक जंगल को नष्ट कर दिया तो क्या हुआ, दिल बहलाने को अन्य जंगल तो मौजूद ही हैं। यदि झोंपड़ा बनानेवालों ने समुद्र का एक तरफ का किनारा खरीद लिया तो क्या हुआ, नहानेवालों के वास्ते खुले हुए और स्थान हैं ही। प्रकृति की सम्पन्नता अनन्त लगती थी। जैसा कि श्री स्टूअर्ट चेज़ ने बहुत साल बाद कहा है कि उस समय प्रचलित प्रवृत्ति "मैड हैटर" जैसी थी, जो अगर एक चाय का प्याला खराब कर देता था तो सीधा दूसरे की तरफ बढ़ जाता था।

उस समय के शहरी बच्चों के लिए किसान, जिनसे देहातों में भेंट होती थी, हर बात में अलहदा जाति थे। हाँ, भाषा अवश्य एक थी। और वे ऐसे क्यों न लगते? न मोटर गाड़ी, न रेडियो, न निःशुल्क गाँवों में डाक बाँटने की व्यवस्था, न बड़ी पत्र-पत्रिकाएँ, न शिक्षा की सुविधा, यदि कहीं थी भी तो केवल प्रारंभिक। शहर जाने का अवसर भी संयोग से मिलता था। वे गाँव के एकाकी-पन में कैद थे। जैसा कि हम पहले कह चुके हैं, उनका वह संसार जिन तत्वों को लेकर चल रहा था, वे अधिक बोधगम्य थे और इस कारण उनके वंशजों को तो उससे कहीं अधिक भयंकर परिस्थितियों का सामना करना पड़ा। वैसे उनकी वह दुनिया बड़ी छोटी थी, इतनी छोटी कि जिस पर सहसा विश्वास नहीं हो सकता था।

५

यदि आप १६०० के अमेरिका की लगातार खोज करते रहें तो उन चीजों का अभाव अथवा कमी पाकर आपको बार-बार आश्चर्य होगा जो आज के युग में सामान्य आवश्यकताएँ मानी जाती हैं।

उदाहरण के लिए बिजली और बिजली के यंत्र को ही लीजिये। वास्तव में धनिकों के बहुत से शहरी मकानों में बिजली नहीं लगी थी, परन्तु जो कोई नया मकान बनाता था वह अभी केवल बिजली की रोशनी लगाना आरम्भ करता था और कहीं बिजली एकाएक न चली जाय इसलिए बाहर गैस भी लगाता था। और बहुतों के मकान (शहरों और कस्बों में) गैस से या (देहात में) तेल की बत्तियों से प्रकाशित किये जाते थे।

इलेक्ट्रिक रिफरीजरेटर (बिजली द्वारा सामान को ठंडे रखनेवाले बक्स) नहीं थे। तब धोने की मशीनों और जमाने के यंत्रों का तो कहना ही क्या। किसान और ग्रीष्म ऋतु में झोंपड़ों में रहनेवाले लोग बर्फ के बुर्ज बना रखते थे जिनमें शीत ऋतु में पड़ोस की नदी या तालाब से निकाली हुई या उत्तर से दक्षिण आनेवाले जहाज द्वारा मंगाई हुई बर्फ की सिलें लकड़ी के बुरादे के अन्दर दबी पड़ी रहती थीं। जब बर्फ की आवश्यकता होती थी, लोग बर्फ के बुर्ज पर चढ़ जाते और एक अच्छा-सा बर्फ का टुकड़ा बुरादा हटाकर

निकाल लेते और विशेष चिमटों द्वारा उसे ले जाकर रसोईघर के बर्फ के बक्स के अन्दर डाल देते थे। यदि आप शहर में रहते होते तो बर्फखाने की गाड़ी दरवाजे पर आती और बर्फ की एक बड़ी सिल आपके बर्फ के बक्स के अन्दर सँभाल कर रख दी जाती।

बहुत वर्ष तक रेलगाड़ियों में रिफरिजरेटर कार्स (बर्फ जैसा ठंडा रखनेवाली गाड़ियाँ) चलती रहीं। परन्तु ताजे फल और सब्जियों का देश-देशांतर का महान राष्ट्रीय व्यवसाय अभी अपनी बाल्यावस्था में था। और तदनुसार १९५० के दर्शक को अमेरिकावालों के तत्कालीन भोजन को देखकर आश्चर्य हुए बिना न रहता। अमेरिका के बहुत से भागों में लोगों को वस्तुतः पतझड़ के बसन्त के बाद तक ताजे फल और हरी सब्जियाँ मिलते न थे। उस काल में वे समोसे, पुए, आलू और गर्म रोटी के रूप में स्टार्च बड़ी मात्रा में खाते थे। आज बहुत कम ऐसे लोग होंगे जो उस प्रकार का भोजन करने का साहस कर सकें।

इस शताब्दी के आरम्भ में यथार्थ में धनिकों के प्रायः तमाम शहरों मकानों में पानी के नल, नहाने की टबें और बहाववाले पाखाने बन गये थे। हालांकि फैशनेबुल गलियों के बहुत अच्छे-अच्छे मकानों में एक से अधिक गुसलखाना न होता था। पर कदाचित कुछ बड़े भूमिपतियों को छोड़कर फैक्टरी में काम करनेवाले और किसान अभी ऐसी विलास की वस्तुओं के उपभोग की कल्पना भी न कर सकते थे। यही क्यों ? शहर के नलों की लाइनों और सीवर लाइनों की पहुँच से दूर रहने वाले सम्पन्न लोगों के सुन्दर मकानों में भी गुसलखाना शायद ही होता था। वे अपने सोने के कमरों में ही घड़े और भगोने में पानी भर कर नहाते थे।

किसी-किसी बड़े होटल में कुछ अधिक दाम देकर आप एकान्त स्नानगृहयुक्त कमरा ले सकते थे, परन्तु १९०७ के पहले तक नहीं ; जब कि श्री एल्सवर्थ एम. स्टेटलर ने पहले पहल १९०७ में ऐसा होटल बनाया जिसमें प्रत्येक अतिथि को कम कीमत पर एकान्त स्नानगृह-युक्त कमरा मिल सकता था।

ढले हुए लोहे की नहाने की टब के युग में १९५० के दर्शक की हैसियत से आप शायद समझ गये होंगे कि आज की तरह वैयक्तिक स्वच्छता जैसी बात उस

समय न थी। और यदि शनिवार की रात्रि में लाखों अमेरिकावासियों को उष्ण जल में केवल साप्ताहिक गोता लगाने का अवसर मिल सकता था तो इसका कारण मुख्यतः यही था कि स्नानगृह इक्के दुक्के ही थे। परन्तु उस समय तम्बाकू खाने की प्रथा थी जो निश्चय ही आपको गन्दी लगेगी। पूर्वी शहरों में सभ्य लोग भरे समाज में थूकने की निन्दा करते थे, हालाँकि संचालक की मेज के पास उगालदान का होना दफ्तर की सुव्यवस्था का प्रमाण माना जाता था। पश्चिमी और दक्षिणी क्षेत्रों में विशेषकर छोटे शहरों और कस्बों में उगालदान हर जगह होते थे और थूकना हर सशक्त पुरुष का सामान्य अधिकार माना जाता था।

१९०० के बाद के वर्षों में कदाचित तम्बाकू के परिवर्तित प्रयोग के कारण ही अमेरिकावासियों का यह प्राचीन रिवाज कम होता गया। १९०० में अमेरिका की जनसंख्या १९५० की जनसंख्या से आधी थी। फिर भी उस वर्ष अमेरिका-वालों ने १९५० की अपेक्षा कुछ अधिक सिगार पिये, बहुत अधिक मात्रा में पाइप का तम्बाकू और उससे अधिक खाने का तम्बाकू इस्तेमाल किया। और पचास साल में जितनी सिगरेट पी गयी उसकी शतांश ही उन लोगों ने उस साल पीं। १९०० में चार अरब सिगरेट अमेरिका में बनाई गयीं जबकि १९४९ में ३८४ अरब सिगरेटें बनीं।'

१९०० में टेलीफोन एक भद्दी चीज थी और उनकी संख्या भी अपेक्षाकृत कम थी। वह विशेषतः व्यावसायिक दफ्तरों में और ऐसे सम्पन्न लोगों के घरों में पाया जाता था जिन्हें नयी मशीनों का परीक्षण करने का शौक था। सन् १९०० में अमेरिका भर में केवल १३,३५,९११ टेलीफोन थे। जब कि १९५० में उनकी संख्या ४,३०,००,००० थी।

सामुहिक प्रचार साधनों 'समाचारपत्रों' की, जो आनेवाले समय में सब श्रेणियों और स्थितियों के लोगों को समान सूचना, विचारधाराओं और समान रुचि की बात बतलाने का महत्त्वपूर्ण काम करनेवाले थे, अमेरिका में बिलकुल कमी थी। रेडियो के आविष्कार में अभी १० वर्ष की देर थी तथा टेलीविजन तो अभी ४५ वर्ष बाद आनेवाला था, वह भी बहुत थोड़े-से श्रोताओं और दर्शकों के लिए। चलचित्र भोंडे होते थे और यदाकदा नृत्यागायन के थियेटरों

में अथवा झाँकीवाले तमाशों के अन्दर देखने में आते थे। परन्तु एक कथानक पर आधारित चलचित्र तो वस्तुतः तीन वर्ष बाद बना ; जिनमें 'ग्रेट ट्रेन रोबरी' की कहानी चित्रित की गयी थी। ऐसी एक भी पत्रिका न थी, जिसकी बिक्री १० लाख से अधिक रही हो।

इसी प्रकार सूचनाओं और विचारों का कोष, जिन्हें सभी प्रदेशों और सब देशों के लोग समान रूप से जानते और मानते हों, बहुत ही सीमित था। किसी सीमा तक मेन का मछुआ, ओहियो का किसान और शिकागो का व्यापारी एक दूसरे से राजनीतिक मामलों पर वादविवाद कर लेते थे परन्तु इस समुद्रतट से उस तट तक निकलनेवाले समाचारपत्रों में सिंडीकेटों के जरिये प्रेषित लेखों के अभाव में उनकी सूचना अधिकतर उनके स्थानीय विभिन्न विचारवाले पत्रों में पढ़े हुए समाचारों पर आधारित होती थीं और रेडियो व न्यूजरील के अभाव में यह बात सन्देहजनक है कि कदाचित शिकागो के व्यापारियों को छोड़कर किसी ने कभी अपने कानों से श्री विलयम जेनिंग्स ब्राबन की मधुर आवाज सुनी हो। १६५० में उस समय पारस्परिक परिचय प्राप्ति का ऐसा कोई सर्वसुलभ साधन न था, जिससे कि वे न केवल हेरी ट्रूमेन बल्कि बोबहोप, बेन जान्सन और बेटी हठन को एकदम पहचान लेते, जो जैक बैनी और रोचेस्टर के साथ हुए संभाषण पर एक ही साथ हँसते और बिंग क्रोसबी को आवाज रेडियो पर सुनते ही पहचान जाते।

विचारों के सामूहिक आदान-प्रदान के साधनों की जितनी कमी थी, उतनी ही कमी बहुत-सी ऐसी सामाजिक संस्थाओं की थी, जिनको आज के अमेरिका वासी अनिवार्य मानते हैं। प्रत्येक व्यक्ति को स्वतन्त्र इकाई के रूप में अपनी व्यवस्था आप करनी चाहिए, इस विचारधारा वाले व्यक्तियों का राष्ट्र पारस्परिक निर्भरता के युग में तेजी से प्रवेश कर रहा था लेकिन फिर भी वह इस तथ्य को पहचानने का प्रयत्न नहीं कर रहा था और इस युग के उपयुक्त संस्थाएँ संगठित करने की ओर उसकी रुचि उतनी न थी। उदाहरण के लिए मध्य पश्चिम के किसी छोटे कस्बे को ही लीजिये। आखिर वहाँ बच्चों के मनोरंजन तथा शिक्षा-दीक्षा के क्या साधन उपलब्ध थे ? परम्परा का तकाजा था कि अपने मनोरंजन के लिए बच्चे प्राचीन दंतकथाओं के वह बच्चों में गोते लगायें, खुले

मैदान में बेजबाल खेलें और पास-पड़ोस के जंगलों तथा नदियों में शिकार करें और मछली मारें। परन्तु इधर उद्योगवाद नदियों को गंदा करता जा रहा था, खुले मैदानों में घर बनने लग गये थे तथा खेती शुरू हो गयी थी! प्राकृतिक क्रीड़ा-स्थान वीरान किये जा रहे थे, और मज़े की बात तो यह थी कि इनके बदले नया साधन नहीं जुटाया जा रहा था।

उस ज़माने में सार्वजनिक पुस्तकालय न थे। हाईस्कूलों में छोटे अर्ध सार्वजनिक पुस्तकालय हुआ करते थे। न कोई वाई. एम. सी. ए. था, न कोई बालचर संस्था थी, न कोई '४ एच' संस्था थी, न कोई स्कूल बैंड, न स्कूल का वाद्यवृन्द था और न ही स्कूल की कोई गायन-सभा थी।

यह अमेरिकावालों के जीवन का स्थायी विशेष गुण मालूम होता है कि उनकी संस्थाओं का विकास उनके वैयक्तिक विकास के साथ नहीं चल पाता। कम से कम यह तो बिल्कुल सत्य बात है कि १६०० के अमेरिका के कस्बे बढ़ते हुए औद्योगिक युग की आवश्यकताओं के अनुरूप अपने को ढालने में असफल रहे।

६

संगठित खेलों के विकास में उसी तरह की शिथिलता थी। सीमा प्रदेश की परम्परा और अमेरिकावालों का पुराना व्यक्तिवाद बाधक बने ही रहे। अधिकतर अमेरिकी लड़कों और पुरुषों के सक्रिय मनोरंजन के सीमित साधन थे — शिकार खेलना, मछली पकड़ना, शिविर लगाना; तैरना, घुड़सवारी करना या चाँदमारी प्रतियोगिता से मनोरंजन प्राप्त करना; जिनके आविर्भाव का श्रेय खुले देहात के वातावरण को है। बेजबॉल बहुत दिनों तक राष्ट्रीय खेल रहा और उस खेल को लाखों लड़कों ने सीख लिया था। परन्तु उनकी गतिविधियाँ अपने ही क्षेत्र तक सीमित रहती थीं। यदि कोई निपुण खिलाड़ी होता तो वह अपने कस्बे की टीम की ओर से पड़ोस के किसी कस्बे की टीम के विरुद्ध खेलने जाया करता। लड़कियों के लिए परम्परागत विचार यह था कि वे निर्बल प्राणी हैं; और कम से कम इस तरह के कठोर परिश्रम के लायक तो वे हैं ही नहीं।

स्कूल और कालिजों में संगठित खेल तेज़ी से उन्नति कर रहे थे; फुटबॉल, बेजबॉल 'जो कि बाद की अपेक्षा तब कालिज का अधिकाधिक गौरवपूर्ण खेल था', नाव खेना, टेक और छोटे पैमाने पर साक्कर तथा लेक्रोस 'हाकी जैसा खेल'

प्रचलित थे। बास्केट बॉल का खेल अभी बहुत ही कम लोगों को मालूम था। १८९२ तक उसका आविष्कार न हो पाया था। ऐसे खेलों में, जिनका बड़ी उम्र वाले लोग भी आनन्द उठा सकते थे, गोल्फ और टेनिस तेजी से लोकप्रियता प्राप्त कर रहे थे; अधिक संख्या में लोग बाउलिंग करते थे और लाखों स्त्री पुरुष मन बहलाव के लिए साइकिलों की सवारी करते थे; परन्तु जब हम उन दिनों के खेलों पर दृष्टिपात करते हैं, एक बात बड़ी विचित्र मालूम होती है और वह यह कि सारे खेल पूर्वी हिस्सों में सर्वाधिक प्रचलित थे। और उन पर अमीरों का ही अधिकार माना जाता था।

उदाहरणार्थ टेनिस को ही ले लीजिये। वह सर्वांशतः पूर्वीय था और नियमतः उसकी सालाना प्रतियोगिता ग्रीष्मकालीन फैशन का केन्द्र न्यूपोर्ट में हुआ करती थी। गोल्फ १८९३ के विश्व मेले के समय तक शिकागो पहुँच चुका था और गोल्फ के क्लब केलिफोर्निया में पहले ही बीस से कम नहीं थे, परन्तु सर्वोत्तम नौसिखिये खिलाड़ी अधिकतर धनिक पुरखिये थे और इस खेल के सभी माहिर लोग प्रायः स्काच थे। नगर के वैभव और फैशन के प्रभाव अछूते अमेरिकन गोल्फ को नितान्त मूर्खतापूर्ण खेल समझते थे। सारे मैदान में एक छोटी-सी सफेद गेंद के पीछे इधर-उधर दौड़ते फिरना भी कोई बुद्धिमानी की बात हुई भला? किसी भी व्यापारी के लिए यह हँसी मात्र की बात थी।

इस बात के पुष्ट प्रमाण हैं कि इस शताब्दी के आरम्भ तक कसरती खेल पूर्व में केन्द्रित थे और साधारण जनता उन्हें फैशन की चमक से घिरा हुआ समझती थी।

बड़े-बड़े स्टेडियमों में टेनिस और गोल्फ चैम्पियनों तथा कालेज की कुशल टीमों के खेल के आयोजन के दिन अभी दूर थे। आज तो स्थिति यह है कि यदि सम्पूर्ण अमेरिका में ११ सबसे अच्छे खिलाड़ियों का चुनाव करना हो तो जनता केवल कुछ ही सर्वश्रेष्ठ खिलाड़ियों को खेलते देख पायेगी। आज तो केलिफोर्निया खेलों के मामले में सबसे आगे है। देश के एक कोने से दूसरे कोने तक हजारों हाई स्कूल की बास्केटबॉल टीमें बन गयी हैं। देश में ऐसे लोगों-पुरुषों और स्त्री दोनों—की संख्या आज करोड़ों से ऊपर पहुँच गयी है जो यदा-कदा शाम को बाउलिंग का आनन्द ले लिया करते हैं।

परिमित वैभव

१६०० के और उसके अर्ध शताब्दी या अधिक बाद के अमेरिकी जीवन के सारे अन्तरों में से अमीर और गरीब के बीच की दूरी, उनकी अपनी जीवन-विधि और समाज में उनके स्थान के बीच की दूरी, संभवतः सबसे अधिक अर्थपूर्ण है। शताब्दी के आरम्भ में धनी और निर्धन के बीच की खाई गहरी थी।

यह अन्तर बतलाने के लिए एक दृष्टान्त सहायक हो सकता है। एंड्र्यू कार्नेगी की आय का मैं पहले ही चर्चा कर चुका हूँ। १६०० में कार्नेगी अपनी इस्पात की बड़ी कम्पनी के साढ़े ५८ प्रतिशत मूलधन के मालिक थे। उस साल कम्पनी को ४ करोड़ डालर का फायदा हुआ। कार्नेगी को उस साल का निजी लाभ आयकरों से मुक्त २ करोड़ ३० लाख डालर से अधिक हुआ। चाहे लाभांश के रूप या अन्य किसी रूप में १८६६ से १६०० तक पाँच साल में उसी आधार पर गणना करने पर उनकी औसत वार्षिक आय १ करोड़ डालर के करीब थी। इन आँकड़ों में ऐसी दूसरी आय सम्मिलित नहीं है जो उन्हें किसी अन्य सम्पत्ति से हुई हो।

जिस समय कार्नेगी कर-मुक्त इस शाही आय को भोग रहे थे, उस समय सारे अमेरिकी मजदूरों की औसत वार्षिक मजदूरी चार या पाँच सौ डालर के लगभग थी, एक अर्थ-शास्त्री ने उसे ४१७ डालर ठहराया है, तो दूसरे ने ५०३ डालर। स्मरण रहे कि ये औसत निकाले हुए आँकड़े हैं न कि उनकी निम्नतम आय।*

*इन अंकों को १६५० की गिनती में पलटने के लिये घटती हुई डालर की कीमत का लिहाज रखना होगा। यह गणना करना कठिन है; क्योंकि यदि आँकड़ा विशेषज्ञ चढ़ी हुई कीमतों की सूची के ठीक अंकों को निकाल भी लें, तो भी ऐसी भिन्न रीतियों से तब धन व्यय किया जाता था और नाम से एक-सा माल यथार्थ में इतना भिन्न था कि कोई भी सूचकांक सन्देहयुक्त है। सुविधा के लिए मैं इस पुस्तक में १६०० के डालर को १६५० के डालर से तीन गुणा अधिक

संक्षेप में एन्ड्रयू कार्नेगी की वार्षिक आय औसत दर्जे के अमेरिकी मजदूर की आय से कम से कम बीस हज़ार गुनी अधिक थी।

बुनियादी अन्तर आपको यहीं मिलता है। एंड्रयू कार्नेगी अपने समय के अत्यधिक धनवानों में से तो थे परन्तु अन्य बहुत-सों की आय भी लाखों डालर की थी जो उनके जीवन के ढंग से प्रकट था। आइये, इस पर एक दृष्टि डालें।

पहले तो, उन्होंने महलों के समान बड़े-बड़े मकान बनवाये। उन्नीसवीं शताब्दी के आखिरी बीस वर्षों में बहुत-से अमेरिकी लखपतियों ने निर्णय किया था कि अमीरों के करने योग्य सबसे बड़ी बात अपने लिए राजसी भवन बनाना है। वेन्डरबिल्ट परिवार ने उनका पथ प्रदर्शन किया। १८८०—८६ के मध्य तक फिफ्थ एवेन्यू के पश्चिमी भाग के सात खंडों में वेन्डरबिल्ट के सात बड़े भवन खड़े हो गये थे।

विलियम के लिए श्री रिचार्ड मारिस हन्ट ने चूने के पत्थर के महल की रूपरेखा तैयार की जो ब्लाइ के शेजू 'देहात का मकान' की और इससे भी अधिक पन्द्रहवीं शताब्दी के श्री जेके कोर के बोरजेस स्थित फ्रांसीसी भवन की याद दिलाता था। कार्नेलियस के लिए जार्ज बी. पोस्ट ने ईंट और पत्थर का शेटू तैयार किया। उसने भी लोगों को ब्लाइ का स्मरण कराया। दोनों ही शानदार इमारतें थीं और फिफ्थ एवेन्यू की शोभा बढ़ा रही थीं, परन्तु उनका विदेशीपन लुइ सलीवान शिल्पकार के विनोद का कारण बना। सलीवान का

मूल्य का मानूंगा जो कि कम से कम यथार्थता के निकट है। इस हिसाब से १६०० की मज़दूरी, उसकी १६५० की क्रयशक्ति को देखते हुए और १६५० की मज़दूरी का अनुपात १,२०० और १,५०० डालर के आस-पास था। यह ४०० और ५०० डालर के अनुपात की अपेक्षा बहुत कम विद्रूप मालूम पड़ता है।

परन्तु यदि हम इस तरह से मज़दूर की मजदूरी की गणना करते हैं तो उसी तरह हमको एंड्रयू कार्नेगी की आय की गणना भी करनी चाहिये। तो हम देखेंगे कि १६५० में डालर की क्रयशक्ति को देखते हुए उनकी १६०० की कर मुक्त आय ६ करोड़ डालर से अधिक हुई और १८६६ से १६०० तक के पाँच साल में प्रति वर्ष उनकी आय ३ करोड़ डालर से अधिक थी।

का विचार था कि मकानों को उनमें रहनेवाले लोगों की जिन्दगी से मेल खाना चाहिए। सलीवान ने अपने किन्डरगार्टन चैट्स में लिखा है "क्यों, मैं आपको यह फ्रेन्च शेट्ट — यह छोटा शेट्-ट-ब्लाय यहाँ न्यू यार्क में इस गली के मोड़ पर दिखाऊँ और फिर भी आपको हँसी न आवे। रेशमी टोप पहने किसी भद्र पुरुष को इनमें से निकलते देखकर ही आप हँसेंगे? क्या आपके पास कुछ भी सरसता नहीं या संवेदनशीलता का बिलकुल अभाव है? क्या मैं आपको बतलाऊँ कि इन मकानों में आदमी शरीर से भले ही रह ले........उसमें सम्भवत: उसकी नैतिकता, उसका मस्तिष्क या आध्यात्म नहीं रह सकता। वह और मकान असत्याभास, विरोधाभास असम्भव बातें हैं?"

उस समय सारे शेट्ट हिमायती कैरोलाइना के उत्तर में ऐशविल पर बना हुआ जार्ज डब्ल्यू वेन्डरबिल्ट का नवाबी महल था जिसको वे बिल्टमोर कहते थे।

लोएर के बड़े महलों की तर्ज का हन्ट द्वारा बनाया गया बिल्टमोर भी फ्रांसीसी भवन था। उसमें चालीस उत्तम शयन कक्ष, ताड़ों का दालान, बलूत की लकड़ी की बैठक, भोजन-कक्ष, फोटो बनाने का कमरा, कालीनों से ढकी चित्रशाला और ढाई लाख किताबों का एक पुस्तकालय था। वह चारों ओर बड़े बाग और उद्यानों से घिरा था जिसमें वेन्डरबिल्ट वैज्ञानिक खेती और वन-विकास पर प्रयोग किया करते थे। इसका विस्तार धीरे-धीरे २०३ वर्ग मील तक बढ़ गया। वेन्डरबिल्ट ने अपने जंगलात की देखभाल के लिए गिफर्ड पिंचट नामक नौजवान को रख लिया था जिसकी कृति "अमेरिका में बड़े पैमाने पर जंगल के प्रबंध का प्रथम व्यावहारिक प्रदर्शन" का वन-सम्बन्धी प्रामाणिक ग्रंथ की संज्ञा दी जाती है।

वेन्डरबिल्ट के खेतो और जंगलात के परीक्षात्मक कार्य की पाल मार्टन ने भी प्रशंसा की है, हालाँकि उसमें ईर्ष्या की झलक मिलती है। मार्टन १८९०-९१ के मध्य अमेरिका के कृषि-विभाग के सचिव थे। उन्होंने लिखा, "इस मद में व्यय के लिए कांग्रेस जितना धन स्वीकृत करती है उससे अधिक यह 'वेन्डरबिल्ट' व्यय कर रहे हैं।"

और बड़े विलाज 'उद्यानों से घिरे बंगले' और शेट्ट निर्माण करने में विन्डर-बिल्ट ही अकेले न थे। न्यूपोर्ट में गोलेट, बेलमान्ट और बेरविन्ड भवन, पाम

बीच पर फ्लेगलर भवन, न्यूजर्सी में लेक्वुड पर गाउल्ड, फिलेडेलफिया के समीप वाइडनर भवन, पिट्सबर्ग में फिप्स भवन........आदि प्रभावशाली भवनों में से केवल थोड़े से हैं, जिनमें १६०० के युग के करोड़पति राजसी जीवन व्यतीत करने का प्रयास करते रहे।

फ्रान्सीसी उपन्यासकार पाल. बारगे ने उनकी सजावट में प्रतिबंध व संयम की कमी पाई। न्यूपोर्ट के निरीक्षण के बाद बारगे ने टीका की — "हाल के फर्श पर, जो कि बहुत ज्यादा ऊँची है, फारस और पूर्व के बहुमूल्य कालीन अधिक संख्या में बिछे हैं। अत्यधिक चित्रित पर्दे, और ड्राइंग रूम की दीवारों पर हद से ज्यादा चित्र लगे हुए हैं। अतिथि गृहों में अधिकाधिक अद्भुत कलात्मक चीजें, बहुत ज्यादा दुर्लभ सामान 'लकड़ी का' और लंच व डिनर की मेज पर बेशुमार फूल, अनगिनत गुलदस्ते, असंख्य काँच के और चाँदी के बर्तन हैं।"

किसी को भी हेरी डब्लू डेसमांड और हरबर्ट क्राली की पुस्तक, "स्टेटली होम्स इन अमेरिका" की यह टिप्पणी याद हो आती है : यूरोपीय महल और शेटू, जिनकी नकल लखपतियों के शिल्पकारों ने की थी किरायेदारों और शरीफ खानदान के अनुगामियों से भरे हुए होते थे। जो लोग उस प्रदेश के भाग्य-विधाता थे उनके मकान न केवल निजी मकान ही थे, बल्कि सार्वजनिक भी। और सार्वजनिक इमारतों की हैसियत से उनकी विशालता ठीक भी हो सकती थी। पर किसानों से विहीन देश में वे महल असंगत थे।

कुछ लखपतियों ने ऐश्वर्यशाली महलों के मोह पर विजय प्राप्त कर ली थी। उदाहरण के लिए जे. पियरपोन्ट मोर्गन को ही लीजिये। यद्यपि वे यथार्थ में राजसी जीवन व्यतीत करते थे, पुस्तकालय के सिवाय जो उन्होंने शताब्दी के अंत में अपनी दुर्लभ पुस्तकें और उत्तम ग्रन्थों के असाधारण संग्रह के कुछ भाग को रखने के लिए बनाया था तथापि पत्थर के वैभव की अपेक्षा माननीय सुख अधिक पसन्द करते थे। मोर्गन का न्यूयार्क में २६१, मेडीसन एवेन्यू पर बना हुआ मकान श्रेष्ठता की अपेक्षा सुविधाजनक अधिक था। कोई भी उसे एक दर्जन या कुछ अधिक नौकरों की सहायता से सँभाल सकता था। हाईलेन्ड फाल्स पर उनका देहाती मकान बड़ा था, परन्तु उसमें आडम्बर न था। आज की बहुत-सी अमेरिकी देहाती क्लबें उससे कहीं बड़ी हैं। उनका लन्दन स्थित दुमंजिला

मकान महल जैसा नहीं लगता था, यद्यपि उसमें ऐसे चित्रों का संग्रह रखा था, जिसको देखकर डेनिश, फ्रान्सीसी, स्पेनिश और अंग्रेज कला-समालोचक भौंचक्के रह जाते थे। उनका लन्दन के बाहर भी एक बड़ा मकान था, एडिरनडेक्स में एक हज़ार एकड़ का टुकड़ा था, जार्जिया के किनारे जेकिल आईलैंड क्लब में निजी कमरा था, न्यूपोर्ट में "छोटा देहाती मकान" अस्थायी उपयोग के लिए पेरिस के ब्रिस्टल होटल में और रोम के ग्रान्ड होटल में विशेष कमरे थे जो जब वे चाहें तब उनके उपयोग के लिए अलहदा छोड़ दिये जाते थे, और इन सबके अलावा कारसेर ३ नाम की ३०२ फुट लम्बी अग्निबोट थी जो या तो अटलान्टिक महासागर के किनारे या भूमध्य सागर के एक ओर निवासस्थान का काम देती थी। मिस्र में सैर सपाटे के लिए आदेशानुसार बना हुआ उनका नील नदी में भाप से चलनेवाला निजी जहाज भी था। मोर्गन को कंजूस नहीं ठह-राया जा सकता था। कारसेर ३ के लिए ठीक कारसेर २ जैसे गलीचों की जरूरत पड़ने पर और यह मालूम होने पर कि वे अब नहीं बनाये जाते, उन्होंने पुराने नमूनों को ही करघे पर लगवा दिया था, जिससे कि उनकी आज्ञानुसार बनाये गये गलीचे शक्ल में बिलकुल एक से हों।

न्यूयार्क में टेरीटाउन के निकट पुकेंटिको हिल्स पर अवस्थित घर में महल जैसी कोई खास बात न थी। जान डी. राकफेलर साल में अधिकतर समय इसी में निवास करते थे। राकफेलर आडम्बर और शान शौकत की चिन्ता नहीं करते थे, उनकी अभिरुचि शान-शौकत की अपेक्षा सादगी में अधिक थी और १८९०-९१ के मध्य में सक्रिय व्यवसाय से उनके अवकाश ग्रहण करने पर स्वास्थ्य अच्छा न रहने से उन्हें और भी असुविधा हुई।

राकफेलर का मकान महल तो न था तब भी वह उनकी पचहत्तर इमारतों में से एक था। यद्यपि वे स्वयं एक ही मोटरगाड़ी को पन्द्रह वर्ष तक इस्ते-माल करते रहे, तो भी उन्होंने इतना बड़ा गैरेज बनवा रखा था जिसमें एक साथ पचास मोटर गाड़ियाँ रखी जा सकती थीं। उनकी भूमि पर सत्तर मील तक गोल्फ खेलने का अपना मैदान था, जिसमें वे अपना सुबह का खेल खेल सकते थे और मौसम के अनुसार वहाँ एक हजार से पन्द्रह सौ तक कर्मचारियों

राकफेलर की कुछ जायदाद लेकवुड पर भी थी जिसमें वे बसन्त ऋतु में रहते थे, कुछ जायदाद फ्लोरिडा में आरमन्ड बीच पर जाड़े में उपयोग के लिए थी, न्यूयार्क में चौवन नम्बर वाली गली में उनका एक मकान था, क्लीवलेन्ड में फारेस्ट हिल पर उनकी अचल सम्पत्ति थी जिसका उन्होंने निरीक्षण भी नहीं किया था और इसी प्रकार क्लीवलेन्ड में यूकलिड एवेन्यू में एक मकान का उपयोग उन्होंने कभी नहीं किया था। शायद ही किसी अन्य व्यक्ति ने इतने बड़े पैमाने पर इससे अधिक किफायतशारी की जिन्दगी बसर की होगी।

२

लेकिन अगर राकफेलर किफायतशारी से रहे, तो ऐसे लोग भी थे, जिन्होंने किफायतशारी की ही नहीं। १८६० में पाल बारगे ने न्यूपोर्ट के जीवन के विभिन्न पहलुओं पर अनुकूल टीका की थी। अधिकतर लोगों का स्वास्थ्य अच्छा दिखायी देता था। तब का समाज दुराचारी या भ्रष्टाचारी न था, उसके सदाचार और शिष्टाचार के अपने नैतिक मानदंड थे।

न्यूपोर्टवालों की तन्दुरुस्ती का खाका समझाने के लिए एम. बारगे ने वहाँ की नौजवान लड़की की जिन्दगी के औसत दिन का वर्णन किया था। नौ बजे से पहले वह घोड़े पर चढ़ कर बाहर चली जाती, घुड़सवारी से आकर ठीक समय पर कपड़े बदल कर केसिनों में टेनिस का दंगल देखने जाती, फिर उसकी गाड़ी उसे नौका विहार के लिए ले जाती। दोपहर का भोजन प्रायः नाव पर ही होता, साढ़े चार बजे के करीब वह नाव छोड़ कर पोलो का मैच देखने जाती। इसके बाद वह घर आकर स्नान करती और डिनर के लिए कपड़े बदलती। डिनर प्रायः साढ़े दस बजे खत्म हो जाता था क्योंकि खुली हवा में बाहर रहनेवालों के लिए अधिक जागना कठिन था। इसके बाद वह यदाकदा नृत्य के लिए भी चल देती। स्पष्ट है कि पाल बारगे स्वयं कभी नाच में शामिल न हुए थे ; अगर उन्होंने देखा होता तो यह अनुमान लगाना गलत न होता कि इस तीक्ष्ण प्रेक्षक को न्यूपोर्ट के इस विशाल आमोद प्रमोद में संयम की वही कमी मिलती जो उन्हें मकानों की सजावट में मिली थी। क्योंकि प्रायः वे आँख के

अन्धे और गाँठ के पूरे होते थे और उनकी एक ही धुन थी कि कौन अधिक से अधिक पैसा लुटा सकता है।

रन्डोल्फ गगेनहीमर ने ११ फरवरी, १८९९ को प्राचीन वालडोर्फ एस्टोरिया में चालीस श्रीमतियों और श्रीमानों के लिए जो भोज दिया था, उसमें उन्होंने सारी सामग्री प्रस्तुत करने का प्रयास किया था। वालडोर्फ का मरटिल रूम गुलाबों, साम्बुलों, खिले हुए गुलेलालों और सरो की झाड़ियों से उद्यान में परिवर्तित हो गया था। उसमें बुलबुल, कोयल और केनेरी चिड़ियाँ रह कर गा उठतीं। (कुछ चाल-सी चल कर इस अवसर के लिए कुछ बुलबुल देने को चिड़ियाघर के अधिकारियों को राजी कर लिया गया था)। पैर तले हरी घास और सिर के ऊपर अंगूर की बेल चढ़े हुए कुञ्ज में मेज लगाई गई थी। छिले हुए और पालिस किए हुये नारियलों पर सुनहरे अक्षरों में भोजन की सूची अंकित थी, स्त्रियों के लिये पंखे थे, जिन पर शराब की सूची दी हुई थी। अनुग्रह के तौर पर श्रीमतियों के लिए सुन्दर मोटे अक्षरों में लिखी हुई सूँघने की डिबियाँ थीं और श्रीमानों के लिये जड़ी हुई दियासलाई की डिबियाँ थीं। संगीत के लिए देशी लिबास में छः नेपोलिटन बुलाये गये थे जो सितार के तार छेड़ रहे थे। खाद्य पदार्थ सोने की तश्तरियों में परोसे गये थे। और उस एक शाम के प्रीतिभोज में कितना खर्च हुआ ? दस हजार डालर — २५० डालर प्रति व्यक्ति। फिर यह तो १८९९ का डालर था। आज के हिसाब से वह खर्च प्रति व्यक्ति ७५० डालर हुआ।

३

इंग्लैण्ड या फ्रान्स के यात्री अपने देशवासियों से कहेंगे कि अमेरिका में समाज लन्दन या पेरिस जैसे किसी एक शहर में केन्द्रित नहीं था, बल्कि प्रत्येक बड़े शहर का अपना समाज होता था। तब भी न्यू यार्क का समाज सर्वप्रधान था। वार्ड मेक अलिस्टर ने १८९२ में जब यह कहा कि यद्यपि श्रीमती आस्टर के नृत्य-गृह में केवल चार सौ ही आदमी आ सकते हैं, तो भी वह काफी बड़ा है क्योंकि समाज में केवल चार सौ आदमी ही तो हैं, तो उनकी बड़ी खिल्ली उड़ी परन्तु ऐसे लोग भी थे जो यह समझते थे कि मेक अलिस्टर देश की एक

अति उत्कृष्ट सभा का परिचय करा रहे हैं।

कुछ वर्ष पहले हेनरी क्ल्यूज ने मेनहट्टन के जीवन के आकर्षणों का वर्णन करते हुए लिखा था, "न्यू यार्क लोकतंत्र का यथार्थ में बड़ा सामाजिक केन्द्र है.... यहाँ पर अनुपम फैशन की चमक है, अनन्त सुन्दर वाहनों का ताँता है और है सेन्ट्रल पार्क जिसे अमेरिका का ब्वाय-द-बोलोन कहना चाहिए।" क्ल्यूज ने जोर देकर कहा था कि यह जीवन प्रणाली ऐसी है कि इससे पश्चिमी लखपतियों की पत्नियों को अपने आपको न्यू यार्क वासी बनाने में अधिक समय नहीं लगता। और उसके बाद रह ही क्या जाता है? भूरे पत्थर का भवन खरीदिये और स्वागत-समारोह एवं नृत्यों का आयोजन कीजिये, शानदार गाड़ी रखिये, कोचवानों को चमकीले बटनवाली पोशाक से सजा दीजिये, ऊँचे बूट पहने हुए अनुचर रखिये, खानसाना और दास-दासियाँ रखिये। क्ल्यूज के इस उत्साह में परिहास की झलक भले ही हो, परन्तु उन्होंने तत्कालीन समाज के एक स्वीकृत तथ्य का वर्णन किया है। एक ओर तो समाज के प्रतिष्ठित पुरुष थे, जो नवागंतुकों के प्रवेश को रोकने के लिए प्रयत्नशील थे, दूसरी ओर नये धनिक थे जो अपरिमित व्यय से, परन्तु सावधानी के साथ, भोज देकर समाज में मान्यता प्राप्त करने की जी-तोड़ कोशिश कर रहे थे, और अनगिनत स्त्रियाँ ऐसी थीं जिनको यदि श्रीमती आस्टर के बड़े भोजों में से किसी एक का भी निमंत्रण मिल जाता तो समझतीं कि उन्हें स्वर्ग का टिकट मिल गया है।

देश के अन्य शहरों में भी इसी तरह के नाटक खेले जा रहे थे। समाज के मान्य पुरुषों की गोष्ठी में प्रवेश पाने के लिए लोग लालायित थे, चाहे वह सभा हो, नाच-गायन का आयोजन हो, सीने-पिरोने वालों की मंडली हो, किसी स्थानीय परिषद की बैठक हो, अथवा किसी ऊँचे परिवार में नृत्य का वार्षिक महोत्सव हो। कुछ परिवर्तित रूप में ऐसा आज भी होता है, अन्तर यही है कि अपेक्षाकृत लोग आज सामाजिक पदों से संबंधित नाटकों पर गंभीरता से विचार करते हैं। और समाचारपत्रों के फोटोग्राफरों, लेखकों, टेलीविजन के श्रोताओं और विज्ञापन के भूखे उपाहार-गृहों के मालिकों तथा खेल-तमाशा करने वालों की पसन्द और तरजीह के कारण यह स्थिति और भी उलझ गयी है। १६०० का समाज यथार्थ में एक समाज था। समाचारपत्रों की सावधानी से उसे नफ-

रत थी, सार्वजनिक मनोरंजन के कार्यक्रम उसे पसंद न थे। ऐसे पिता भी थे जो पुत्रों से कहा करते थे, "शरीफ आदमी का नाम अखबारों में केवल तीन दफा प्रगट होता है, जब वह पैदा होता है, जब वह शादी करता है, और जब वह मरता है।" तत्कालीन समाज का दावा था कि अमेरिकी जीवन में जो कुछ सम्भ्रांत, सुन्दर और अति महत्त्वपूर्ण है, वह उनका प्रतिनिधित्व करता है।

इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि अमेरिकी उत्तराधिकारियों और विदेशी कुलीन लोगों में अन्तर्राष्ट्रीय विवाह उन दिनों इतने प्रचलित क्यों थे? इस तरह का प्रथम महत्त्वपूर्ण विवाह १८७०-७९ के इर्द-गिर्द जेनी जेरम और लार्ड रन्डोल्फ चर्चिल का हुआ था। (इस संबंध ने बाद में एक महान पुरुष विन्स्टन चर्चिल को पैदा किया)। १८९०-९९ तक ऐसे विवाह संबंध महा-मारी बन गये थे। मेक्काल्स पत्रिका के नवम्बर १९०३ के अंक में ऐसे ५७ विवाहों की सूची थी।

४

इस समृद्धि की चरम सीमा के कुछ नीचे लाखों अमेरिकी ऐसे थे जिनकी गणना भी धनिक समृद्धशाली और सम्पन्न लोगों में की जा सकती थी। इनमें सामान्य सफल व्यापारियों, निर्माताओं, उच्च पेशेवर लोगों से लेकर छोटे-छोटे व्यापारिक कर्मचारी, दुकानदार, मिस के वकीलों, डाक्टरों, उच्च वेतनभोगी प्राध्यापकों और मंत्रियों के परिवार थे। स्वभावतः इस तरह मिश्रित और अस्पष्ट समुदाय के बारे में समान रूप से कुछ कह देना ठीक नहीं, जिसमें पेशे, आय, और जीवन के ढंगों में कभी इतना बड़ा अन्तर था। इन सारी विभिन्नताओं के वावजूद इस समुदाय के बहुत से सदस्यों की — जिनको हम उच्च मध्यम वर्ग में रख सकते हैं — एक बात सामान्य प्रतीत होती है। यद्यपि उनमें से बहुतों को बड़ी आर्थिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था, तथापि उनकी सामान्य दशा आज के उसी श्रेणी के लोगों की अपेक्षा अधिक अच्छी थी।

उस समय इमारत बनाने के काम में लगे मजदूरों की मजदूरी इमारती सामान की कीमतें, आज की अपेक्षा बहुत कम थीं। इसलिए वे अधिक बड़े क्वार्टरों में रह सकते थे। नौकरों का वेतन बहुत कम था और नौकरी के

उम्मीदवारों की संख्या अधिक थी। वे अपने क्वार्टरों में बहुत सारे नौकर-चाकर रख सकते थे। उनके अतिरिक्त उनके वे खर्च बच जाते थे जिनको उनकी संतति आज बिलकुल स्वाभाविक खर्च मानती है, जैसे मोटरगाड़ी का खर्च, (घोड़ेगाड़ी की अपेक्षा अधिक ज्यादा), बिजली के रिफ्रीजरेटर, धोने की मशीनें, रेडियो, टेलिविज़न सेट और इसी प्रकार के अन्य कई खर्च उस समय न थे। उस समय लड़के और लड़कियाँ दोनों को कालिज भेजने का खर्च न था। और न संभवतः रविवार और गर्मियों के लिए फालतू घर की ही जरूरत पड़ती थी। इस कारण वे लोग तब ऐसे मकानों में रह सकते थे जो आज बड़ा विशाल लगेगा। हालांकि उन्हें आज जो वेतन मिलता है, उससे वे एक तंग कमरा ही प्राप्त कर सकते हैं।

बड़ी उम्र के लोग आज जब अपने बचपन का स्मरण करते हैं तो उनको कभी-कभी मोह सताने लगता है। जीवन तब अधिक सादा था, उनकी आवश्यकताएँ भी कुछ कम थीं और कुछ सुविधाएँ तो उन्हें उस जमाने में अधिक सरलता से प्राप्त होती थीं। वे अनुभव करते हैं कि अब की अपेक्षा तब कुटुम्ब के प्रति अपनत्व का सिद्धान्त पालन करना आसान था। जो लोग बड़े घरों में रहते हैं, वे वृद्ध या निर्बल या असफल रिश्तेदारों की परवरिश करने में उनकी अपेक्षा अधिक समर्थ हैं जो छोटे मकानों में जिन्दगी बसर करते हैं। आज की सामाजिक सुरक्षा की समस्याएँ, पेंशन की आवश्यकता, चिकित्सा का बीमा, बेरोजगारी का बीमा इत्यादि वस्तुतः पैदा ही इस कारण हुई हैं कि बहुत-से कुटुम्ब अब उन लोगों की परवरिश करने में असमर्थ हैं, जिनको वे पहले अपने आश्रित समझते थे। उदाहरणार्थ दादी को लीजिए। घर की तीसरी मंजिल उसके लिए सुरक्षित थी, या सनकी चचेरा भाई टाम, जिसको दूर भेज दिया गया था (यथार्थतः हमारी आज की समस्याओं का कुछ अंश हमारी बचत पर मुद्रास्फीत के प्रभाव के कारण पैदा हुआ है। यही नहीं, वह अधिकांशतः परिवर्तित सामाजिक सिद्धांतों की उपज है जिसकी रूपरेखा इस पुस्तक में खींचने का प्रयत्न किया जा रहा है। आधुनिक युग की कई सुविधाएँ १६०० में बड़े लोगों को भी उपलब्ध नहीं थीं। फिर भी हमें मानना पड़ेगा कि उनकी व्यथा बिलकुल निराधार नहीं है। उस समय उन्हें जितना स्थान उपलब्ध था

और जितनी सस्ती सेवाएँ उन्हें प्राप्त थीं उनको स्मरण कर उनका परिताप और बढ़ जाता है।)

फिर भी एक बात हमें अवश्य याद रखनी चाहिए। बड़े घर में उनका यह ऐश्वर्यशाली जीवन उन दासियों के कारण संभव हुआ था, जिनकी मजदूरी बिलकुल कम थी और जो उनके ही विशाल मकान के काफी ऊपर एक तंग कोठरी में अपने दिन काटती थीं। और काम भी ऐसी कि जो खत्म होने का कभी नाम न ले। उधर कपड़े सीने और पोशाक बनाने वाले कारखानों के मजदूर तथा गोदाम संचालक थे, जो स्वल्प मजदूरी लेकर उनके व्यवहार में आने वाली सामग्री तैयार करते थे। यही नहीं, डेढ़ हजार डालर की आयवाले परिवारों को भी जितना स्थान और सेवाएँ प्राप्त थीं, उसके लिए उन्हें बहुत थोड़ा खर्च करना पड़ता था। लेकिन इस चित्र का दूसरा पहलू भी है।

इस आर्थिक और सामाजिक दृश्य के दूसरे छोर पर भी दृष्टिपात करें। अब हम १९०० के बहुसंख्यक अमेरिकावासियों के जीवन की झाँकी लें।

उपयुक्त जीवन यापन प्रणाली का अभाव

इंग्लैंड में कारखाना-प्रणाली के आरंभ में डेविड रिकार्डो ने एक अति निष्ठुर सिद्धांत का प्रतिपादन किया था। उसे वह "मजदूरी का लौह कानून" कहा करते थे। सिद्धांत यह था कि सभी प्रकार की मजदूरी स्वमेव गिरकर उस स्तर पर आ जाती है, जो अधिकतर अनिपुण अथवा अधिकतर निराश लोगों को स्वीकार होती है। प्रागौद्योगिक काल में इस नियम पर अमल निर्बाधरूप से न हो पाता था। जो लोग अयोग्यता, या बीमारी अथवा विपत्ति आ पड़ने के कारण तंगदस्त हो जाते थे, उनकी सहायता राजा, ताल्लुकेदार, समाज के प्रतिष्ठित लोग अथवा पड़ोसी कर दिया करते थे। और औद्योगिक युग के आगमन से पूर्व अमेरिका में जो पुरुष और स्त्री आर्थिक संकट में पड़ जाते थे।

उनकी यह स्थिति चाहे फसल मारी जाने, या व्यापार चौपट होने या पारिवारिक अन्न भंडार समाप्त हो जाने के कारण हुई हो — वे बची-खुची सम्पदा का सहारा लेकर अपना काम चलाते रहते। और यदि ऐसा भी न हो पाता, तो कहीं अन्यत्र जाकर अपना भाग्य आजमाते। परन्तु औद्योगिक युग के आगमन से अमेरिका और युरोप दोनों की परिस्थितियाँ बदल गयीं।

जब कोई व्यक्ति मिल या कारखाना खोलता तो उसके पास मज़दूरों का छोटा-सा गाँव अथवा कस्बा बस जाता। और जो लोग उस मिल अथवा कारखाने में काम करने आते, वे स्वेच्छा से ही उस गाँव या कस्बे के कैदी बन जाते। मालिक चाहे जिस काम पर उन्हें लगा देता, काम चुनने की सुविधा उन्हें न थी। और यदि मज़दूरी वास्तव में बहुत कम हुई, तो भी वे काम की तलाश में अन्यत्र जाने का कष्ट न कर सकते थे। व्यक्ति की स्वतंत्रता के तत्व ही नष्ट हो जाते थे।

इसी प्रकार शहर की गंदी बस्तियों में बाहर से आने वाले पुरुषों और स्त्रियों का ताँता लगा रहता था। उनके पास प्रायः फूटी कौड़ी भी न होती। वे भोले, अनिपुण होते और बहुतों के तो कोई मित्र भी न होता, और वहाँ की स्थानीय भाषा का उन्हें प्रायः कोई ज्ञान नहीं होता। ऐसे लोग स्वमेव परिस्थितियों के बंदी बन जाते। जहाँ तक सिद्धांत का सवाल है, सभी प्रकार के व्यवसायों के द्वार उन के लिए खुले थे ; सिद्धांतः वे किसी एक मालिक पर निर्भर रहने को बाध्य न थे। परन्तु व्यवहार में गरीबी, सीमित योग्यता और अज्ञान के कारण उनमें से अधिकतर लोग उसी एक स्थान पर वर्षों रहकर जीविकोपार्जन करने के अवसर की प्रतीक्षा करने को बाध्य थे। जो कुछ थोड़ी बहुत मज़दूरी उन्हें मिलती, उसे उन्हें स्वीकार करना ही पड़ता था। यहाँ भी उसी "लौह कानून" का बोलबाला था।

१९वीं शताब्दी के मध्य के वर्षों में इस "लौह कानून" ने अमेरिका में वैसी दुःखद परिस्थितियाँ पैदा नहीं की थीं, जैसी कि इंग्लैंड में हुई। उस समय इंग्लैंड में जो मज़दूरी दी जाती थी, जितना काम लिया जाता था और नये औद्योगिक नगरों तथा खान क्षेत्रों में सफाई की जो व्यवस्था थी, वह औचित्य की निम्नतम सीमा से भी नीचे थी। तथापि अमेरिका में जो स्थिति

थी, वह भी बहुत बुरी थी। १९वीं सदी के द्वितीय चतुर्थांश में न्यू इंग्लैंड के औद्योगिक कस्बों में मजदूरी की दर गिर गयी थी और १८५० तक तो यह हाल हो गया था कि ३ या ४ डालर प्रति व्यक्ति की साप्ताहिक मजदूरी पर पूरे का पूरा परिवार मशीनों पर खटता रहता। दिन में १२ घंटे काम लेना तो सामान्य था। कहीं-कहीं तो दिन में १४ घंटे तक काम लिया जाता था। और ऐसा तब होता था, जब कि मालिकों को अंधाधुन्ध मुनाफा हो रहा था। जहाँ कहीं भी पूंजीवाद प्रगति की ओर कदम बढ़ा रहा था, वहाँ यह दशा देखने को मिलती। और इसी ने किसी नवीन पद्धति का आविष्कार करने की प्रेरणा कार्ल मार्क्स को दी।

१९वीं सदी के उत्तरार्ध में अमेरिका में उद्योगवाद बहुत आगे बढ़ चुका था। इस प्रगति को अनेक आविष्कारों और यांत्रिक सुधारों से बहुत प्रश्रय मिला। १९०० तक जहाँ केवल किसान और गाँव देखने में आते थे, वहाँ बड़े-बड़े नगर और औद्योगिक कस्बे बस गये थे। और आराम, सुविधाओं और धन का कोई ठिकाना न था। ऐसा लगता था मानो लोगों के काम करने और खेलने के लिए एक नये संसार की रचना कर दी गयी है। फिर भी धन कुछ ही लोगों की जेब में एकत्र होता जा रहा था।

हो यह रहा था कि अमेरिका की अच्छी जमीन भरती जा रही थी। प्रायः ऐसी परम्परा चल पड़ी थी कि जिन अमेरिकी मजदूरों की स्थिति असह्य हो जाती, वे पश्चिम की तरफ़ बढ़ जाते, बशर्ते कि उनकी जेबों में पैसे हों। पश्चिम न केवल साहसी पुरुषों के लिए, बल्कि उद्योगवाद द्वारा तिरस्कृत लोगों के लिए भी आशा की नयी किरण था। लेकिन अब वह सीमांत भी बन्द हो चुका था।

पूरी १९वीं सदी भर अटलांटिक के उस पार से भुक्खड़ सर्वहारा मजदूरों का दल का दल अमेरिका आता रहा। कुछ समय तक तो केवल आयरिश ही आये। १८४०-४९ के बीच अधिकतर आयरिश मजदूर ही खाइयाँ खोदते, घाट बनाते और स्वल्प मजदूरी पर कारखानों में प्रतिदिन १२ से १४ घंटा काम करते। बाद में आयरिशों की दशा में कुछ-कुछ सुधार होने लगा ही था कि इटालियनों का आना शुरू हो गया। और उसके बाद पूर्वी यूरोप के अधिकाधिक यहूदी और स्लाव आने लगे।

शनैः-शनैः इन विदेशी दलों के अधिकतर सदस्यों को अमेरिका की आबो-हवा में स्वतन्त्रता और अभिलाषाओं की छूत लग गयी और वे दारिद्रय से अपना पिंड छुड़ाने लगे। लेकिन उनके दुःख-दारिद्रयपूर्ण स्थान को ग्रहण करनेवालों की कमी न थी। लगातार नये-नये लोग आ रहे थे। उनमें से अधिक लोग ऐसे थे, जिन्हें उनसे पूर्व आनेवाले लोगों की सुख समृद्धि गाथाएँ (जो कभी-कभी मनगढ़ंत हुआ करतीं) सुनायी गयी थीं। बहुत से ऐसे भी थे, जिन्हें उद्योगपतियों के एजेंटों ने अमेरिका में उज्ज्वल भविष्य का आश्वासन दिया था। इनके आगमन की गति इतनी तीव्र थी कि अमेरिका में उपलब्ध काम उन्हें सबको खपा न सका। फलस्वरूप न्यूयार्क, बोस्टन, फिलाडेल्फिया, शिकागो और न्यू इंग्लैण्ड, पेनसिलवेनिया तथा ओहियो के औद्योगिक नगरों की सारी गन्दी बस्तियाँ उनसे ठसाठस भर गयीं। केवल १९०० में बाहर से ४,४८,५७२ व्यक्ति आये, जब कि १९०१ में ४,८७,९१८। यह संख्या बराबर बढ़ती ही चली गयी और १९०७ में तो यह १२,८५,३४९ तक हो गयी।

(प्रसंगवश एक बात की चर्चा यहाँ आवश्यक है। तब और उसके बाद युरोपियनों के प्रति अमेरिकनों की जो कुछ कटु भावना थी, उसका एक कारण था। पीढ़ी दर पीढ़ी अमेरिकनों ने जिन युरोपियनों को देखा वे प्रायः गरीब, अज्ञानी, मैले-कुचैले होते थे। यही दशा युरोप से मँगाये गये मज़दूरों की थी। फिर, वे अपना हेठ काम करते समय जिस भाषा का प्रयोग करते वह भी अमेरिकनों के पल्ले न पड़ती थी। जैसे-जैसे उनकी स्थिति सुधरती गयी, वैसे-वैसे वे अपेक्षाकृत कम इटालियन या पोलिस या सर्वियन् या चेक अथवा रूसी रहे गये। वे अधिकतर अमेरिकन ही बन गये। और इसलिए तब के युरोपियनों की वह भद्दी मूर्ति अमेरिकनों के मस्तिष्क में आज भी घूमती रहती है।)

परन्तु प्रश्न उठ सकता है कि इस "लौह कानून" के परम्परागत शत्रुओं — मज़दूर यूनियनों की क्या दशा थी? इसका उत्तर यह है कि तब भी कुछ मज़दूर यूनियनें थीं; पर कुछ को छोड़ कर अधिकांश यूनियनें कमज़ोर थीं। उन पर कानून की कुदृष्टि रहती थी। कानून का मानना था कि मालिक जो कुछ दे और मज़दूर जो लेना स्वीकार कर ले, वह उन दोनों का आपसी मामला है उसमें तीसरे के टपकने की जरूरत नहीं। जन-साधारण इन दोनों को ही

पसंद नहीं करता था। यही नहीं, वह इनसे भय भी खाता था।

१९०० में मजदूर यूनियनों की कुल सदस्य संख्या ८,६८,५०० पर पहुँच गयी थी, इनमें से अकेले अमेरिकन फैडरेशन आफ लेबर के सदस्यों की संख्या ५,४८,३२१ थी। ऐसी संगठित मजदूर यूनियनों की संख्या कम थी जिनके दबाव से मजदूरी बढ़ पायी थी। ऐसी सफल यूनियनों में सिगार बनाने वाले मजदूरों की यूनियन को गिना जा सकता है। बोस्टन स्थित साउथ एंड हाउस के सदस्य और कुशल तथा जागरूक प्रेक्षक राबर्ट वुड्स ने १९०२ में लिखा था कि काम मिलने पर बोस्टन में अनिपुण मजदूर प्रति सप्ताह ९ डालर से १२ डालर तक बना लेते हैं, निपुण कारीगर की औसत साप्ताहिक आय १३·५० डालर से १९·५० डालर होती है, हाँ वे थोड़े समय के लिए खाली भी रह जाते हैं। लेकिन इन सबके विपरीत सिगार बनाने वाले मजदूर प्रति सप्ताह १५ डालर से २५ डालर तक बना लेते हैं और वे बहुत कम बेकार बैठते हैं।

अधिकांश बड़े-बड़े उद्योगों में लगे मजदूरों की कोई यूनियन न होती थी। जहाँ कहीं यूनियनें थीं अथवा यूनियन संगठित करने का प्रयास होता था, वहाँ मालिकों और मजदूरों के बीच खुला हिंसात्मक संघर्ष छिड़ने की आशंका रहती थी। एक तरफ तो विद्रोही मजदूर होते और दूसरी ओर नासमझ उद्योगपति, उनके गुर्गे और कभी-कभी क्षेत्रीय सेना भी उनकी पीठ पर होती।

१८९८ में यूनाइटेड माइन वर्कर्स ने अपनी पहली हड़ताल में सफलता प्राप्त की थी। हर्बर्ट हैरिस लिखित "अमेरिकन लेबर" के इतिहास के अनुसार तब शाटगन, रिवाल्वर और राइफल से सज्जित हड़ताली मजदूरों के एक दल ने वर्डन (इलियोनायूज) में हड़ताल तोड़ने वाले मजदूरों और कम्पनी के रक्षकों से भरी एक पूरी ट्रेन को ध्वस्त कर दिया था। इसमें दोनों ओर के काफी लोग मारे गये। इसी प्रसंग में हैरिस ने लिखा है—"अपनी अचूक निशानेबाजी के बल पर मजदूरों ने अपनी सारी माँगें मनवा लीं।" उस समय श्रम और पूँजी की पारस्परिक भावना क्या थी, इसका अंदाजा उपर्युक्त उद्धरण से भली प्रकार लगाया जा सकता है।

१९ वीं सदी के अन्त और इस शताब्दी के प्रवेश काल में निम्न वर्गों के लोगों के जीवन की कुछ अप्रिय सच्चाइयों पर भी यहाँ दृष्टिपात किया जाना

आवश्यक है।

इन कठोर आँकड़ों पर ध्यान दीजिये :

१. मजदूरी : जैसा कि मैं पहले ही बता चुका हूँ अमेरिकी मज़दूर की औसत वार्षिक आय ४०० डालर या ५०० डालर प्रतिवर्ष के लगभग थी। अनिपुण मज़दूरों की आय इससे कुछ कम थी ; उत्तर में करीब ४६० डालर और दक्षिण में करीब ३०० डालर। अनिपुण मजदूर की औसत दैनिक मज़-दूरी डेढ़ डालर थी, बशर्ते कि उसे काम मिल जाये।

बोस्टन में राबर्ट ए वुड्स ने १९०२ में बताया था कि दुकानों में काम करनेवाली लड़कियों को उत्तर में और वेस्ट एंड्स में ५ डालर से ६ डालर तक प्रति सप्ताह औसत वेतन मिलता था। १९०० में सोलह वर्ष से ऊपर पुरुष जाति के एक तिहाई मज़दूरों को कपड़ों की मिलों में प्रति सप्ताह ६ डालर से कम मिलता था। और यह बात भी नहीं कि मज़दूरी तत्कालीन वेतन स्तर की निम्नतम थी। प्रायः इसी समय शिकागो में इटालियन मज़दूरों की हालत की जाँच कर संघीय लेबर ब्यूरो इस परिणाम पर पहुँची थी कि अनिपुण मज़दूर की एक श्रेणी को औसतन प्रति सप्ताह ४.३७ डालर के बराबर मज़दूरी मिलती थी। वुड्स ने यहाँ तक लिखा है कि बोस्टन में पोशाकों की दुकान में स्त्रियाँ ३ डालर से लेकर ५ डालर प्रति सप्ताह कमाती थीं। इसी सिलसिले में उन्होंने कहा है "घर पर सिलाई करनेवाली स्त्रियाँ सारे दिन में ३० या ४२ सेन्ट से अधिक नहीं कमा पाती थीं।"

२. काम के घंटे : मजदूरों को प्रति दिन १० घंटे और सप्ताह में ६ दिन या यों कहिये कि कुल मिलाकर ६० घंटे प्रति सप्ताह काम करना पड़ता था। व्यापारिक दफ्तरों में शनिवार को आधे दिन की छुट्टी लेने की तरफ कर्मचारियों का झुकाव बढ़ रहा था, परन्तु यदि कोई सप्ताह में पाँच दिन काम करने का सुझाव देता या तो वह विवेकहीन समझा जाता था। १९०० में जिस समय इन्टरनेशनल लेडीज गार्मेंट वर्क्स यूनियन स्थापित हुई, उस समय न्यू यार्क में इस व्यवसाय में काम करने के घंटे प्रति सप्ताह ७० थे।

३. बाल-मज़दूर : दस और पन्द्रह वर्ष के बीच की आयु के लड़कों में से कम से कम ३६ प्रतिशत अथवा एक चौथाई से अधिक लड़कों को ऐसा रोजगार

मिल जाता था, जिससे उनका काम चल जाय। उसी उम्र की लड़कियों में से १० प्रतिशत को काम मिल जाता था। इसमें से बहुत से खेतों पर काम करते थे, परन्तु २,८४,००० बच्चे मिल, कारखानों आदि में काम करते थे, जब कि किसी संतोषजनक ढंग से सुव्यवस्थित समाज में इस उम्र में वे स्कूल में पढ़ते होते।

४. दुर्घटनाएँ : हमारे आज के दृष्टिकोण से उस समय सुरक्षा का स्तर अत्यन्त नीचा था। इस सिलसिले में ये तथ्य विचारणीय हैं। केवल १६०१ में रेल की लाइनों पर काम करने वाले प्रति ३६६ मजदूरों में से एक दुर्घटना से मर जाता था और प्रति २६ में से एक जख्मी हो जाता था। इंजीनियरों, कंडक्टरों, ब्रेकमैनों, ट्रेनमैनों आदि के मामले में तो स्थिति और भी बुरी थी। उस एक ही वर्ष में प्रति १३७ में से एक मारा जाता था।

औद्योगिक मशीनों पर काम करने वाले बालकों पर दुर्घटना का खतरा विशेष तौर पर रहता था। १८६७ में नेशनल कान्फ्रेन्स आफ चेरिटीज एण्ड करेक्शन के अवसर पर प्रोफेसर विलियम ओ. क्रोन ने कहा था — "शिकागो जैसे शहर के धातु कुचलने के बड़े कारखानों में और कनस्टर भरने की बड़ी फैक्टरियों में कोई भी दिन ऐसा नहीं गुजरता था कि जब कोई न कोई बालक बिलकुल असहाय, अपंग न हो जाता हो।

५. मानवीय परिणाम : १६०४ में प्रकाशित राबर्ट हन्टर की पुस्तक "पावर्टी" में अमेरिका में रहने वाले ऐसे लोगों की संख्या और उनकी स्थिति बताने की शुद्ध अन्तःकरण से कोशिश की गई थी जिनको "न तो पेट भर भोजन, न तन भर कपड़ा और न पाँव पसारने को उचित ठौर उपलब्ध था।" हन्टर ने उनकी दीन दशा का वर्णन इन शब्दों में किया है : "जी-तोड़ कोशिश करने पर भी शारीरिक क्षमता बनाये रखने भर के लिए आवश्यक चीजें उन्हें मिल नहीं पातीं।" समस्त उपलब्ध आँकड़ों के अध्ययन के बाद उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि अमेरिका में कम से कम १ करोड़ ऐसे आदमी थे जिनमें से ४० लाख तो बिलकुल सार्वजनिक कंगाल थे। ये लोग सार्वजनिक अथवा निजी संस्थाओं पर आश्रित थे और शेष को अपनी दीन अवस्था से छुटकारा पाने के लिए कोई सहारा न मिलता था। हन्टर ने यह स्वीकार किया था कि यह एक

करोड़ की संख्या वास्तव में ठीक ही हो यह कोई जरूरी नहीं। यह संख्या डेढ़ करोड़ या दो करोड़ भी हो सकती है।

३

मानवीय परिभाषा के अन्तर्गत इन कठोर आंकड़ों का तात्पर्य क्या हुआ ? शताब्दी के आरम्भ में बड़े शहरों की गन्दी बस्तियों और औद्योगिक कस्बों में विद्यमान गरीबी का योग्य प्रेक्षकों के वर्णन को पढ़ने का अर्थ मनुष्य के संकटों के प्रसंग में दैन्य, लोगों की रेलपेल, गन्दगी, भूख, अपुष्टिकर भोजन, निराश्रयता अभाव जैसे शुष्क शब्दों को थोड़ा बहुत हेर-फेर से बार-बार सुनता है।

इटली के नाट्यकार जी जियाकोसा ने १८९८ में अपने साथी देशवालों के न्यूयार्क स्थित क्वार्टर देखे थे। उन्होंने लिखा है—"गलियों की कीचड़, धूल, गन्दगी, बदबूदार नमी और दुर्व्यवस्था का वर्णन करना असंभव है।"

मार्च १८९९ में बोस्टन शहर के शिल्पी परामर्शदाता ने शहर के उत्तरी और पश्चिमी सिरे पर अवस्थित कुछ झोंपड़े देखे थे। उन्होंने लिखा है—"मैली और टूटी-फूटी दीवारें और छतें, पानी से भरे हुए अंधकारपूर्ण तहखाने, जूठन और गन्दगी से भरी हुई सकरी गलियाँ, टूटी और चूती हुई नालियाँ....गंदे काले पाखाने, पहले से बैठे हुए या बेकार पड़े हुए छोटे कमरे....और नष्ट भ्रष्ट घर बड़ी ही खतरनाक हालत में थे।"

प्रेक्षकों की रिपोर्ट में बार-बार एक ही बात की चर्चा मिलती है और वह यह कि जरूरत से ज्यादा मजदूरों की संख्या, केवल पेट भरने के लिए कैसी ही हालत में कोई-सा भी काम करने की नैराश्यपूर्ण स्वीकृति वहाँ विद्यमान थी। राबर्ट हंटर ने नीचे की पंक्तियाँ पेनसिलवेनिया के इस्पात क्षेत्रों के बारे में नहीं, बल्कि शिकागो के सम्बन्ध में लिखी हैं।

"सर्दी और वर्षा के बावजूद सुबह के झुटपुटे में मेरे कमरे के बाहर लकड़ी से पाटी हुई छज्जियों से गुजरते हुए लोगों का नीरस पदचाप सुनकर मुझे नियत समय से प्रायः दो घंटे पहले जग जाना पड़ता। भारी दुःखी पुरुष, श्रान्त और चिंतित औरतें, अपर्याप्त कपड़ों में लिपटी अस्तव्यस्त लड़कियाँ और दुर्बल

आनन्दविहीन लड़के कुछ जागते कुछ सोते चुपचाप जल्दी-जल्दी कारखानों को जा रहे होते। सैकड़ों अन्य लोग, स्पष्टतः उनसे भी अधिक भूखे और बदकिस्मत, एक बन्द फाटक के सामने प्रतीक्षा कर रहे होते। अन्त में लाल दाढ़ीवाला एक आदमी बाहर निकलता और उनमें से अपेक्षाकृत अधिक हट्टे-कट्टे तथा देखने-सुनने में अच्छे २३ लोगों को चुन लेता। इनके लिए तो कारखानों का दरवाजा खोल दिया जाता, पर अन्य लोग आँखों में नैराश्य लिये दूसरी जगह रोजी खोजने अथवा घर में या किसी सैलून अथवा किसी सराय में दिन काटने चले जाते।"

इन्हीं वृत्त लेखकों ने इस पर सहमति व्यक्त की है कि इस दुःखपूर्ण दृश्य का दूसरा पहलू भी था। किसी भी बाहरी आगन्तुक के सामने एक बात विशेष रूप से स्पष्ट हो जाती : सर्वाधिक भूखा व्यक्ति भी उनकी आशा के विपरीत अच्छे कपड़े पहनता था। लेखक एम. ई. रेवेज ने जो रूमानिया से नये-नये आये थे, लिखा है कि प्रायः किसी के तन पर पैवन्द लगा कपड़ा देखने को न मिला। उन्होंने यह भी लिखा है कि "यदि पोशाक देखकर ही पहचानने की बात हो, तो आप किसी बैंक के अध्यक्ष और उसके आफिस के चपरासी में तमीज़ नहीं कर पाते।"

हमें यह भी नहीं भूलना चाहिए कि इन्हीं गन्दी बस्तियों में बाहर से आये हुए कितने ही लोगों को कुछ ऐसी नयी चीजें देखने को मिलीं, जो उनके कौतुहल का कारण बनीं। प्रतिदिन के कामों में साबुन का उपयोग, जाड़े में बैंगन और टमाटर,....पास के सैलून से आई घड़ा भर 'बीयर' देखकर रेवेज को अचरज के साथ हर्ष भी हुआ। रूस से हाल ही में आई बालिका मेरी एंटिन डिब्बों में बन्द खाने की चीजें, लोहे के चूल्हे, कपड़े धोनेवाले तख्ते, कमरे से दूसरे कमरे तक लगी हुई बोलने की नलियाँ और गली के लैम्पों को देखकर सन्न रह गई, "लैम्प इतनी ज्यादा हैं और वे सुबह तक जलते हैं। इसलिये मेरे पिताजी ने कहा था कि लोगों को लालटेनें ले जाने की जरूरत नहीं।" निःशुल्क सार्वजनिक शिक्षा उनको और उनके माता-पिता को और भी अधिक अद्भुत लगी : "कोई अर्जी नहीं, कोई प्रश्न नहीं और कोई फ़ीस नहीं।" उसके पिता "अपने बच्चों को स्कूल इस तरह ले जाते, मानो धार्मिक दीक्षा दिलाने

जाते हों।"

यह भी बिलकुल सच है कि धीरे-धीरे गंदी वस्तियों गली-कूचों की निकृष्टतम कठिनाइयाँ दूर होती जा रही थीं। १८९० में प्रकाशित जेकब ए. रीस की "हाउ दि अदर हाफ़ लिव्ज" नामक स्मरणीय पुस्तक में दी हुई रिपोर्टों ने जाँच कमीशनों और अपेक्षाकृत अधिक धनवान नागरिकों को सचेत कर दिया था। दस वर्ष बाद ही रीस ने लिखा कि न्यूयार्क में सबसे पिछले हिस्से की गंदी बस्तियों की सफाई हो चुकी है। १९०० तक तो रीस को ऐसा लगने लगा कि ईस्ट साइड में सड़कों पर यदि कहीं-कहीं गन्दगी थी भी तो वह नियम न होकर अपवाद ही थी। न्यूयार्क के ग़रीब इलाकों के लिये पार्क, खेलने के मैदान और व्यायामशालाएँ बनाने का कार्य आरम्भ हो गया था। न केवल न्यूयार्क में, बल्कि दूसरे शहरों और रियासतों में भी कारखानों की नौकरी और दुर्व्यवस्था सम्बन्धी जघन्य बातों का कानून द्वारा मूलोच्छेद शुरू हो गया था।

देशान्तरों से आनेवालों की बाढ़ तब भी आती रही और वेतन स्तर उस 'लौह कानून' के नीचे ही दबा रहा। यद्यपि उद्योग बढ़ते जा रहे थे और गंदे टूटे-फूटे क्वार्टरों में क्रूरता के परत पर परत लग रहे थे। और, जो कोई अमेरिकी ग़रीबी की इस समस्या के समाधान का भार अपने ऊपर लेता, वह वास्तविक सुधार करने में अपने को बहुधा असमर्थ पाता था। वुड्स ने लिखा है "वास्तविक कठिनाई यह है कि जन्म से लेकर मरणपर्यन्त लोग शक्तिशाली सामाजिक तत्त्वों की दया पर आश्रित हैं ; ये तत्त्व मानो लोगों का भाग्य अपने हाथ में लेकर चलते हैं।" जो कुछ हो रहा था क्या वह लोकतन्त्री समाज की कल्पना तक के लिए भी हास्यास्पद न था ?

४

वास्तविक पूँजीवाद

१८९९ में न्यूयार्क में एक ऐसे व्यक्ति का निधन हुआ, जिसने अर्थशास्त्र का कोई खास अध्ययन नहीं किया था। तथापि शताब्दी के अन्त में अमेरिकी व्यवसायियों पर उस का जितना प्रभाव पड़ा, उतना शायद अर्थशास्त्र के सभी विशेषज्ञ भी न डाल सके होंगे। इस व्यक्ति का नाम होरेशियों एल्जर जूनियर है।

एल्जर लिखित 'सफलता की कुंजियों' को, तब और अब भी शिक्षित पाठक सामान्यतः निरर्थक मानते हैं। उसकी किताबें शाब्दिक, गप्प, अवास्तविक और कुछ अंश तक मर्म रहित हैं। तथापि गृहयुद्ध के बाद और प्रथम महायुद्ध के पूर्व की अवधि में लाखों अमेरिकी लड़के बड़े चाव से उन किताबों को पढ़ते थे। और यह भी संभव है कि उन में से अधिकांश लड़कों ने अमेरिका के आर्थिक जीवन की पहली झाँकी होरेशियों एल्जर की किताबों से ही ली होगी।

होरेशियों एल्जर का नायक सामान्यतः १५ वर्ष या इसके आसपास की अवस्था का पितृहीन युवक होता। उसका नायक अपने जीवन यापन के लिए स्वयं कमाने वाला तथा अधिकांशतः न्यूयार्क वासी होता। उसका बदमाशों से पाला पड़ता। परन्तु उसमें बल, चालाकी और बहादुरी होती और वे बदमाश बेवकूफ और कायर होते। होरेशियों एल्जर के कथन का तात्पर्य स्पष्टतः यही था कि यदि मनुष्य कठिन परिश्रम करे और पैसे बचाये, तो उसका सफल होना ध्रुव सत्य है। इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि एल्जर के सिद्धांत में कुछ सार्थकता है। जान डी राकफेलर को ही लीजिये। उन्होंने क्लीवलेंड में एक आढ़तिया की कोठी पर ४ डालर प्रति सप्ताह की मुनीमगिरी आरम्भ की, परन्तु बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में दुनिया के सब से धनवान गिने जाने लगे। एन्ड्रयू कार्नेगी को ही देखिये, जिन्होंने १३ वर्ष की अवस्था में पिट्सबर्ग की कपड़े की मिल में १.२० डालर प्रति सप्ताह पर अन्टा भरने की नौकरी की परन्तु आगे चल कर सब से बड़े इस्पात उत्पादक बन गये। एडवर्ड एच. हेरिसन

को भी लीजिये । इन्होंने ५ डालर प्रति सप्ताह पर एक दलाल के यहाँ काम शुरू किया, पर बाद में रेलों का साम्राज्य स्थापित करने योग्य हो गये । मितव्ययिता के संबंध में बड़े बैंकर जार्ज फिशर बेकर के उदाहरण को ले लें । जिन्होंने अपनी जीवनवृत्ति बाबू की नौकरी से शुरू की और अपनी आधी आय से ही निर्वाह करने का और आधी को बचाने का संकल्प उन्होंने अपनी पत्नी सहित विवाहित जीवन के आरम्भ काल में कर लिया था । ये तो सिर्फ ऐसे दृष्टांत हैं, जिन से सफलता के नियम की सिद्धि हुई । इस नियम का स्वाभाविक निष्कर्ष यह निकला कि गरीब लोग इसलिये गरीब बने रहते हैं क्योंकि वे स्वयं अपने ही आलस्य, अज्ञान और प्रमाद के शिकार हैं ।

अर्थशास्त्र का मूल सिद्धांत यही है, ऐसा विश्वास करना उस समय के व्यवसायियों को स्वभावतः अच्छा लगता था । फिर भी प्रश्न उठ सकता है कि आखिर उन्हें स्कूल में क्या बताया नहीं गया कि अर्थशास्त्र इस से कुछ अधिक जटिल है ?

इस प्रश्न के दो जवाब हैं : एक तो यह कि १९०० के सफल और बड़े व्यवसायियों में शायद ही किसी ने अर्थशास्त्र का अध्ययन किया था । दूसरे, यह भी संदिग्ध ही है कि उनमें से किसी ने अथवा उनके अनेक प्रतिद्वंद्वियों ने अवस्था को प्राप्त होने पर भी अर्थशास्त्र से अपना संबंध जोड़ा था । वे अर्थशास्त्र के प्राध्यापकों को अव्यावहारिक सिद्धांतकार के अतिरिक्त और कुछ न मानते थे । जो व्यक्ति संसार में अपना स्थान बना लेता, वह अपने को 'महान कठिनाइयों के विद्यालय' का स्नातक बताना ही अधिक पसंद करता ।

शताब्दी के आरंभ में लाखों ऐसे अमेरिकन थे, जिन्होंने कालेजों में शिक्षा पायी थी । इन में से कुछ ही लोग ऐसी शिक्षण संस्थाओं में गये थे, जिसके पाठ्यक्रम में अर्थशास्त्र भी शामिल था । इससे भी कम लोगों ने इस विषय का वास्तविक अध्ययन किया था । आर्थिक जीवन के संबंध में आखिर उन्हें पढ़ाया ही क्या जाता था ?

कुछ स्वतंत्र विचारकों ने १९वीं सदी के अंतिम चतुर्थांश में, अर्थ विज्ञान को नये विषय और औद्योगिक युग की वास्तविकताओं के अनुरूप बनाने के प्रयास किये । फिर भी अधिकांश कालेज स्नातकों को 'क्लासिकल' अर्थशास्त्र के

सिद्धांतों से परिचित भर कराया जाता था। इस 'क्लासिकल' अर्थशास्त्र के ज्ञाताओं की धारणा थी कि जिस प्रकार भौतिक विज्ञान वेत्ता निर्जीव वस्तुओं के गुण संबंधी खोज करते हैं, उसी प्रकार अर्थशास्त्र के इन स्नातकों को स्वयं ही अर्थशास्त्र के नियमों का अनुशीलन करना चाहिए और स्वयं ही अर्थशास्त्र के ऐसे सिद्धांतों को जैसे माँग और पूर्ति, लाभ का क्रमिक ह्रास, बुरा धन अच्छे को निकाल बाहर कर देता है आदि को समझ लेना चाहिए कि बाजार में वे कैसे प्रचलित होते हैं। तब उन के मस्तिष्क में राष्ट्रीय अर्थतंत्र, राष्ट्रीय आय, राष्ट्रीय उत्पादन तथा आर्थिक इकाइयों की पारस्परिक निर्भरता के आधुनिक सिद्धांत की बात आयी नहीं थी। उन्होंने जिन सिद्धांतों का निरूपण किया, उनका संबंध व्यक्ति तथा मानव जाति को परस्पर स्वतंत्र इकाइयों से था। अपने द्वारा प्रतिपादित इन नियमों के प्रति उनका एक प्रकार का मोह था और इस कारण इन नियमों में गड़बड़ी पैदा करने वाली किसी भी बात को वे बुरा मानते थे। वे यही सिखाते थे कि यदि छेड़छाड़ न की जाये, तो कोई भी चीज अपनी अच्छाई दिखाये बिना न रहेगी। उदाहरणार्थ, अत्यन्त सज्जन और सहानुभूतिपूर्ण व्यक्ति भी यही कहता कि काम के घंटों और मजदूरी निर्धारण में कानूनी हस्तक्षेप अनुचित है।

अर्थशास्त्र के नियमों में हस्तक्षेप की निरर्थकता की सबसे अधिक आवाज येल के महान राजनीतिक अर्थशास्त्र के शिक्षक विलियम ग्राहम समनेर ने लगायी। १८८३ में उनकी "ह्वाट सोश्यल क्लासेज ओ टू ईच अदर" नामक पुस्तक प्रकाशित हुई, जिसमें उन्होंने सुधारवादियों को बड़ी जली कटी सुनायी।

समनेर का तर्क यह नहीं था कि आर्थिक दृष्टि से बेबसों की कानून द्वारा सहायता की ही नहीं जा सकती। उनकी धारणा थी कि अधिकांश सुधार कानून ऐसे लोगों के दिमाग की उपज होते है, जो विषय को नहीं जानते और उनका मसविदा मूर्खतापूर्ण होता है। समनेर अपने छात्रों से कहा करते थे कि देश पर वाशिंगटन का राजनीतिक परोपकार जरूरी नहीं। ईश्वर ने राजनीतिक अर्थशास्त्र के नियमों द्वारा इस काम को कहीं अधिक अच्छे ढंग से किया है।

समनेर अपने विचारों के प्रति उतने ही सच्चे थे, जितने जान डी. राक-

फेलर अपने इस कथन के प्रति कि 'ईश्वर ने मुझे मेरा ही धन दिया है।' उसकी दृष्टि में अर्थशास्त्र के वे कानून बड़े उदार थे। उन नियमों को निर्बाध रूप से अपना काम करने देने की जरूरत थी। यदि किसी आदमी पर धन की वर्षा हो रही हो अन्य लोग किसी होटल के पिछवाड़े में जूठन चाटने के लिए छीनाझपटी कर रहे हों तो इस में किसी का कोई दोष नहीं। यह तो केवल ईश्वर की इच्छा है।

सबसे अधिक विचित्र बात तो यह है कि पीढ़ियों से लोग अपने हित के लिए आर्थिक कानूनों को तोड़ते-मरोड़ते आ रहे थे और इस सिलसिले में उन्होंने ऐसी संस्थाओं को जन्म दिया, जो ईश्वर की कृति कदापि नहीं कही जा सकतीं। जैसे कि समनेर के कुछ विद्यार्थी समझते थे। उन सबका निर्माण मनुष्य ने किया। उदाहरणार्थ 'कारपोरेशन' को ही लीजिये। इसका आविष्कार मनुष्य ने किया। इसका निर्माण शासन द्वारा हुआ और इसकी सुविधाओं और कार्य-सीमाओं का निरूपण किया कानून ने। इस कारपोरेशन ने व्यवसाय और उद्योग को जो प्रोत्साहन दिया, उस दृष्टि से यह १९ वीं सदी का एक महान् आविष्कार माना जायेगा। तथापि, इसकी सुविधाएँ आदि निरूपित करने के लिए जो कानून बनाये गये थे, उनका धूर्ततापूर्ण लाभ उठा कर लोग असाधारण चालें चल सकते थे। और इस प्रक्रिया का विरोध करना मूर्खता होती, क्योंकि तब यह तर्क दिया जाता था कि अर्थतंत्र अपना मार्ग स्वयं ढूंढ़ लेता है।

एक बार होरेशियो एल्जर की कुछ कहानियाँ पढ़ने की इच्छा हुई, खासकर यह जानने के लिए उसका छोटा-सा नायक किस प्रकार धनी हो जाता है। स्पष्टतः आरंभ में उनका अपना अथक परिश्रम ही उसे सफलता के सोपान पर चढ़ाता। इसके परिणाम स्वरूप उसको मजदूरी प्रति सप्ताह ५ डालर से बढ़ कर १० डालर हो जा सकती थी। परन्तु इसे वास्तव में दौलत तो कहा नहीं जा सकता। और किताब के अन्त में मैंने देखा कि पूंजी भी किस तरह उसके पल्ले पड़ जाती।

स्पष्टतः इन कहानियों का मर्म यह नहीं था कि कठिन परिश्रम करने से धन प्राप्त होता है और धनिकों के बीच पाँव जमाने से सफलता मिलती है बल्कि उनका तात्पर्य यह था कि जो कड़ी मेहनत करता है, अपने छदाम कौड़ी को बैंक

में जमा करता है और अमीरी ठाट से दूर रहता है, ईश्वर उसी को पुरस्कृत करता है। भावना यह थी कि काम करो, पैसा बचाओ, सज्जन बनो फिर तुम्हारी गोद में सम्पत्ति की वर्षा होने लगेगी और सब कुछ ठीक हो जायेगा।

व्यवसायियों की एक पूरी पीढ़ी का पक्का विश्वास था कि धन सद्गुणों का पुरस्कार है और गरीबी अज्ञान की उपज है तथा आर्थिक कानूनों से छेड़छाड़ न की जानी चाहिए। फिर भी क्या बात थी कि इसके बावजूद उन्होंने कुछ ऐसी संस्थाओं को जन्म दिया, जो उनके सिद्धान्तों के बिलकुल विपरीत और क्रियमाण थीं। इसके मर्म को समझने में होरेशियो एल्जर की कहानियों से कदाचित सहायता मिल सकती है। अब हम ऐसी ही कुछ संस्थाओं पर दृष्टिपात करेंगे।

२

१९०० का पूँजीवाद वास्तविक अर्थों में पूँजीवादी था। व्यवसाय का मालिक स्वयं अपना कारबार चलाता था। व्यवसाय का मालिक वह व्यक्ति होता, जिसने निजी पूँजी लगायी हो, या दूसरे से धन एकत्र कर व्यवसाय का श्रीगणेश किया हो। पाल हाफमैन द्वारा प्रतिपादित 'निर्णायक शक्ति के विकेन्द्रीकरण' जैसी कोई बात उस समय न थी। आज के युग में प्रायः ऐसा होता है कि ऐसे व्यक्ति की, कारपोरेशन विशेष की कुल सम्पदा के स्वल्प अंश के ही भागीदार होते हैं, कारपोरेशन का कारबार देखते हैं। लेकिन उस समय इस तरह की कल्पना करना भी कुतर्क का परिचायक होता। देश में कुल निर्मित वस्तुओं की केवल दो-तिहाई का उत्पादन कारपोरेशनों द्वारा होता था। शेष एक तिहाई का उत्पादन या तो हिस्सेदारी में होता और या वैयक्तिक संचालकों द्वारा। किसी भी कारपोरेशन के स्टाक होल्डरों की सदस्य संख्या तब ६० हजार से अधिक न थी। अमेरिकन टेलीफोन एंड टेलीग्राफ के स्टाक होल्डरों की संख्या १९०० में केवल ७,५३५ थी, जब कि १९५१ में उसके दस लाख स्टाक होल्डर थे। तब पेनसिलवेनिया रेलरोड के स्टाक होल्डरों की संख्या ५१,५४३ थी और यूनियन पेसिफिक का १४,२५६। परन्तु १९०१ में यूनाइटेड स्टेट्स स्टील की स्थापना के बाद ही उसके स्टाक होल्डरों की संख्या ५४,०१६ हो गयी।

कम्पनी का मालिक प्रायः वही व्यक्ति होता, जिसने अपना मस्तिष्क और

अपना अथवा अपने मित्रों का धन उसमें लगाया हो। यदि कम्पनी पुरानी होती, तो, या तो उसे उत्तराधिकार में वह मिल गयी होती और, या वह उस कम्पनी के अधिकांश शेयर खरीद लेता। और कम्पनी की चालू सम्पदा का चाहे जिस किसी भी रूप में वह उपयोग कर सकता था। इस पर कानून अथवा परम्परागत प्रतिबन्ध यदि कुछ था भी, तो वह नगण्य ही था।

अधिकतर तो वह यही समझता कि वह कम्पनी को किस तरह चलाता है यह देखने और समझने का किसी दूसरे को कोई अधिकार नहीं। कुछ कम्पनियाँ अपने अल्पसंख्यक भागीदारों के समक्ष विस्तृत रिपोर्ट उपस्थित करतीं, कुछ उस से कम और कई कम्पनियाँ तो रिपोर्ट नाम को कोई चीज ही प्रकाशित नहीं करती थीं। १८९७ से १९०५ तक वे वेस्टिंग हाउस कम्पनी के भागीदारों को एक भी वार्षिक बैठक न हुई। यूनाइटेड स्टेट्स एक्सप्रेस कम्पनी ने तो वर्षों तक न कोई रिपोर्ट प्रकाशित की और न उसकी कोई मीटिंग ही हुई। अमेरिकन शुगर रिफाइनिंग कम्पनी ने तो अपने १० हजार भागीदारों को कुछ बताया ही नहीं। कामकाज चालू रखने के लिए उसे आवश्यक लाइसेंस मिलता रहे इसके लिए वह वार्षिक आँकड़ा (बैलेंस शीट) मसाच्युसेट्स के राज्य सचिव के पास पेश कर देती। भागीदार चाहते तो इसी आँकड़े से कम्पनी के कारबार का पता कर सकते थे। यह आँकड़ा भी विस्तृत न होता, उसमें केवल ७ मद होते, ४ लेनदारी (सम्पदा)के और ३ देनदारी के।

अल्पसंख्यक भागीदारों को तो यह देखने से मतलब था ही नहीं कि कम्पनी क्या कर रही है और क्या नहीं। फिर सरकार और अदालत का तो पूछना ही क्या ?

शेयर बाजारों में ऐसे अनेक व्यक्ति थे, जिनका काम कम्पनियों के स्वत्वाधिकार की खरीद-बिक्री करना था। ऐसे लोगों को यह जानने की फिक्र नहीं होती थी, कम्पनी की स्थिति क्या है। उनका मतलब केवल एक था उसे खरीद और बेचकर मुनाफा कमाना। और अधिकतर रेलरोड ही खरीदी और बेची जाती थीं। बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में ई. एच. हैरीमन सबसे बड़े रेलरोड व्यवसायी थे। उन्होंने सर्वप्रथम एक कमजोर रेलरोड कम्पनी को इस इरादे से खरीदा कि उसे ठीकठाक करके पेनसिलवेनिया या न्यूयार्क सेण्ट्रल को बेच दें।

खरीदा और ऐसा उन्होंने बाद में किया भी। ऐसे लोग भी थे, जो इससे भी गर्हित तरीका अपनाते थे। इनमें सबसे भयंकर व्यक्ति जे गाउल्ड था। वह कम्पनी के स्वत्वाधिकार खरीद लेता, फिर उस कम्पनी के जरिये अपने मतलब के ठेके लेता और उस कम्पनी की सारी पूँजी किसी दूसरे प्रतिष्ठान में चली जाती। इस प्रकार उस कम्पनी का सारा रस-चूस लेने के बाद वह उसे बेच डालता।

पूँजी के साथ खिलवाड़ करने वालों में शेयर बाजारों के सटोरिये और मुनाफाखोर ही प्रमुख थे। कम्पनी विशेष से उनका अभिप्राय उसके शेयरों की तेजी और मंदी से था। उसमें काम करनेवालों, उसके मकानों और मशीन अथवा उसमें बननेवाली जिन्सों से उनका कोई मतलब न था।

कभी-कभी किसी खास सम्पत्ति को खरीदने के लिए दो प्रतिद्वन्द्वी दलों में प्रतियोगिता शुरू हो जाती। तब उनकी खरीदारी का शेयर बाजार पर बड़ा भयंकर असर पड़ता। १९०१ के बसन्त में इसी प्रकार की एक होड़ हुई थी। मोर्गन के समर्थक और हैरीमन के पक्षपाती दोनों ही बर्लिंग्टन रेलरोड का खरीदना चाहते थे। मोर्गन अपनी नार्दर्न पेसिफिक को बढ़ाना चाहते थे और हैरीमन अपनी यूनियन पेसिफिक को। हैरीमन के मस्तिष्क में यह बात आयी कि क्यों न नार्दर्न पेसिफिक का ही स्वत्वाधिकार प्राप्त कर लिया जाये। उन्होंने नार्दर्न पेसिफिक के स्टाक चुपचाप और तेजी से खरीद लिए। जब मार्गन समर्थक तत्वों को इस बात का पता चला तो उन्होंने आँख मूँदकर खरीददारी शुरू कर दी। और नार्दर्न पेसिफिक के भावों में अप्रत्याशित वृद्धि को देख कर वाल स्ट्रीट के सटोरियों ने 'शार्ट सेलिंग' शुरू कर दी। फलस्वरूप मोर्गन और हैरीमन तत्वों ने इतने स्टाक खरीदे, जितने वास्तव में थे भी नहीं। नार्दर्न पेसिफिक का भाव एक हजार पर आ गया। जब शार्ट बेचुओं ने अपने को बचाने के लिए अपना सब कुछ बेच डाला तो वहाँ एक प्रकार का 'आतंक' छा गया।

आज इस प्रकार के आतंक की कल्पना भी नहीं की जा सकती। आज शेयर बाजारों पर इतने प्रतिबन्ध लगे हैं कि इस प्रकार की बातें हो ही नहीं सकतीं। परन्तु १९२१ के पूँजी खरीददार और बेचू अपनी मनमानी करने के लिए स्वतंत्र थे, उनकी गतिविधियों का परिणाम चाहे जितना भी बुरा हो, वे

कभी इसकी परवाह न करते थे।

ज्यादातर व्यापारी सिद्धांततः प्रतियोगिता में विश्वास करते थे। परन्तु व्यवहारतः वे इस बात की चेष्टा में रहते थे कि किस तरह प्रतियोगिता रोकी जाये, ताकि एक प्रकार के उद्योग में लगी सभी कम्पनियाँ एक साथ मिलकर अपनी जिन्सों का मूल्य इस प्रकार निर्धारित करें कि उनका मुनाफ़ा बढ़ जाये।

१८७९ में जान डी. राकफेलर के वकील सैमुएल सी. टी. डाड ने एक विलक्षण तरीका निकाला। उन्होंने ४० तेल कम्पनियों के मालिकों को इस बात पर राजी कर लिया कि वे अपना स्टाक ट्रस्टियों के एक समुदाय के हाथ छोड़ दें। इस समुदाय के अध्यक्ष राकफेलर ही बने। यह समुदाय मन चाहे दाम लेकर और अपने प्रतिस्पर्धियों को मार्ग से हटाकर तमाम चालीस कम्पनियों को एक इकाई की तरह चला सकता था, और इस प्रकार 'ट्रस्ट' का व्यवहार व्यावसायिक क्षेत्र में होने लगा। १८८०-८९ में चीनी ट्रस्ट, कसाइयों का ट्रस्ट, रबड़वालों का ट्रस्ट इत्यादि अनेक ट्रस्ट स्थापित हो गये! परन्तु इन ट्रस्टों के विरुद्ध प्रतिद्वन्द्वी व्यापारियों की और पीड़ित जनता की आवाज़ भी इतनी प्रबल हुई कि विधान निर्माताओं को इस तरह के प्रचलित ट्रस्टों के विरुद्ध कानून बना देना पड़ा। सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण कानून १८९० में "शरमन एंटी ट्रस्ट एक्ट" के नाम से बना।

इस बीच एक दूसरे वकील ने व्यावसायिक ट्रस्ट बनाने के एक दूसरे ही तरीके का आविष्कार किया। १८८९ में न्यू जर्सी के गवर्नर ने जेम्स बी. डिल नामक वकील से अनुरोध किया कि सरकारी खजाने को भरने के लिए वह कोई तरीका सुझायें। डिल ने सुझाव दिया कि इस काम के लिए एक सुन्दर उपाय यह होगा कि यहाँ एक ऐसा कानून बनाया जाय जिसके अन्तर्गत न्यू जर्सी में रजिस्टर्ड कम्पनियों को कारपोरेशन के स्टाक खरीदने और अधिकार में रखने की इजाज़त मिले। उस समय तक आमतौर से ऐसे कार्यों को गैर कानूनी माना जाता था। न्यू जर्सी का यह कानून लागू हुआ और उसके फलस्वरूप वहाँ कम्पनियाँ रजिस्टर्ड कराने के लिए लोगों का ताँता लग गया। राज्य सरकार को रजिस्ट्री शुल्क के रूप में बहुत बड़ी आय हुई। और शीघ्र ही अमेरिकी पूँजीवाद का एक नया युग आरम्भ हो गया। बाजार पर अपना एकाधिकार स्थापित करने

तथा प्रतियोगिता का गला घोंटने के लिए अब ट्रस्ट बनाने की आवश्यकता नहीं रह गयी थी। वे विभिन्न कम्पनियाँ अब अपना नया कारपोरेशन बनाकर या अपने को एक होल्डिंग कम्पनी का रूप देकर अपनी विभिन्न कम्पनियों के स्टाक खरीद सकती थीं। अथवा, यों कहिए कि वे एक दूसरे के शेयर खरीद सकती थीं। इस प्रकार संगठित होल्डिंग कम्पनी अपने अन्तर्गत सभी कम्पनियों के कारबार पर नियन्त्रण रख सकती थी।

१९वीं शती के अन्तिम वर्षों में होल्डिंग कम्पनियाँ रजिस्टर कराने की एक प्रकार की महामारी-सी चल पड़ी थी। यह काम सबसे अधिक इस्पात उद्योग में हुआ। इसी के फलस्वरूप यूनाइटेड स्टेट्स स्टील कारपोरेशनों का जन्म हुआ। इतना बड़ा व्यावसायिक प्रतिष्ठान देखने का सौभाग्य दुनिया को अब तक प्राप्त न हुआ था।

होल्डिंग कम्पनी शृंखला स्थापित करने की यह होड़ न केवल स्टील उद्योग में बल्कि अन्य कई उद्योगों में भी चली। इसका कारण यह था कि इसके माध्यम से थोड़े समय में बड़े परिमाण में धनोपार्जन किया जा सकता था। कालक्रम से यह पता चल गया कि ऐसी कम्पनियाँ बनाकर लोगों को उनके शेयर अधिकाधिक तायदाद में खरीदने के लिए प्रेरित किया जा सकता है और वह भी अधिक मूल्य में। जब भी ऐसी कोई कम्पनी बनती, शेयरों के भाव एक-दम बढ़ जाते। जिस व्यक्ति के हाथ में किसी छोटी इस्पात कम्पनी (संभवतः जीर्ण प्रायः) के नियंत्रण का अधिकार होता, एकाएक अपने को किसी बड़ी कम्पनी, उदाहरणार्थ, अमेरिकन टिन प्लेट के बहुमूल्य शेयर खंड का स्वामी पाता और सिर्फ दो वर्ष बाद ही यूनाइटेड स्टेट्स स्टील के और भी अधिक मूल्यवान शेयर खंड उसके हाथ में चले आते। लाखों डालर मानों शून्य से उसके हाथ में बरस जाते। नये शेयर चालू करने वाले बैंकरों और व्यवसायियों को तो इससे भी अधिक मुनाफा मिलता। जिस सेंडीकेट ने यूनाइटेड स्टेट्स स्टील को बाजार में उपस्थित किया था, उसे कुल ६ करोड़ डालर का लाभ हुआ और इसमें से केवल जे. पी. मोर्गन एंड कम्पनी को कम से कम १ करोड़ २० लाख डालर मिला।

३

इन बृहत्काय कारपोरेशनों के संबंध में दो और बातें कहना शेष हैं। एक तो यह कि इन कारपोरेशनों के निर्माण में संस्था का उतना हाथ नहीं होता था, जितना कि धनी व्यक्तियों का।

दूसरी बात जो विचारणीय है, वह यह कि इन प्रतिष्ठानों ने कैसे व्यक्तियों को ऊँचा उठाया। उदाहरणार्थ नये स्टील कारपोरेशन को ही लीजिये। प्रथम और सर्वप्रमुख इस्पात व्यवसायी एंड्रयू कार्नेगो इसमें न थे। इस पर जिसका प्रभुत्व था, वह इस्पात निर्माता नहीं, एक बैंकर थे जे. पियरपोन्ट मोर्गन। और मोर्गन के दाहिने हाथ जज एल्बर्ट एच. गोरी स्वयं इस्पात निर्माता न होकर कारपोरेशन के मात्र एक वकील थे।

मैं पहले बता चुका हूँ कि बेलगाम पूँजीवाद के उस युग में स्वयं कम्पनी का मालिक उसकी देखभाल करता था। और उसकी रुझान कम्पनी का वैयक्तिक संचालक होने की ओर अधिक होती थी। जो लोग अत्यन्त सम्पन्न होते और जिनकी स्थिति ऐसी होती कि वे अपने मुनाफ़े को पुनः अपने व्यवसाय में लगा सकें जैसे कि बाद को हेनरी फोर्ड निकले तब तो बात ही दूसरी थी, अन्यथा तब ऐसे लोगों का एक दल था, जिसके सामने बड़े व्यवसायी भी नतमस्तक थे। वह दल था बड़े-बड़े बैंक पतियों का। उनके पास वह साख थी, जिसके बिना व्यवसायी लोग अपने कारबार का न तो पुनर्गठन कर सकते थे और न अपनी कम्पनी के शेयरों की बिक्री ही बढ़ा सकते थे। आर्थिक दुनिया में उनकी अपनी प्रतिष्ठा और धाक थी। यह उनकी मर्जी पर निर्भर था कि वे कम्पनी विशेष की सिक्युरिटियों के लिए बाजार तैयार करें अथवा न करें। तब पूँजी रखने की अपेक्षा पूँजी पर नियंत्रण करना अधिक महत्त्वपूर्ण था।

मोर्गन बैंकर तो थे ही, उद्योगों के लिए पूँजी देने का काम भी करते थे। गोरी पूँजी भी लगाते थे और कारपोरेशन के वकील भी थे। इन दोनों ही व्यक्तियों का प्रभुत्व बड़े-बड़े उद्योगों पर स्थापित होता जा रहा था।

बीसवीं सदी के आरम्भ काल में पियरपोंट मोर्गन यदि अमेरिका के सबसे अधिक शक्तिशाली नागरिक नहीं, तो कम से कम अमेरिका के व्यापारिक क्षेत्र में

सर्वाधिक शक्तिशाली व्यक्ति अवश्य थे। वे उन कारपोरेशनों का संचालन करते थे या कम से कम उन पर अधिक प्रभाव रखते थे, जिनकी देश में कई प्रमुख रेल लाइनें थीं। और ऐसा इसलिए नहीं कि वह रेल व्यवसाय में दक्ष थे, बल्कि इसलिए कि वह आर्थिक पुनर्संगठन की कला में प्रवीण थे। जब कभी बड़े रेल कारपोरेशनों पर आर्थिक संकट पड़ा, जैसा कि १८९०-९६ की मन्दी में हुआ, उन्होंने उनको फिर से चालू कराया। उनकी इस सफलता के कई कारण थे। कुछ तो उस धन के कारण जो उनके प्रतिष्ठान के प्रत्यक्ष अधिकार में था, और कुछ वाल स्ट्रीट में उनकी महान प्रतिष्ठा और साख के कारण। एक बात यह भी थी कि जिस किसी व्यवसाय या सम्पत्ति को वह अपने हाथ में लेते, उसकी सुव्यवस्था पर वह अधिक बल देते थे। मोर्गन जब किसी रेलवे कम्पनी का पुनर्गठन करते, तो या तो अपने तरीके अपनाते या उसकी तात्कालिक कार्य प्रणाली को ध्यान से देखते थे और यदि वह असंगत प्रतीत होती तो हस्तक्षेप करते थे। उनकी बैंकवालों में भी अच्छी धाक थी, धीरे-धीरे वह और उनके साझीदार न्यू यार्क के बहुत से प्रधान बैंकों के नीति निर्धारक बनते जा रहे थे। और अब, १९०१ में वह इस्पात के विशाल व्यवसाय के राजा थे और अपने कारबार के प्रसार के लिए नये क्षेत्रों की तलाश में थे। उनकी शक्ति अस्पष्ट थी, परन्तु वह अपार थी और बढ़ती जा रही थी।

सम्पत्तियों के साथ बेखौफ़ खिलवाड़ करनेवाले सटोरिये उन्हें नापसन्द थे। जब वे किसी कम्पनी में अपने साधन लगा देते थे, तो वह उसका साथ देते थे और उनके मत में सज्जन व्यवसायियों का व्यवहार इसी तरह का होना चाहिए था। उनकी ईमानदारी चट्टान जैसी दृढ़ होती थी और वह कहा करते थे — "जिस पुरुष का मैं विश्वास नहीं करता वह सम्पूर्ण ईसाई राज्य की सारी हुँडियाँ देकर भी मुझसे धन नहीं ले सकता।" उपयुक्त कार्य के लिए पूँजी लगाने की मार्गन में एक प्रबल शक्ति थी, इसमें कोई सन्देह नहीं। परन्तु यह भी सत्य है कि उनकी यह प्रबल शक्ति अमेरिकी व्यवसाय का अधिकार मुट्ठी भर व्यक्तियों के हाथों में केन्द्रित करने के पक्ष में कार्य कर रही थी।

१९०१ के बसन्त में जब यह खबर फैली कि उन्होंने स्टील कारपोरेशन बना लिया, तब सनातनी नागरिकों ने जो टिप्पणी की उसमें भी निराशा की ध्वनि

सुनाई दी। येल के प्रेसिडेन्ट हेडले ने एक भाषण में कहा कि यदि ऐसे व्यवसायिक ट्रस्टों के नियमन का उपाय नहीं किया गया, तो पच्चीस वर्ष के अन्दर-अन्दर वाशिंगटन में कोई न कोई सम्राट बन जायेगा। "कास्मोपोलिटन मेगजीन" में, जिसमें उस समय के सार्वजनिक मामलों की चर्चा रहा करती थी, के सम्पादक जान ब्रिसबेन वाकर ने लिखा कि स्टील कारपोरेशन की घोषणा की पंक्तियों के बीच ये शब्द पढ़े जा सकते हैं—"घातक तरीकों, अनगिनत दुहरे लेखों, मानव परिश्रम की बर्बादी और व्यावसायिक युद्धों सहित प्रतियोगिता की प्राचीन पद्धति अब समाप्त कर दी गई।" अन्य लोगों को भय लगा कि यदि अर्थ संग्रह की यह अभिरुचि बढ़ती गई, तो जनता विद्रोह करेगी और समाजवाद को अपना लेगी।

क्या विचित्र बात है कि वह क्रान्ति जिसका इन प्रेक्षकों को भय था हुई, परन्तु वह अमेरिका में न हुई।

५
सरकारी दृष्टिकोण

जब ये अपशकुन की घटनाएँ बढ़ रही थीं तो अमेरिका सरकार क्या कर रही थी? यह प्रश्न कोई भी पूछ सकता है।

१९०० में सरकार कितनी छोटी थी और उसकी शक्ति और अधिकार कितने परिमित थे, आज हमारे लिए यह समझना कठिन है। उसने मोटे तौर पर ५७ करोड़ डालर प्रतिवर्ष खर्च किया जो उसके अर्ध शताब्दी बाद के स्थायी व्यय का लगभग आठवाँ भाग था (यद्यपि कोरिया के युद्ध ने पहले ही आय व्यय के लेखे को बढ़ा दिया था)। यथार्थ में न्यूयार्क राज्य ने जितना १९५० में व्यय किया उसकी अपेक्षा संघीय सरकार ने १९०० में बहुत कम धन खर्च किया। राष्ट्रीय ऋण की राशि १,०००००० लाख डालर से कुछ अधिक थी जो १९५० के २७५,००००००० लाख के ऋण का लगभग दो सौवाँ

हिस्सा था।

राज्य में न कोई वाणिज्य विभाग था, न कोई श्रम विभाग, न कोई संघीय व्यापार कमीशन और न कोई संघीय स्थायी रक्षित पद्धति ही थी। कारण स्पष्ट था : व्यवसाय का राज्य से कोई सम्बन्ध न था। उसके अन्तर्गत इन्टर-स्टेट कामर्स कमीशन अवश्य था जिसका कार्य रेलवे कम्पनियों की व्यवस्था करना था परन्तु कमीशन का अधिकार थोड़ा और अनिश्चित था। यहाँ तक कि शरमन एन्टी ट्रस्ट एक्ट को सुप्रीम कोर्ट के निर्णय ने काट-छाँट कर व्यवसाय में प्रति-स्पर्धा रखने के हेतु हल्की-सी विधि मात्र कर दिया था। और वर्ष १९०० में उस कानून के अन्तर्गत अटार्नी-जनरल ने एक भी मुकदमा दर्ज नहीं कराया।

व्यवसायिक मामलों में राज्य का कार्य कितना आकस्मिक था इसको दो या तीन दृष्टान्त स्पष्ट कर सकते हैं। १८९५ में राज्य का सोने का स्थायी कोष घट रहा था और असहाय अवस्था में उसे ऋण लेने की आवश्यकता हुई जिससे अधिक सोना खरीद कर वह अपने भयग्रस्त प्रचलित मुद्रा को साध सके। इस संकटकाल में उसे देश के सबसे बड़े निजी बैंक व्यवसायी पियरपोंट मोर्गन से कहना पड़ा। केवल उन्हीं की साख ऐसी थी जिससे उन्होंने बैंकवालों और धनिक लोगों को विश्वास दिला दिया कि वे राज्य को निःशंक ऋण दे दें। वालस्ट्रीट की मदद के बिना वाशिंगटन असहाय हो गया था।

अथवा प्रेसिडेन्ट थ्योडोर रूजवेल्ट के काम को ही ले लें, जिन्होंने कोयले के प्रबन्धकों और यूनाइटेड माइन वर्क्स के बीच मध्यस्थता करके १९०२ की एन्थ्रेसाइट कोयले की हड़ताल को समाप्त कर दिया। कितनी ही दशाब्दियों से अब हम प्रबन्धकों को और मज़दूरों को अपने बड़े झगड़े निबटाने के लिये वाशिंगटन जाते हुए या वाशिंगटन को घसीटे जाते हुए देखने के ऐसे अभ्यस्त हो गये हैं कि १९०२ में अमेरिका के राष्ट्रपति द्वारा हड़ताल का निबटारा होना नितांत अभूतपूर्व बात थी यह हमको प्रत्यक्ष करना कठिन है। न्यूयार्क से प्रकाशित पत्रिका सन् ने श्री रूजवेल्ट के प्रस्ताव को 'असाधारण' और 'भयप्रद' कहा। और न्यूयार्क जरनल आफ कामर्स के मत में :

"राष्ट्रपति का आचरण जनता के समक्ष यूनियनों की प्रधानता और शक्ति को स्पष्ट प्रदर्शित करता है। प्रबन्धकों के पद और अधिकारों पर अनधिकृत

लांछन लगाता है और आये दिन के अनेक राजनीतिक आर्थिक संकटों की सूची में ट्रेड यूनियनों के विचारणीय विषय को बढ़ाता है....श्री रूजवेल्ट की बलात् प्रवेश की अशासनीय अभिरुचि किसी भी हड़ताल से अधिक बुरी है।"

२

परन्तु यह १९०२ की बात है और थियोडर रूजवेल्ट एक साहसी पुरुष थे। १९०० में उनके पूर्वाधिकारी वैभवयुक्त विलियम मेक्किनले व्हाइट हाउस में विराजते थे। मेक्किनले विवेकशील व्यक्ति थे जो किसी हड़ताल को निबटाने के लिए कोशिश करने की कल्पना ही न करते। मेक्किनले संघीय सरकार का कर्तव्य और ही मानते थे। वह ईमानदारी में विश्वास करते थे। उनकी मान्यता थी कि राज्य को व्यावसायिक मामलों में तब तक हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए जब तक कि उसमें कोई अपराधी मामले न हों (और बहुत ही कम कार्य ऐसे थे जिनकी तब कानून में अपराधों की संज्ञा दी गयी थी)। बजाय इसके राज्य को अपनी सामर्थ्यानुसार व्यवसाय की मदद करनी चाहिये।

जब वे राजकीय कारोबार की अध्यक्षता कर रहे थे तब इस नागरिक धर्म-परायणता के लम्बे आवरण से ढकी हुई मूर्ति के पीछे एक दृढ़, सरल प्रकृति, स्पष्टवक्ता, उदारमना और मानवता की विभूति रिपब्लिकन नेता मार्क हन्ना भी थे जो सचाई के साथ मेक्किनले की प्रशंसा करते थे, जैसे कभी-कभी एक सेल्स मैनेजर एक कुलीन यद्यपि अव्यावहारिक पादरी की प्रशंसा करता है और कौन-सा व्यावहारिक मार्ग उसे अपनाना चाहिये यह बतलाने में आनन्दित होता है। हन्ना एक सफल उत्पादक, ओहिओ के सिनेटर और रिपब्लिकन नेशनल कमेटी के अध्यक्ष थे। वे धनिकों से और विशेष अधिकारियों से पूँजी इकट्ठी करना अच्छी तरह जानते थे। स्वभाव से बड़े-बड़े उत्पादकों के विचारों से वे पूर्ण सह-मत थे और बैंक के बड़े-बड़े व्यवसायियों से भी उनकी अच्छी पटती थी। जो उनकी सेवा करता है वह देश की सेवा करता है, ऐसा उनका ख्याल था। व्यावहारिक राजनीति की सीमा के अन्तर्गत वे उनके सच्चे और अनुरक्त सेवक थे।

१९०० में राष्ट्रपति पद के चुनाव में मेक्किनले का विरोध विलियम

जेनिंग्स ब्रयान ने किया था जिनको वे १८९६ में पहले ही हरा चुके थे। ब्रयान प्रजानायक न थे बल्कि जनता के सच्चे प्रेमी, एक नेक व्यक्ति, ईमानदार पुरुष, और मानवीय अधिकारों के स्वाभाविक रक्षक थे। उनका मस्तिष्क छिछला और हठी था, परन्तु उनकी भाषण शक्ति जादू का-सा असर करनेवाली थी। उन दिनों जब कि रेडियो और टेलीविजन न थे और वक्तृता एक विस्तृत प्रशंसनीय कला थी, कोई भी श्रोतागणों को इतना मुग्ध और वश में नहीं कर सकता था जितना कि ब्रयान कर सकते थे।

ब्रयान ने अपना सन् १९०० का चुनाव अभियान साम्राज्यवाद विरोधी प्रश्न पर आधारित किया था और वह कहते थे कि वे टापू जो स्पेन के युद्ध के परिणाम-स्वरूप अमेरिकियों के हाथों में आये थे, उनके बाशिन्दों को लौटा देने चाहिये। उन्होंने व्यवसायियों के ट्रस्टों को भी निन्दा की, और सिफारिश की कि कारपोरेशनों को संघीय लाइसेंस प्रणाली के अधीन रहना चाहिए और उन्होंने आय कर तक का प्रस्ताव किया। परन्तु उनकी अर्थशास्त्र की पकड़ ढीली थी और यद्यपि लाखों अमेरिकियों को व्यवसायियों के ट्रस्टों से कष्ट होता था तथापि ब्रयान उनको पूरी तरह से उत्तेजित करने में असफल रहे। क्योंकि १९०० का वर्ष ऐसा था जब पिछले बहुत समय की अपेक्षा बहुतों की जेबों में अधिक पैसा था। मार्क हन्ना ने चुनाव संघर्ष के पहले कहा था — "परिवर्तन से इन्कार कर देना ही सब कुछ है। इसी की हमें आवश्यकता है।" यह मुहावरा अमेरिकी राजनीति में हमेशा गूँजता रहा। हन्ना की भविष्यवाणी ठोस थी।

वास्तव में जब १९०० के अन्तिम सप्ताहों में हन्ना ने आकाश की ओर देखा तब क्षितिज पर केवल एक ही बादल दिखाई दिया और वह पुरुष था जिसको रिपब्लिकन नेशनल कन्वेशन ने उप-प्रधान के लिये उम्मीदवार चुना था और जो सेन जुआन हिल के प्रचण्ड रफ राईडर व न्यू यार्क के अनजाने नौजवान गवर्नर थियोडोर रूज़वेल्ट थे। वे स्वतन्त्र विचार के थे और प्रतिबन्ध सहन नहीं कर सकते थे, और हन्ना उनका अविश्वास करते थे। कन्वेन्शन में दूसरे सिनेटर से हन्ना ने धड़ाके से कहा — "क्या आप में से कोई भी अनुभव नहीं करता कि उस पागल आदमी और अध्यक्ष पद के बीच केवल एक ही प्राण है?"

जिसको कि विलियम एलन ह्वाइट — "व्यवसाय के लाभ के लिए राज्य और

व्यवसाय की सन्धि" कहते थे वह हन्ना के विचार में सच्चे प्रेम का व्यापार था। उनकी राय थी कि यदि बड़े कारपोरेशनों को जी चाहे वैसा करने का मार्ग सुगम कर दिया जाय तो वह धन जो उन्होंने जमा कर लिया था कम भाग्यवानों के पास स्वच्छ होकर पहुँचेगा और बड़े कारपोरेशनों को और भी अधिक सफल होने के अवसर देने के अलावा नियमों में परिवर्तन करने की कोई भी कोशिश प्रजानायकी का, जघन्य जनों के शासन का और बर्बादी का मार्ग खोल देगी। पर दूसरों के लिए सन्धि करना आवेग या विश्वास का मामला न था किन्तु खरीदने और बेचने का ; अथवा राज्य संस्थाओं से अनुग्रह और धन के प्राप्त करने के हेतु अनैतिक वृत्ति करने का था। बड़े कारपोरेशनों ने अपने हितों की वृद्धि चुनाव के लिए केवल बड़ा चन्दा देकर ही नहीं की — बहुधा दोनों पक्षों को चन्दा देकर — बल्कि कानून बनाने वालों को और यहाँ तक कि न्यायाधीशों को आर्थिक सहायता या रिश्वत भी देकर की।

कानून बनाने वालों, अफसरों, पत्रकारों और उनके कुटुम्बों को रेलवे की कम्पनियाँ यात्रा करने के लिए फ्री पास दिया करती थीं। कुछ समय बाद दूसरी राजधानी में कारपोरेशन वाले खिलाफ कानून बनाने की धमकी या अनुकूल कानून बनाने की आशा पर भरी जेबों का उपयोग करने को सदैव तैयार रहते थे। और जहाँ तक अमेरिकी सिनेट का प्रश्न है वह विशेष अधिकारों की रक्षा का खास गढ़ बन गयी थी। बहुत से सिनेटर या तो अमीर आदमी थे, या सावधानी से चुने हुए मित्र और धनिकों के दूत थे। वे मजदूरों के लिए 'भर पेट भोजन' का प्रभावशाली भाषण दे सकते थे। किन्तु उनका हृदय बड़े स्टाक होल्डर के साथ रहता था।

यदि सिनेटर अथवा कांग्रेस जन को कुछ प्रोत्साहन की आवश्यकता होती तो उसके देने के कई तरीके थे।

इशारों से, सुझावों से, ऋणों से, तथाकथित ऋण जो यथार्थ में भेंट होते थे, और किसी मौके पर सर्वथा गुप्त रिश्वतों से बड़े कारपोरेशनवाले कानून वालों से, चुने हुए अधिकारियों से और यहाँ तक कि न्यायाधीशों से अपने कहे अनुकूल कार्य करवा लेते थे। १९५० के सोवियत प्रचारक हमेशा 'वाल स्ट्रीट के दासों' के बारे में बोलते आये हैं। १९०० में अमेरिका के राज्य शासन में ऐसे

बहुत से अधिकारी सम्मिलित थे जिन्हें मुहावरे की रीति से न सही तो योग्यता की दृष्टि से वाल स्ट्रीट का दास जैसा कहा जा सकता है। उन दिनों सार्वजनिक जीवन में विचरण करना लाखों डालर के फलवाले वृक्ष के समीप जाने के समान था जिसके फल, यदि कोई केवल थोड़ी-सी ही कोशिश उस दिशा में करता, तत्परता से तोड़े जा सकते थे। और यह सुगमता से होता था क्योंकि कोई अधिक चौकसी करने वाला दिखाई न देता था।

३

कोई भी अधिक चौकसी क्यों नहीं कर रहा था ? क्यों बहुत ही कम लोग यह अनुभव करते थे कि अमेरिकी पूँजीवाद की प्रकृति और आचरण उनके लिए उत्कृष्ट महत्त्व की बात थी, और उसमें बड़ी राजनीतिक समस्याएँ निहित थीं, इसलिए उनके राजनीतिक प्रतिनिधियों के व्यवहार और क्रिया का अत्यन्त ध्यान से निरीक्षण किया जाना चाहिये ?

कारण बहुत से हैं। प्रथम तो यह कि, व्यवसायियों के ट्रस्टों का जो अधिक विरोध होता था उसने स्पष्टतया युरोप से लिये हुए समाजवाद के पक्ष की बहस का रूप धारण कर लिया था। वह अमेरिका वासियों को विदेशी जैसा लगता था क्योंकि वे उस विचारधारा से संभवतः सहानुभूति न रखते थे और अपने आपको सर्वहारा समझना नहीं चाहते थे, चाहे उनकी कैसी ही दुर्दशा क्यों न हो। अमेरिका वासियों के मस्तिष्क में इस बात का लगाव न्यूयार्क की लोअर ईस्ट साइड के अजीब से दीखने वाले, विदेशी भाषाभाषी लोगों तथा पड़ोस के उन दूसरे विदेशियों के साथ था जो वहाँ आ बसे थे। भले ही उसमें नाकाबन्दी या खून खराबी की बात शामिल न रही हो, पर व्यापार प्रणाली में आमूलचूल परिवर्तन की बात होने के कारण उस पर क्रांतिकारी होने का संदेह भी किया जाता था।

सबसे मुख्य बात कदाचित यह थी कि बड़े व्यवसाय और कारपोरेशन कानून के अन्दरूनी घेरे के बाहर बहुत ही कम लोग ऐसे थे जो यथार्थ में यह समझते थे कि बड़े-बड़े व्यवसाय कैसे खड़े कर दिये थे और वे कैसे काम करते थे। और वे किस प्रकार राजनीति को चलाने में अपना प्रभाव डालते थे और इसमें

भी कम लोग ऐसे थे जिनको राष्ट्र की औद्योगिक और राजनीतिक क्रियाओं के छिन्नभिन्न किये बिना गम्भीर भय के समय की प्रवृत्ति को कैसे उल्टा जा सकता है। उन्हें इसके धुँधले से ख्याल के सिवाय और कुछ भी ज्ञान न था। सर्व-साधारण की इस ओर उदासीनता इस तथ्य के कारण थी कि बहुत से अमेरिकियों ने आर्थिक मामलों — उद्योग, शिल्पकाल, विज्ञान, व्यापार और वाणिज्य के मामलों को नागरिक की हैसियत से समझना सीखा ही न था।

निश्चित रूप से, नागरिक राष्ट्रपति के चुनाव-संघर्ष से उत्तेजित होते थे और उत्तम व्यक्तियों से बहस कर सकते थे। सामयिक राजनीति का ज्ञान कराने वाले समाचार पत्रों के अग्रलेख और व्यंग चित्र उसका ज्ञान बर्द्धन करने की अपेक्षा पक्षपाती ही अधिक होते थे।

परन्तु एक परिवर्तन आ रहा था और कैसी अजीब बात है कि इस परिवर्तन का अग्रदूत एक अज्ञानी, पागल हत्यारा था। ६ सितम्बर १९०१ को बफेलो में पैन-अमेरिकन के विवरण के समय जोलगोज नामक एक व्यक्ति ने प्रेसीडेन्ट मेक्किनले पर गोली चला दी जिससे उनका प्राणान्त हो गया।

मार्क हन्ना ने न केवल एक प्रिय और सम्भ्रान्त साथी खो दिया था वरन अनिश्चय का वह बादल जो रूज़वेल्ट को उप-राष्ट्रपति-पद के लिए नामज़द करने के समय उन्होंने क्षितिज पर देखा था वह अब आधे आसमान पर छा गया था। उन्होंने एक मित्र से हैरत में कहा — "और अब देखो तो वह घृणित चरवाहे क छोकरा अमेरिका का राष्ट्रपति बना है।"

खंड २ : परिवर्तन का वेग

६
अमेरिकी अन्तःकरण का विद्रोह

जब थ्योडोर रूज़वेल्ट १९०१ के पतझड़ में व्हाइट हाउस में दाखिल हुए तो नये युग के आगमन का कोई चिन्ह और शुभलक्षण दृष्टिगोचर न थे। उन्होंने घोषणा की कि वे भूतपूर्व राष्ट्रपति मेक्किनले की नीति को आगे बढ़ायेंगे और आर्थिक व औद्योगिक अधिकारियों को कोई अनुचित भय नहीं दिखलाया।

कई मास बाद नये युग की ज्वाला ऊपर उठी : फरवरी १९०२ में रूज़वेल्ट के एटार्नी-जनरल ने शरमन एन्टी ट्रस्ट के अन्तर्गत नार्दर्न सिक्योरिटीज़ कम्पनी के विलय का मुकद्दमा पेश किया।

नार्दर्न सिक्योरिटीज कम्पनी एक होल्डिंग कम्पनी थी, जिसको पियरपोन्ट मोर्गन और एडवर्ड एच. हेरीमन ने रेलवे की कुछ सम्पत्ति पर नार्दर्न पेसीफिक के संकट के बाद हुई शांति-सन्धि के फलस्वरूप सम्मिलित अधिकार रखने के लिए स्थापित किया था। यदि वह कानूनी अग्नि-परीक्षा में पूरी उतरी तो उसके बाद वाल स्ट्रीट के कुछ लोग देश की बहुत-सी बड़ी रेलवे लाइनों को खरीद सकते थे। उसे नष्ट करने के हेतु रूज़वेल्ट ने न केवल यह नोटिस दिया कि जब सरकार आर्थिक साम्राज्य बनाने के लिए कम्पनी के साधनों का उपयोग करने देती है तो उसकी कोई सीमा भी है, अपितु उन्होंने महान मोर्गन द्वारा निर्मित एक अमूल्य संस्था पर भी वार कर दिया।

मोर्गन उस समय घर पर भोजन कर रहे थे जब मुकद्दमे की सूचना उन्हें टेलिफोन से प्राप्त हुई। वह निराश और क्रुद्ध हुए। उन्होंने अपने अतिथियों से कहा कि वे रूज़वेल्ट को एक भद्र पुरुष समझते थे, परन्तु सज्जन व्यक्ति मुकद्दमा नहीं चलाते। इसकी अपेक्षा उन्हें निजी तौर पर मोर्गन से नार्दर्न सिक्योरिटीज़ कम्पनी का पुनर्गठन करने या तोड़ देने के लिए कह देते जिससे सरकार की इच्छा पूरी हो जाती।

आगामी कुछ वर्ष तक राष्ट्रपति और उदीयमान धनिकों में समय-समय पर लड़ाई चली पर वह पूरे वेग की न थी। कारण ढूंढ़ने के लिए दूर जाने की

ज़रूरत नहीं। रूज़वेल्ट रिपब्लिकन राष्ट्रपति थे। वह अपनी पार्टी से अधिक दूर नहीं जा सकते थे। दल के सदस्यों में अमीरों और विशेष सुविधा प्राप्त लोगों की भारी संख्या थी और पार्टी को चुनाव के समय उनसे भारी चन्दा लेने की आवश्यकता होती थी। राजनीतिक दृष्टि से रूज़वेल्ट को उनका मित्रवत् रहना चाहिये था जो समय-समय पर उन्हीं के भले के लिए उन्हें सिर्फ अनुशासित कर देते थे। यह बार-बार बतलाया गया है कि इसके बाद आगे रूज़वेल्ट की गुर्राहट उनके काटने की अपेक्षा अधिक बुरी थी, और यह कि उनकी गुर्राहट भी चुनाव के समय आकर प्रकट रूप से नरम पड़ गई और फिर कभी व्हाइट हाउस के साढ़े सात वर्ष के कार्यकाल में ऐसा कोई कार्य नहीं किया जैसा कि उन्होंने नार्दर्न सिक्योरिटीज़ कम्पनी पर आक्रमण करने का किया था और यह कि अनुदार टाफ्ट का शासन जो उनके बाद आया उनकी अपेक्षा शरमन एक्ट के अंतर्गत अभियोग लगाने में अधिक सक्रिय था। यह सब बातें सच हैं किन्तु इसमें रूज़वेल्ट की अमेरिकी इतिहास को भारी देन का उल्लेख नहीं है।

क्योंकि इस क्रियमाण राष्ट्रपति ने सारे देश के सामने व्यवसाय, सरकार और सार्वजनिक हित पर एक ऐसे विचार का प्रचार और प्रदर्शन किया जो बिलकुल नवीन, उत्तेजक और व्यापक था।

इस समय तक धनिकों के प्रभुत्व के विरुद्ध जो चिल्ल-पुकार थी वह उन लोगों की कटु पीड़ा का रुदन थी जिनको कष्ट पहुँचता रहा था। वह विरोध विशेषकर संपन्नों के प्रति निर्धनों का विरोध था। इसके अतिरिक्त अधिकतर वह, यदि, क्रान्तिकारी विरोध नहीं, तो प्रगतिशील अवश्य था। और इस तरह का विरोध करने वाले अपने देश के ही साधन सम्पन्न नागरिक थे, जिन्होंने व्यवसाय के कप्तानों की शक्ति और लालसा का विरोध किया था। वे सज्जन, सद्भावना-पूर्ण कोमल हृदय वाले मंत्रीगण, समाज-सेवक, और भावुक, पर उदारनीति के थे जिन्हें 'शिष्टता की प्रतिमा' कह कर तिरस्कृत किया गया था। परन्तु अब अमेरिका का राष्ट्रपति एक ऐसा व्यक्ति था जो धनिकों की सत्ता का पक्षपाती न था और जो इनमें से किसी के साथ बँधा हुआ न था।

रूज़वेल्ट को असम्पन्न नहीं कहा जा सकता था। उन्हें वाल स्ट्रीट वालों से कभी भी कोई हानि नहीं पहुँची थी। वे यथार्थ में अपने स्वयं के अधिकार के

अंतर्गत धनिक थे। वे प्राचीन कुटुम्ब से संबंधित अमेरिकी थे और सैनिक योद्धा थे। वे सिद्धांतों की उधेड़-बुन करने वाले न थे। और न भावुकता से विचारों में लीन होनेवाले ही थे। वह एक पुरुषार्थी जंगल के निवासी एवं शिकारी थे, रफ राइडर थे, और थे प्रबल जोश वाले पुरुष जो 'परिश्रमी जीवन' का उपदेश देते थे। उनके इर्द-गिर्द की प्रत्येक वस्तु लोकप्रिय* थी। जान मार्ले ने उन्हें 'सेन्ट वाइटस और सेन्ट पाल का 'दिलचस्प संयोग' कहा था और नियाग्रा प्रपात की तरह प्रकृति के एक अचरज की संज्ञा दी थी।

'महान पूंजी के अपराधी' और 'उचित व्यवहार' के संबंध में उनके भाषणों का जोर आर्थिक न होकर नैतिक था। वे 'व्यापारिक संसार' का नैतिक पुन-र्निर्माण करने के इच्छुक थे। उनका एक 'नैतिक स्तर' स्थापित करने में विश्वास था। वे उपदेश देते थे कि व्यावसायिक और राजनीतिक क्षेत्रों में कुछ लोगों का चालाकी से और मक्कारी से दम घोटनेवाला अधिकार प्राप्त कर लेना सीधा-सादा अपराध है जब कि दूसरों को धोका देकर सुअवसर से वंचित रखा जाता था। ये ऐसे भाषण थे जिन्हें हर क्षेत्र के लाखों अमेरिकी, जो सिद्धान्तों के प्रति घृणित भाव रखते थे, आर्थिक कथनों से तंग आ गये थे, परन्तु नैतिक धर्म प्रचार के उत्कृष्ट आदर्शों को ग्रहण करने वाले थे और सबके लिए सुअवसर देने के विचार के पक्षपाती थे, समझते थे और अनुकूल आचरण करने को तैयार थे। थ्योडोर रूजवेल्ट के बनाये कानून की अपेक्षा अमेरिका वासियों पर उनके व्यक्तित्व और उपदेश का प्रभाव अधिक पड़ा। उन्होंने समयानुसार एक तान छेड़ दी थी जो पूरे अमेरिका में गूँज उठी थी।

उसके लिए समय अनुकूल था। कुछ घटना तिथियों पर विचार कीजिये। फरवरी १९०२ में रूजवेल्ट ने नार्दर्न सिक्योरिटीज कम्पनी के विरुद्ध मुकद्दमा दायर किया। मिस ईडा टारबेल पहले से ही स्टेन्डर्ड आयल कम्पनी का इतिहास वर्षों से लिख रही थी और वह नवम्बर १९०२ में मेक्लोर की पत्रिका में निकलने लगा था। उसी पत्रिका में एक महीना पहले अक्तूबर १९०२ में नगर-पालिका के भ्रष्टाचार पर लिंकन स्टीफेन्स का लेख प्रकाशित हुआ था। ये ही दो पत्रकार थे जिन्होंने अमेरिकी पत्रकारिता को एक नयी दिशा दी थी और उनका झुकाव अमेरिकी व्यवसाय में और अमेरिकी राजनीति में यथार्थ में क्या हो रहा

था उसकी विचार-पूर्वक, भावुकता-रहित, खोज-बीन की हुई वास्तविक सूचना देने की ओर था। 'गोल्डेन रूल' बनाने वाले जोन्स १८९७ में टालेडो के सुधारक मेयर चुने गये थे, बड़े राबर्ट ला फुलेर १९०० में विसकांसिन के प्रबल सुधारक गवर्नर नियुक्त हुये थे, १९०१ में टाम ला जानसन क्लीवलेन्ड के मेयर निर्वाचित हुए थे। ये ही लोग सरकार में और नगरपालिका सभा में सुधार करने वालों की सारी पीढ़ी के नेता और अग्रगामी थे। रूज़वेल्ट मुख्य प्रोत्साहक और प्रवक्ता थे। लोग नये दृष्टिकोण से अपने चारों ओर देखते और क्या हो रहता था उसकी छानबीन करने, उसका कुछ तात्कालिक और व्यावहारिक उपाय निश्चित करने की अभिरुचि दिखा रहे थे।

इस तरह से अमेरिकी अन्तःकरण का विद्रोह आरम्भ हुआ। १९१५ तक अमेरिकी मामलों में अति प्रभावशाली घटना व्याप्त थी, जो प्रथम महायुद्ध के बढ़ते हुए ज्वारभाटे में विलीन हो गयी थी और जो अन्तिम रूप से १९२० के लगभग समाप्त हुई। तब भी वह अपने पीछे विचार करने योग्य प्रभाव और चिह्न छोड़ गई जो आज तक चले आ रहे हैं।

२

जैसा कि इतिहासकार हेकर और केन्ड्रिक ने बताया है कि यह विद्रोह एक संगठित आन्दोलन न था बल्कि विश्रृंखलित था। उसका कोई सर्वव्यापक कार्यक्रम न था। जिन्होंने उसमें भाग लिया उसमें सर्वत्र सब श्रेणी के धनी से लेकर निर्धन लोग तक लगे हुए थे, और वे अधिकतर आपस में झगड़ते रहते थे।

मालिकों के बन्धन से मुक्त सीधी निर्वाचित अधिक लोकप्रिय सरकार बनाने के लिए उपाय बतलाने वाले प्रस्तावक भी थे। ये प्रस्तावक सिनेटरों के सीधे चुनाव, आरम्भिक क्रिया और जनमत संग्रह, अदालती निर्णयों का निरीक्षण करने के पक्ष में थे। और थे नगरपालिका द्वारा घरों की सफाई के समर्थक, सभा द्वारा शहरों की शासन व्यवस्था के साथ प्रयोग करने वाले, तथा आय-व्यय के लेखे के विशेषज्ञ। मजदूरों की क्षतिपूर्ति के विधान के लिए लड़नेवाले ऐसे लोग भी थे जो फेक्टरियों में काम करने की स्थिति के लिए अच्छा कानून बनवाने का प्रयत्न कर रहे थे। परम्परा के पक्षपातियों का दल भी था जो राष्ट्र के प्राकृतिक

साधनों, विशेषकर उसके जंगलों को बिना विचारे नष्ट करने को रोकना चाहता था। मताधिकार के लिए संघर्ष करनेवाले, स्त्रियों को मताधिकार दिलाने के पक्षपाती, शुद्ध भोजन और औषधि के लिए कानून बनवाने के लिए लड़नेवाले, "उन्मत्त वित्त" के पता लगानेवाले और ताड़ना देनेवाले व्यक्ति भी थे, और वे पुरुष भी थे जो १६०७ के संकट के बाद उचित केन्द्रीय बैंक व्यवस्था के लिए परिश्रम कर रहे थे।

उसी मूल भावना से ऐसे अन्य विभिन्न लोग भी उत्साहित हुए जिनका कानून से कोई सम्बन्ध न था, कि राष्ट्र को और उसके नागरिकों को सिर्फ थोड़े से विशेष अधिकारवालों के ही नहीं किन्तु सब लोगों के हितों को सुरक्षित रखने के लिए सावधानी करनी चाहिये। इसी समय हल हाउस के जेन आदम्स और हेनरी स्ट्रीट सेटलमेंट के विलियम डी. वाल्ड के पद चिह्नों पर चलते हुये बहुत से नर-नारी सामाजिक सेवा को एक प्रतिष्ठित पेशा बना रहे थे, और पादरी लोग अपने क्षेत्रों में उत्तरोत्तर संस्थारूप में सामाजिक कार्य के लिए सुअवसरों की तलाश कर रहे थे। और यह केवल संयोग ही न था कि इन्हीं वर्षों में लेडीज होम जनरल के सम्पादक एडवर्ड बोक लाखों अमेरिकी स्त्रियों को यह सिखाने का यत्न कर रहे थे कि वे थोड़ी-सी आय में किस प्रकार शोभा युक्त जीवन निर्वाह कर सकती थीं, और उनकी पत्रिका और वृहद् प्रचार की अन्य पत्रिकाएँ विशेषकर सेटरडे इवनिंग पोस्ट विशाल पैमाने पर उत्पादित माल का अपने पाठकों में विज्ञापन कर रहे थे, जो अब तक केवल सम्पन्न व्यक्तियों को ही बेचा जाता था। तभी हेनरी फोर्ड एक मोटरकार बनाना आरम्भ कर रहे थे जो धनिकों का ही खिलौना न होकर सब लोगों के लिए कम खर्च की उपयोगी सेवा होती। इन्हीं वर्षों में विलफोर्ड आई. किंग ने अर्थशास्त्रियों के समक्ष राष्ट्रीय आय का सिद्धान्त रखा।

इन लोगों में समान कुछ न था, पर राष्ट्र का विचार करने में सब एकमत थे। उनकी दृष्टि में राष्ट्र वह स्थान नहीं था जहाँ पर प्रत्येक व्यक्ति दूसरों की दुर्दशा का बिना विचार किये अपने ही मार्ग पर चलता हो, किन्तु एक ऐसा स्थान था जहाँ लोगों का भाग्य एक सूत्र में बँधा था, जहाँ उनका धन एक दूसरे से मिला हुआ था और जहाँ विवेकपूर्ण योजना और विवेकपूर्ण राजनीति सब के

संतोष के लिए नये साधन निकाल सकती थी।

सुधार की छूत अति धनवानों और सबसे अधिक शक्तिशालियों को भी लग गई। हाउस आफ मोर्गन के हेरी डेविसन, पाल एम. वारबर्ग, और अन्य प्रभावशाली बैंकर एक केन्द्रीय बैंक प्रणाली की योजना बनाने की कोशिश कर रहे थे। श्रीमती ओ. एच. पी. बेलमॉन्ट न्यूपोर्ट की सुसज्जित महिलाओं के मताधिकार के हेतु सभाएँ कर रही थीं और निश्चय ही जान डी. राकफेलर, जो अब तक सामान्यतः बिगड़े हुए पूँजीवाद के मुख्य खलनायक समझे जाते थे, अब अपने लाखों डालर हर प्रकार के भले कार्यों में लगा रहे थे।

३

इस विद्रोह के प्रभाव को बढ़ा चढ़ा कर कहने की कोई आवश्यकता नहीं। एक बात यह याद रखनी चाहिए कि संगठित मजदूरों की दशा में यद्यपि धीरे-धीरे सुधार हो रहा था, जिसका संकेत १९१३ में श्रम विभाग के स्थापित हो जाने से और १९१४ में क्लेटन एक्ट के पास हो जाने से मिला था, और जिसने कम से कम सैद्धांतिक रूप से सामूहिक सौदेबाजी को कानूनी करार दे दिया था, तथापि उद्योग के बड़े क्षेत्रों में मजदूर नितान्त असंगठित थे, और दूसरे ऐसे थे जहाँ पर पूँजीपति और मजदूरों के बीच झगड़े ने एक ओर किराये के ठगों सहित अत्याचारियों की और दूसरी ओर क्रान्तिकारियों या हत्यारों अथवा दोनों की लड़ाई का रूप धारण कर लिया था। इस सम्बन्ध में केवल उन झगड़ों को ही याद करना काफी है जो इमारती मजदूरों के संघ और जीना बनाने वाले असंगठित मजदूरों के बीच १९०६ में न्यूयार्क में हुआ था। इस झगड़े में पेच, छड़ और औजार ऊपर की मंजिल से नीचे जीना बनानेवालों के सिर पर इस तरीके से गिराये गये कि कम्पनी को विशेष चौकीदार रखने पड़े, जिसमें से एक की पिटने और बाद को आठवीं मंजिल से पाँचवीं पर फेंके जाने से मृत्यु हो गयी थी।

अथवा, १९०५ में आई. डबल्यू. डबल्यू. के स्थापित होने के दृष्टान्त को ही देखिये। यह इनटरनेशनल वर्क्स आफ दि वर्ल्ड "वाब्लीज" नाम से प्रसिद्ध थी जिसके विधान की भूमिका में कहा गया था, "काम करनेवालों की श्रेणी और काम पर नियुक्त करनेवालों की श्रेणी में कोई समानता नहीं है।" आई. डबल्यू. डबल्यू. के

क्रियात्मक तरीके हमेशा अशान्ति के ही न होते थे, परन्तु १९१२ की लारेन्स की हड़ताल और १९१३ की पेटर्सन की हड़ताल बड़ी हड़तालें थीं जिनका उसके नेताओं ने प्रबन्ध किया था। वे हड़तालें हाल के वर्षों में हुई हड़तालों से अधिक कठोर और क्रूर थीं और उसके प्रमुख नेता निस्सन्देह हृदय से क्रान्तिकारी थे।

इसके अतिरिक्त इन्हीं वर्षों में समाजवादी पार्टी जो अमेरिकी उद्योग के प्रबन्ध में अन्ततोगत्वा पूर्ण परिवर्तन करने के लिए कृतसंकल्प थी बराबर जीतती रही। १९१२ के चुनाव में तो उसके उम्मीदवार युजिन डेब्स को ८,९७,००० वोट मिले।

संक्षेप में, अमेरिका में जो परिवर्तन के इच्छुक थे, उनमें से सभी क्रमशः उन्नति के या वर्तमान व्यापार में साधारण परिवर्तन के हिमायती थे।

न यह भूलना चाहिये कि इन वर्षों में पियरपोंट मार्गन अभी भी वाल स्ट्रीट में उसी प्रभावशाली ढंग से घूमते फिरते थे और जैसे ही उन पर उम्र का तकाजा हुआ वह आर्थिक प्रभाव जो वह अपने प्रभावशाली व्यक्तित्व द्वारा बहुत दिनों तक टालते रहे थे, सुगम कार्यविधि में व्यवस्थापित किया जा चुका था, तथापि वह ब्रोड और वाल स्ट्रीट के कोने में उनके साझीदारों से लेकर बीसियों बड़े बैंक और कारपोरेशनों तक फैल रही थी। जब काँग्रेस की जाँच समिति ने १९१२-१३ में "मनी ट्रस्ट" का अध्ययन किया तो उसने अमेरिकी व्यवसाय के अधिकांश पर वाल स्ट्रीट के "कन्ट्रोल" की रूपरेखा पर प्रकाश डाला। प्रथम राष्ट्रीय बैंक के मासिक 'हाउस आफ मार्गन' नेशनल सिटी बैंक के स्टीलमैन और अन्य धनाधीशों के वास्तविक प्रभाव से कहीं अधिक प्रभाव स्पष्ट खिंचे हुए इन नक्शों में दिखलाया गया था। उसकी रूपरेखा चाहे कैसी ही क्यों न हो, प्रभाव मौजूद था। यहाँ तक कि १९१३ में मार्गन की मृत्यु के बाद भी वह पर्याप्त और विस्तृत रहा।

शताब्दी के आरंभ के वर्षों बाद और इससे भी आगे, स्टेन्डर्ड आयल के सदस्य — सटोरिये स्टाक एक्सचेंज में सरलता से अपने सौदों में लाखों डालर बटोर रहे थे। और न स्टाक और बान्ड के क्रय-विक्रय में अधिक लूटने वाले व्यापारियों की क्रिया में ही कमी होने के कोई प्रत्यक्ष लक्षण दिखाई देते थे। वे व्यापार करने वाली जनता को दायें बायें घुमा रहे थे। आम तौर से वाल

स्ट्रीट के लोगों ने सुधार की प्रगति को निराशा की दृष्टि से देखा। थ्योडोर रूज़वेल्ट और बाद को वुड्रो विल्सन और बुरी स्थिति हो जाने के डर से रूज़वेल्ट के अभियानों में चन्दा देते रहे और गत वर्षों की अपेक्षा अधिक बुद्धिमानी से, किन्तु कम तेज़ी के साथ नहीं, धन और शक्ति का भवन बनाते रहे जिसको सुधारवादी लोग दृढ़ता से खंडित करने प्रयत्न कर रहे थे।

४

फिर भी सुधार लहरें इतने वेग से उठीं कि १९१२ के चुनाव में वे आश्चर्य-जनक ऊँचाई तक पहुँच गईं।

दुबारा चुनाव के लिए खड़े न होने का निर्णय करके चार साल पहले थ्योडोर रूज़वेल्ट ने अपने दयालु गंभीर युद्ध मंत्री विलियम एच. टाफ्ट को रिपब्लिकन उम्मीदवार के रूप में खड़े होने के लिए आशीर्वाद दे दिया था। उन्हें विश्वास था कि टाफ्ट उनकी प्रगतिशील नीति को पूरा करेंगे। परन्तु टाफ्ट सरकारी पद पर पहुँचने के बाद नरम सनातनी निकले। रूज़वेल्ट जंगली जान-वरों का शिकार खेल कर अफ्रीका से वापस लौट आये और निर्दयता से टाफ्ट पर दोषारोपण करने लगे। १९१२ में वह उनके विरुद्ध रिपब्लिकन उम्मीदार के लिए खड़े हुए। उसे प्राप्त करने में असफल होने पर रातों रात अपनी प्रोग्रेसिव पार्टी बना बैठे और चुनाव के लिए खड़े हो गये।

इस बीच डेमोक्रेटों ने संयमी, लम्बे चेहरेवाले कुशाग्रबुद्धि मान एवं चुस्त भूतपूर्व प्रोफेसर वुड्रो विल्सन को नामज़द कर दिया और उनके निर्वाचन के बाद सुधार का काम तीव्र गति से चलने लगा।

पर विल्सन व्हाइट हाउस में केवल डेढ़ वर्ष ही रह पाये थे और नयी स्वाधीनता के कार्यक्रम के प्रस्ताव पर प्रस्ताव काँग्रेस द्वारा स्वीकृत करा रहे थे कि अकस्मात यूरोप में युद्ध छिड़ गया। और ज्यों ही इस प्रथम महायुद्ध का प्रकोप और विस्तार बढ़ा उसके कारण विचारणीय समस्याएँ उभरीं जो अमेरिका रंगभूमि पर ऐसा आधिपत्य जमाने लगीं कि धीरे-धीरे सुधार का जोश ठंडा पड़ गया। वस्तुतः उस समय तक, जब १९१७ में जर्मनी के विरुद्ध अमेरिका ने युद्ध में प्रवेश किया, जेहाद की प्रवृत्ति ने युद्ध को स्वतंत्रता की लड़ाई में परिवर्तित

कर दिया ; अथवा जैसा कि, वुड्रो विल्सन ने कहा, एक ऐसी लड़ाई में बदल दिया जो "प्रजातंत्री प्रणाली के लिए विश्व को सुरक्षित कर देगी।" अधिकतर अमेरिकी नर-नारियों को सच्चा विश्वास था कि यह युद्ध अंतिम होगा, और इसमें विजय विश्व में स्वतंत्रता का नवीन युग लायेगी। इसी लिए, वे युद्ध में धार्मिक आस्था से लड़े।

फिर भी अभियान की भावना उस बैंक जैसी थी जिसकी पूँजी जमा से अधिक निकाली गई हो। युद्ध की समाप्ति के बाद भी यह भावना स्त्री मताधिकार कानून के संशोधन की सम्पुष्टि के लिए बहुत दिनों तक चली। इससे भी अधिक मद्यनिषेध कानून में संशोधन के प्रति सुधारक की उस उत्सुकता की परितुष्टि के लिए चली जो जनवरी १६२० में उक्त कानून लागू होने के समय में चली आ रही थी और जिसके संबंध में प्रत्येक अमेरिकावासी सदैव के लिए पूर्ण मद्यनिषेध की आशा लगा रहा था। किन्तु तब एकाएक राष्ट्र और विश्व के पुनर्निर्माण की भावना जैसे मुर्झा गयी। उस राष्ट्र ने जो लम्बे समय तक आदर्शवादी रहा और उत्तम बलिदान करता रहा, इन सब बातों से मतलब न रखते हुए, मौज-बहार करने का निर्णय किया। यद्यपि बहुत से आदर्शवादी अमेरिकी अभी भी ऐसे थे जो अपने लक्ष्य को त्यागना नहीं चाहते थे, उनको लगा कि वे भी थक गये हैं और साथ ही संख्या में भी कम हैं। अमेरिकी अन्तःकरण का विद्रोह समाप्त हो चुका था।

५

तब भी वह अपने पीछे सदैव परिवर्तनशील अमेरिकी परम्परा में निहित सार्वजनिक समस्याओं के निरीक्षण का — विशेषकर राजनीतिक और आर्थिक समस्याओं के निरीक्षण का, एक तरीका छोड़ गया जो अमेरिकी भविष्य के लिए बड़े महत्त्व का था। यह विचार एक पुराना विचार था परन्तु परीक्षण के बाद सफल निकलने पर अब पुष्ट हो गया कि जब राज्य का जहाज वैसा न चले जैसा कि उसे चलना चाहिए तब किसी को उसे कुछ करके दूसरा जहाज बनाने की जरूरत नहीं केवल उसे ठीकठाक रखने और सुधारने से उसके चलते हुए भी मरम्मत की जा सकती है, बशर्ते जहाज के चालक हमेशा चौकन्ने रहें, देख-

माल रखें और ठोंक पीट करते रहें। और यदि आर्थिक मशीन गलत किस्म का माल पैदा करती हुई मालूम पड़े, तो उसे नष्ट करने की जरूरत नहीं, खाली एक नया कारबरेटर, एक नई बेल्ट या नया स्पार्क प्लग लगाकर ठीक किया जा सकता था और ध्यान से देखभाल करके परीक्षण के बाद बिना किसी आवाज़ के उससे अधिक लाभ का माल तैयार कराया जा सकता है। चक्करों को दबाना और नष्ट करना अनावश्यक है। ऐसा करने से मशीन को गति प्रदान करने वाले हुनर और प्रेरणा के नष्ट हो जाने का खतरा रहता है। डिजायनरों को अपने ड्राइंग बोर्डों पर बिलकुल नये और अपरीक्षित मशीन का नक्शा बनाने के लिए भेजने की कोई जरूरत न है, सिर्फ कुछ देखभाल करने वाले, कुछ इस और उस हिस्से को बनाने के विशेषज्ञ और सब संबंधित व्यक्तियों का मशीन से ठीक काम लेने का संकल्प पर्याप्त है।

पीछे की ओर दृष्टि डाल कर कोई भी यह अनुभव कर सकता है कि उस समय के बहुत से सुधार कितने प्रयोगिक, सामयिक और दूर तक प्रभाव डालने वाले थे जो एक के बाद एक लिए गये थे। व्याजोक्ति से, इस सुधार युग में स्वीकृत समस्त कानूनों में से एक वह था जिसका अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था पर यथार्थ और चिरस्थायी प्रभाव पड़ना निश्चित था; और जिसका इतिहास की बहुत-सी पुस्तकों ने थोड़ा-सा उल्लेख करके छोड़ दिया है। क्योंकि उस पर बहुत ही कम विवाद हुआ था। कुछ इसलिए भी प्रथम बार उसकी टक्कर हल्की-सी जान पड़ी थी। यह था विभाजित आय-कर।

आय पर कर लगाने का कानून तभी बना जब आमतौर से सनातनी समझे जानेवाले राष्ट्रपति टाफ्ट ने काँग्रेस के सामने एक वैधानिक संशोधन प्रस्तुत किया। और वह काँग्रेस ने पास कर दिया तथा राज्यों द्वारा बिना किसी विरोध से सम्पुष्ट कर दिया गया। लोगों ने अनुभव किया कि आय कर लगाने का समय आ गया है। और जब राष्ट्रपति विल्सन के १९१३ के टेरिफ कानून के अनुसार उसे प्रथम बार लागू किया गया तो उसकी दर बहुत कम थी। २० हज़ार डालर तक की शुद्ध आय पर केवल एक प्रतिशत और बड़ा आयवालों से इससे कुछ अधिक आय-कर लिया जाता था। ३ हजार डालर से कम की शुद्ध आय पर कोई भी अविवाहित आय-कर न देता था। ४ हज़ार डालर से कम की

आय पर कोई भी विवाहित पुरुष आय कर न देता था। विश्वास करें या न करें १० हज़ार डालर की शुद्ध आय पर एक विवाहित पुरुष केवल ६० डालर के लगभग आय-कर देता था। वही २० हज़ार की आय पर केवल १६० डालर के लगभग देता था। १६१७ में संघीय सरकार को आय-कर से इतनी ही आमदनी हुई जितनी कि उसको चुङ्गी करों से हुई थी। परन्तु १६२० में वही आय चुङ्गी करों की आय से दस गुनी बढ़ गई। यह तो आयकर के विकास का आरम्भ ही था जो बढ़ती हुई सरकार को एक आर्थिक वृद्धि का प्रधान स्थान ग्रहण कर रहा था तथा अमेरिका में धनराशि के पुनर्विभाजन के साधनों में एक प्रमुख स्थान लेता जा रहा था।

फिर भी इस सुधार युग में अकेला क़ानून या पूरे किये गए अच्छे काम अथवा भावावेश में की हुई मूर्खता पर ही ध्यान करने की आवश्यकता नहीं है। वह तो मूलभूत विचार ही है, जो प्रभावशाली सिद्ध किया और इसी पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए।

बहुत से लोग तब बहस करते थे और आगे भी बहस करते रहे हैं कि अमेरिका में एक से विचार की ऐसी दो पार्टियों के बजाय जिसमें से प्रत्येक मंच पर जीत के लिए विचार ढूंढ़ती फिरे और परीक्षण, प्रोत्साहन अथवा समझौते के लिए अपना मार्ग टटोलने, एक कनजर्वेटिव और एक लिबरल पार्टी, आप चाहें तो रेडिकल कह लीजिए, होनी चाहिए जिसमें हर एक का सुस्पष्ट और तर्कयुक्त कार्यक्रम हो। बहुत से लोग तब बहस करते थे और कुछ आज भी तर्क करते हैं कि पैबन्द लगाकर आर्थिक सुधार करना तर्कसंगत नहीं वह तो कायरता है। आज की आवश्यकता तो व्यवसाय और उद्योग में सम्पूर्ण कायापलट करने के लिए असन्तुष्ट जनता का उठना है। ये दोनों विचारधाराएँ कुछ समय तक जोर पकड़ती रहीं; पर फिर कमजोर हो गयीं।

यह विचारधारा आगे चलकर सफल हुई कि प्रखरता से परिभाषित आर्थिक और सामाजिक वर्गों के अस्तित्व का अमेरिका के प्रजातन्त्री आदर्शवाद के प्रति अपराध की तरह प्रतिकार होना चाहिए। 'सब जनहिताय' के उद्देश्य से मिल जुलकर काम करने से आप अधिक प्रगति कर सकते हैं। और सर्वहारा वर्ग से सुलझने का तरीका उसको दबाना और शैतान करार देना नहीं है, और न

उसकी सहायता कर के उसके मालिकों की पराजय करवा देना है, किन्तु उसे शिक्षा का मौका, उन्नति के सुअवसर, मोटर गाड़ियों की सुविधा और सफ़ाई के यन्त्र तथा इनके साथ ही मध्यम श्रेणी के लोगों जैसे रहन-सहन का पर्याप्त उपदेश और इन सुविधाजनक चीज़ों की अधिकाधिक माँग के लिए प्रोसाहन देना है, जिससे कालान्तर में सर्वहारा वर्ग सर्वहारा ही न बना रह जाय वरन् सुप्रतिष्ठित स्वाभिमानी नागरिकों का समुदाय बन जाय और जिसके सम्बन्ध में यह विश्वास किया जा सके कि राष्ट्र को सुव्यवस्थित रूप से चलाने में मदद करेगा। और, जिस तरह से काम चल रहा है उसमें जब आप कुछ त्रुटि पायें तो उस कार्यविधि का आप परीक्षण करें और आगे बढ़कर उसमें आवश्यक परिवर्तन कर दें तथा इससे अधिक कुछ न करें। मशीन की ठोंकपीट करने से वह बिलकुल बन्द हो जायगी ऐसा सोचनेवाले भूल पर थे। और वे लोग भी गलती पर थे जिन्होंने सोचा कि वे एकदम एक ऐसी नई मशीन का आविष्कार कर सकते हैं जो किसी जगह न खटखटायेगी। अमेरिका के नागरिकों ने तब सहकारी, परीक्षणात्मक और व्यवाहारिक परिवर्तन की उपादेयता को समझा।

एक ऐसा अमेरिका जो बहुत से लोगों को धनिकों के राज्येशासन की तरफ अग्रसर होता हुआ मालूम पड़ता था, अब धीरे-धीरे प्रजातन्त्र के स्वप्न के निकट आ रहा था और वह भी स्वतन्त्र व्यक्ति की राय से अपना पुनर्निर्माण करता हुआ लगता था।

७

वृहत उत्पादन का क्रियात्मक तर्क

१९०३ में डिट्रोइट निवासी ४० वर्षीय हेनरी फोर्ड ने निज का कारखाना खोलने के विचार से छोटी डिट्रोइट आटोमोवाइल कम्पनी से नौकरी छोड़ दी और दौड़ प्रतियोगिता के उपयुक्त एक बड़ी और शक्तिशाली मोटरकार बनायी।

उन्होंने आखिर ऐसा क्यों किया ? उन्हें तेज चाल से कोई अधिक दिलचस्पी न थी, उनका विचार बिलकुल भिन्न था। वे एक छोटी, हल्की और उपयोगी गाड़ी बनाना चाहते थे। दौड़ प्रतियोगिता की कार उन्होंने इसलिए बनायी कि उन्हें पूँजी की आवश्यकता थी और पूँजी को आकर्षित करने के लिए उनके पास यश होना चाहिए था। उन दिनों मोटरगाड़ियों को कीमती खिलौना समझा जाता था जिनमें धनिक लोग धूल भरी सड़कों पर हल्लागुल्ला करते हुए तेजी से निकला करते थे। यश प्राप्त करने के लिए ऐसी कार बनानी थी जो दौड़ में विजयी हो सके।

नयी कार ने बहुत बड़ी सफलता प्राप्त की। फोर्ड को यश मिला। उन्हें फोर्ड मोटर कम्पनी की स्थापना के लिए पर्याप्त पूँजी मिल गई — नकद २८ हजार डालर ; जिसके वे ही उपप्रधान, जनरल मैनेजर, डिजाइनर, मुख्य मिस्त्री और निरीक्षक बने।

आगामी थोड़े ही वर्षों में फोर्ड ने विभिन्न प्रकार की कारें बनायीं और उनके कारखाने का शीघ्रता से विस्तार हुआ। १९०८ में उन्होंने बिलकुल नया 'माडेल' (नमूना) निकाला जिसका उन्होंने 'माडेल टी' नाम रखा। इसके बाद ही उन्होंने एक ऐसा निर्णय कर डाला जिससे उनके साथी विस्मित हो गये। इस घटना का वर्णन उन्होंने इन शब्दों में किया है, "एक दिन १९०९ में प्रातःकाल मैंने बिना किसी अग्रिम सूचना के यह घोषणा कर दी कि भविष्य में हम केवल एक ही माडेल बनायेंगे और वह माडेल 'टी' होगा। सब कारों के चेसिस भी बिलकुल एक से होंगे।"

वह धनिकों के लिए दिखावटी कार नहीं, बल्कि अपने जैसे जनसाधारण के लिए व्यवहारिक सुविधाजनक गाड़ी बनाना चाहते थे। वह उसे हल्की बनाना चाहते थे। और वजन का मन्तव्य शक्ति से है इस प्रचलित विचार को वह जितना नापसंद करते थे उतना और अन्य किसी बात को नहीं। वे उसे कम खर्चीली चाहते थे। जैसा कि बाद में उन्होंने अपनी आत्मकथा में कहा है, "जनता आश्चर्य करेगी कि धन के बदले इतनी सुविधा देना कैसे संभव है ?" उनके ख्याल से वे कारखानेवाले जिनकी निगाह मुनाफे पर ही रहती है, गलती पर

थे, और यह कि बैंकरों का उत्पादकों पर दुष्प्रभाव है, क्योंकि वह माल को सुधारने के बजाय मुनाफा बढ़ाना चाहते थे। फोर्ड की मान्यता थी कि यदि माल और उसकी कीमत ठीक हो तो मुनाफा अपने आप ठीक हो जायेगा। उनको भरोसा था कि यदि उन्होंने एक ही नमूने पर अपना ध्यान केन्द्रित किया तो निर्माण व्यय इतनी जल्द कम हो जायगा कि अनेक साधारण व्यक्ति भी कार खरीदने के लिए उमड़ पड़ेंगे।

जैसे ही 'टी' माडेल की बिक्री बढ़ी, फोर्ड ने जानबूझ कर कीमत गिरा दी। इसके फलस्वरूप बिक्री और अधिक बढ़ी। १९१३ में उन्होंने पहली बार असेम्बली लाइन बैठायी और १९१४ के आरम्भ तक उनके कारखाने में असेम्बली लाइन के सिद्धांत पर पूरी गाड़ी फिट होने लगी। प्रत्येक कारीगर अकेला एक ही कार्य करता। मोटरगाड़ी का प्रत्येक हिस्सा बिजली द्वारा संचालित मंच पर जाकर कारीगरों के पास से निकलता। कारीगर यथा स्थान उसका नियत पुरजा जमा देता। विभिन्न असेम्बली लाइनें मुख्य मंच से मिलती थीं जहाँ से चेसिस पूरा होकर निकलता।

सिद्धांततः यह तरीका कोई नया न था; फिर भी फोर्ड द्वारा स्थापित असेम्बली लाइनें एतत्सम्बन्धी विचारों के पूर्ण प्रयोग का अद्भुत नमूना थीं।

जनवरी १९१४ में फोर्ड की उत्पादन-व्यवस्था पूरी हो गई। तभी उन्होंने एक ऐसी घोषणा की जो दुनिया भर में गूँज उठी।

मोटरगाड़ी के कारखानों में उस समय नौ घंटे प्रतिदिन काम करने की प्रचलित मज़दूरी औसतन करीब २.४० डालर थी। फोर्ड ने अपने कारीगरों को ८ घंटे प्रतिदिन काम करने की कम से कम मज़दूरी ५½ डालर देने की घोषणा की।

अपनी इस घोषणा की सफाई में उन्होंने कहा कि वह अपने कारीगरों को साल के अन्त में बोनस देते रहे हैं और अब जब कि उनका मुनाफ़ा बढ़ा है उन्होंने सोचा कि मुनाफ़े का हिसा प्रतिदिन के वेतन के साथ मिलाकर दे दिया जाय। इस समय मज़दूरों में भारी असंतोष था और फोर्ड का खयाल था कि उनके इस कदम से मज़दूरों का असंतोष मिट जायगा। वह यह भी अनुभव करते थे कि यदि अमेरिकनों को ज्यादा वेतन मिलने लगेगा, तो औद्योगिक माल की माँग बढ़ेगी, जिसमें फोर्ड की मोटरगाड़ियाँ भी शामिल हैं।

फोर्ड ने अपने कौशल से कीमतें कम कर और मजदूरी बढ़ाकर आधुनिक उद्योगवाद के महान सिद्धान्तों, अर्थात् वृहत् उत्पादन के क्रियात्मक तर्क का प्रतिपादन किया। सिद्धांत यह है कि माल का उत्पादन जितना बढ़ता जाता है निर्माण व्यय उतना ही कम होता जाता है, और लोग जितने अधिक सम्पन्न होंगे उनको क्रय शक्ति भी उतनी ही बढ़ेगी। और, तभी स्वल्प व्यय में इतने बड़े पैमाने पर उत्पादन संभव हो सकेगा।

१९०९-१० में कीमत प्रतिकार ९५० डालर थी। यह मूल्य घटकर क्रमशः ७८० डालर, ६९०, ६००, ५५०, ४९०, ४४० और ३६० डालर तक चली आई। तदुपरान्त प्रथम महायुद्ध जनित अभाव और तेजी के कारण मूल्य बढ़ जाने के बाद पुनः गिरा और १९२४ में तो फोर्ड कार (सेल्फ स्टार्टर रहित) की कीमत केवल २९० डालर थी। इधर कार का उत्पादन १८,६६४ से बढ़कर १९२०-२१ तक १२,५०,००० पर आ गया।

फोर्ड १९२७ तक बेरोक उक्त सिद्धान्त का पालन करते रहे। लेकिन उनके सामने दो ऐसी बातें आईं जिन्होंने आगे ऐसा करने से उन्हें रोक दिया। एक तो यह कि ग्राहक न केवल सस्ती कार चाहता है बल्कि अच्छी भी। इधर उनके प्रतिस्पर्धी उत्पादकों ने यह बात मालूम कर ली थी कि यदि हर साल नया और उन्नत माडेल बनाया जाय तो पुरानी कारों का प्रयोग रुक जायगा और इस तरह पुराने ग्राहक नये ग्राहक बनाये जा सकेंगे। दूसरी बात यह कि नयी और आधुनिक गाड़ियों की लालसा के कारण दूसरे, तीसरे और चौथे आदमी द्वारा इस्तेमाल की हुई गाड़ियों की घटी दरों पर अच्छी माँग हो रही थी और इस तरह बाजार में 'टी' माडेल की गाड़ी का एकाधिकार नहीं रह गया था।

२

बीसवीं शताब्दी के पहले २० वर्षों में अमेरिका की स्फूर्तिपूर्ण औद्योगिक उन्नति का फोर्ड द्वारा किया गया महान प्रयोग एक अंश मात्र है। समय के साथ उद्योग और व्यवसाय बढ़ते गये और उनमें परिवर्तन होता गया।

रेलवे उद्योग के विकास का यह स्वर्णिम युग था। रेलवे लाइनों का जाल अब वस्तुतः पूरा हो गया था। एतत्सम्बन्धी काम-काज में बेहद बढ़ोतरी हुई।

रहा था। और, यह उद्योग की दुनिया में एक निश्चित मानदंड प्रतीत होता है। प्रथम चरण तो अनेक प्रकार की प्रतियोगिताओं का था। शताब्दी के प्रथम २० वर्षों में कारीगरी में दिलचस्पी लेने वाले सैकड़ों लोग पूँजी बटोरने लगे थे और उन्होंने कार बनाने की छोटी-छोटी फैक्टरियाँ स्थापित कर ली थीं।

और इसी क्रम में विकास का दूसरा चरण भी आरम्भ हो गया। जिनके पास पूँजी अथवा शेयर बेचने की प्रखर कला थी वे उदीयमान मोटर-कम्पनियाँ खरीदने के प्रयास में लगे थे। इस उद्देश्य से कि उन्हें बड़े-बड़े संगठनों में मिलाया जा सके। १९०८ में जब फोर्ड माडेल 'टी' बना रहे थे, विलियम सी. ड्यूरेंट ने ब्यूक कम्पनी, ओल्ड्स कम्पनी और कुछ अन्य कम्पनियों को न्यू जर्सी की एक होल्डिंग कम्पनी के सुपुर्द कर दिया और उसका नाम जनरल मोटर्स रख दिया। कम्पनी ने मोटर व्यवसाय के विकास के तीसरे चरण में एक बृहतकाय कम्पनी का रूप धारण कर लिया। विकास के इस तीसरे चरण में थोड़े-से प्रतिद्वन्द्वी और बहुत बड़े कारखाने के अतिरिक्त प्रतियोगिता नाम की कोई चीज़ न रह गई।

इधर वही मोटर उद्योगपति दो अन्य चीज़ें तैयार कर रहे थे जो लाखों लोगों की आजीविका पर असर डालने वाली थीं। यह दो चीजें थीं मोटर ट्रक, जो रेलों का प्रबल प्रतिद्वन्द्वी सिद्ध होने वाला था और ट्रेक्टर। १९०२ के आस-पास आरम्भिक किस्म के भद्दे ट्रेक्टर बनाये गये थे। १९१० तक उनका वार्षिक उत्पादन ४,००० तक पहुँच गया। १९२० तक तो वह २००००० से भी आगे निकल गया। अमेरिकन फार्मों में मशीनों का उपयोग और घास के मैदानों में गेहूँ की खेती का काम बड़ी तीव्रगति से आगे बढ़ रहा था। इतने विभिन्न और उत्तेजक इस विकास और परिवर्तन-क्रम को एक उदीयमान सिद्धांत से बड़ा प्रोत्साहन मिला — यह सिद्धांत था सार्वजनिक विज्ञापन का।

इस सिद्धान्त के सम्बन्ध में एक बात और बता देना अप्रासंगिक न होगा। वह यह कि इसे प्रथम महायुद्ध से ज़बरदस्त प्रोत्साहन मिला। उस युद्ध के समय — वैसे ही द्वितीय महायुद्ध काल में निर्माताओं के सामने बड़ी-बड़ी माँगें आयीं। वह माँग ज़्यादा-से-ज़्यादा बन्दूकें, गोले और जहाज यथाशीघ्र तैयार करने की थीं। बाज़ार में माल भर जायेगा इसकी चिन्ता करने की आवश्यकता न थी। मूल्य के बारे में भी चिन्ता की कोई बात न थी। उस समय तो केवल यही देखना

था कि माल कितना अधिक और कितनी जल्द बन सकता है। इसके परिणाम-स्वरूप लोग माल बनाते-बनाते बेदम हो गये। विशाल उत्पादन हुआ। और संयोग से टैकों की बातचीत करने वाले माध्यम के अभाव में इतना भारी फायदा हुआ कि जब १९३० में जनता के सामने आँकड़े रखे गये तो बहुत से लोगों की यह दिलचस्प धारणा बन गयी कि यदि हथियार बनाने वाले मुनाफाखोर नहीं होते तो युद्ध कभी होते ही नहीं।

३

इन्हीं वर्षों में भावी उद्योगों का बीजारोपण हो रहा था।

ब्यूमौंट (टेक्सास) के समीप स्पिंडल टाप पर एंथनी एफ. लूक्स ने १० जनवरी १९०१ को तेल का पता लगाया। इस तरह से दक्षिण-पश्चिम के लिए एक नये युग का आरम्भ हो गया। और इस बात का आश्वासन मिला कि मोटर-गाड़ियों का व्यवसाय जो अभी अपने निर्बल बचपने में था बड़ा होने पर प्रचुर शक्ति का साधन बनेगा।

नार्थ केरोलीना के किनारे पर किटीहाक की रेती के ऊपर १७ दिसम्बर १९०३ को आरविल राइट ने एक हवाई जहाज में, जिसको वह बड़ी मेहनत से बना पाये थे, १२ सैकंड की उड़ान की और बाद में उनके भाई विलवर ने ५९ सैकंड की। कई साल गुजर गये पर जनता यह न समझ सकी कि राइट भाई क्या कर रहे हैं? राइट की पहली उड़ान के लगभग साढ़े ४ वर्ष बाद, मई १९०८, अनुभवी संवाददाता उनके कार्य को देखने के लिए भेजे गये। अनुभवी संपादकों ने इन संवाददाताओं की आश्चर्यजनक सूचनाओं पर पूरा विश्वास किया और अन्त-तोगत्वा दुनिया को यह बात मालूम हो गई कि मनुष्य सफलतापूर्वक उड़ सकता है। इस बीच राइट् भाई बार-बार उड़े थे और उनकी सबसे लम्बी उड़ान ३८ मिनट की थी। महान विमान यातायात उद्योग का बीजारोपण १९०३ में हुआ और काफी विलम्ब से १९०८ में वह अंकुरित हुआ।

बेतार के तार का आविष्कार १८९५ में इटली निवासी मारकोनी ने किया। परन्तु उसकी भावी उपादेयता १९०० तक समझ में न आ सकी थी। उसी वर्ष रेजिनाल्ड ए. फेसिडेंन ने बिना तार के अपना भाषण प्रसारित किया।

१६०४ में सर जान एम्ब्रोस फ्लेमिंग ने रेडियो की लहर पकड़ने वाला यंत्र अर्थात् फ्लेमिंग बाल्व बनाया। १६०७ में डाक्टर लीड ए. फारेस्ट ने सुनने का यंत्र बनाया। १६१२ में एडविन एच. आर्म्सस्ट्रांग ने बिजली उत्पादन करने वाली शक्ति की खोज की, जिससे रेडियो में पैदा होने वाली कमज़ोर लहरों को शक्तिशाली और कई गुना बड़ा किया जा सकता था। लेकिन इन सब चमत्कारों पर लोगों का ध्यान उतना न गया। १६१५ में मारकोनी वायरलैस टेलिग्राफ कंपनी के सहायक ट्रैफिक मैनेजर डेविड सारनोफ ने 'रेडियो के गाने के यंत्र' का प्रस्ताव किया और भविष्य में व्यापक प्रसार की संभावनाओं को लोगों के सामने रखा, पर उनकी बात किसी ने न सुनी। फिर भी इसी क्रम में रेडियो और टेलिविजन उद्योग के बीज बोये जा चुके थे।

१६०३ में पहला चलचित्र बना जिसमें, 'दि ग्रेट ट्रेन राबरी' की कहानी का चित्रण किया गया था। लगभग १६०५ में प्रथम अधूरा सिनेमाघर बना। यह सिनेमाघर बहुधा खाली स्टोरों में बनाये जाते थे। सिनेमा उद्योग शनैः-शनैः महत्ता प्राप्त करता गया।

१६०६ में लिओ एच. बेकलैंड ने रसायन से बनी हुई एक धातु प्रथम बार बाज़ार में रखी, जिसको वे बैकेलाइट कहते थे। वह पहला ही प्लास्टिक पदार्थ न था — यह सम्मान तो बहुत पहले कचकरा (सेल्यूलॉइड) को मिल चुका था; परन्तु उसे ही इस उद्योग का आदि रूप कहना अधिक उपयुक्त होगा। उसी ने प्लास्टिक उद्योग का जन्म दिया। १६२० में पहले नकली रेशम के नाम से विख्यात वस्तु ने रेयन का रूप धारण किया। इस रेयन ने २०वीं शताब्दी में प्रतिपादित सर्वाधिक मुख्य सिद्धांत के निरूपण को बड़ा प्रश्रय दिया। वह सिद्धांत यह है कि मनुष्य अपनी मर्जी के अनुसार चीजें बना सकता है — केवल रासायनिक पदार्थों से बनी हुई प्राकृतिक चीजों की नकलें नहीं, बल्कि बहुधा प्राकृतिक चीजों से भी अधिक अच्छी। बाद के नाइलोन के चमत्कार पर गौर करने से यह बात स्पष्ट हो जायगी।

आज के अमेरिका को समझने के लिए यह जानना आवश्यक है कि अमेरिकी अन्तःकरण का विद्रोह उसके विकास के लिए कितना महत्त्वपूर्ण था; जिसने अमेरिकनों के मस्तिष्क में यह विचार जगा दिया कि हम देश के आर्थिक और

राजनीतिक तंत्र में ऐसा हेरफेर कर सकते हैं जिससे मशीन बिना रुके जन-साधारण के लिए अधिक अच्छा काम कर सकेगी। इसके साथ हमें यह भी समझना होगा कि अमेरिकी अन्तःकरण का यह विद्रोह सम्पत्ति को बढ़ाने की अपेक्षा उसका केवल पुनर्वितरण कर देता, यदि यह मशीन चलती न रहती और लोग उसकी ठोक-पीट न करते रहते। इससे "वृहत उत्पादन का क्रियात्मक तर्क भी सिद्ध हो गया और आशापूर्ण भविष्य में बहुत अरसे के लिए नयी-नयी चीज़ों के आविष्कार का मार्ग भी प्रशस्त हो गया।

८

मोटरयुगीन क्रांति

१९०६ में वुड्रो विलसन ने जो उस समय प्रिंसटन विश्वविद्यालय के अध्यक्ष थे, कहा था, "इस देश में समाजवादी भावना को जितना मोटरगाड़ी ने फैलाया है, उतना और किसी ने नहीं। इसने धन के मद का चित्र उपस्थित कर दिया है।" लगभग २० वर्ष बाद मंसी और इण्डियाना की दो औरतों ने, जो थोड़ी आय पर निर्वाह कर रही थीं, जो विचार प्रकट किए वे बड़े अर्थपूर्ण हैं। उस समय अमेरिकी बस्ती मिडिलटाउन की सामाजिक स्थिति के सम्बन्ध में आँकड़े एकत्र किए जा रहे थे। उन दोनों स्त्रियों में से एक नौ बच्चों की माँ थी। उसने कहा, "हम कपड़े के बिना काम चला लेंगे, पर कार न छोड़ेंगे।" दूसरी ने कहा, "मैं भूखी रह लूंगी पर कार हाथ से जाने न दूँगी।" दूसरी जगह जब एक महिला से कहा गया कि आपके पास मोटर तो है पर बाथटब नहीं, तब उसने कहा, "आखिर बाथटब में बैठकर तो हम घूमने-फिरने जा नहीं सकते।" इस महिला के शब्दों में भी मोटरयुगीन क्रांति का शायद वही स्वर बोल रहा था।

मोटरकार कुछ लोगों के लिए विलास की वस्तु और बहुतों के लिए आव-

श्यक चीज बन गई। पिछली अर्द्धशताब्दी में इसने अमेरिकी समाज के आचार-विचार और लोगों की जीवन-शैली में महान परिवर्तन ला दिया। लेकिन यह सब एकाएक नहीं हुआ। ऐसा हो भी नहीं सकता था। क्योंकि यह तीन बातों पर निर्भर था। प्रथम तो यह कि गाड़ी विश्वसनीय और काबू में रहनेवाली हो और उस पर अधिक खर्च भी न बैठे। दूसरी, सड़कें अच्छी हों और तीसरी, गैरेज और पेट्रोल स्टेशन पर्याप्त संख्या में होना जरूरी था। और यह तीनों ही बातें धीरे-धीरे ही संभव हो सकती थीं। १९०६ में गाँव की कच्ची सड़कों के किनारे पेट्रोल की टंकी चलानेवाले का शीघ्र दिवाला पिट जाना अनिवार्य था। १९२०--२९ में परिवर्तन की लहर प्रतिवर्ष स्पष्ट से स्पष्टतर होती गई।

फोर्ड ने कीमतों में जो कमी की उससे मोटरगाड़ी की लोकप्रियता में तो मदद मिली ही परन्तु इसका श्रेय गाड़ी में महत्त्वपूर्ण सुधारों, जैसे सेल्फ स्टार्टर, उतरनेवाले पहिए, कार्ड टायर आदि को भी कुछ कम नहीं। सब से बड़ी विशेषता बन्द गाड़ियों के निर्माण के रूप में सामने आई।

इन सारे विकासों का परिणाम यह हुआ कि अनगिनत लोग जिनके लिये कुछ साल पहले मोटरगाड़ी रखने की बात कल्पनातीत थी, गाड़ी खरीदने को आगे बढ़े। १९१५ में अमेरिका में २५ लाख से भी कम मोटरवाहनों की रजिस्ट्री हुई थी। १९२० तक ९० लाख से ऊपर। १९२५ तक २ करोड़ के लगभग और १९३० में २ करोड़ ६५ लाख से भी अधिक मोटरगाड़ियों की रजिस्ट्री हुई।

इस तरह १९१८ और १९६० के बीच अमेरिकावासियों को नई-नई चीजें देखने को मिली, जो अब बिलकुल सामान्य बातें बन गयी हैं। स्वचालित ट्रैफिक सिगनल, घुमावदार ऊँचे किनारेवाली कंकरीट की सड़कें, पेड़ों की छाँह के निकलते रास्ते, एक तरफा गलियाँ, सरकारी नम्बर पड़े हुए राजपथ, यात्रियों के विश्राम-गृह, पर्यटकों के लिए कमरे, और आम रास्तों के किनारे पर कतारों में लगे हुए यातायात साधनों तथा व्यापारियों की दूकानों को देखकर ही बेंटनमैकाए और लेबिस ममफोर्ड ने उसे "सड़कोंवाला क़स्बा" की संज्ञा दी थी। सड़कों के किनारे भोजनगृह, अंडे, फल और शाक की दूकानें, तेल-पानी के स्टेशन और अनेक व्यवहृत मोटरगाड़ियों का ताँता दिखाई देता। इसके साथ-साथ नवनिर्मित

ईस्ट क्षेत्र के कोलाहलपूर्ण वातावरण एवं भीड़भाड़ को समाप्त करने का उपाय किया जा रहा था। न्यूयार्क में वेस्ट चेस्टर काउण्टी के अधिकारी एक पीढ़ी तक ब्रौंक्स नदी की गंदी हालत और उसमें बाढ़ आ जाने के भय से व्याकुल हो उठे और वे उस नदी में पानी के बहाव को नियन्त्रित करने तथा रोकने की योजना बना रहे थे। वे उसके किनारे-किनारे उद्यानों से सुसज्जित मोटर याता-यात योग्य लम्बी और पक्की सड़क निकालना चाहते थे। १९२५ में जब यह सड़क जनता के लिए खोल दी गई तो मोटरवालों और ट्राफिक संचालकों ने अपनी इच्छा बलवती होते देखी। एक राजमार्ग, जिस पर थोड़ी-थोड़ी दूरी पर यातायात की सुविधा के लिए गलियाँ निकली हुई थीं, ऐसे राजमार्ग पर समय का सदुपयोग हो सकता था। वेस्ट चेस्टरकाउण्टी में और अन्य जगहों पर चौड़े और सीधे उद्यान-पथ (मोटर खड़ी करने के स्थान) उसके ऊपर बनाए गए थे। रास्ते में क़स्बों में गुजरती हुई चौड़ी सड़कों का पुनरुद्धार किया गया था। इन्हीं सब परिवर्तनों से प्रेरित होकर अगस्त १९२१ में मैकाए और ममफोर्ड ने हार्पर पत्रिका में लिखा कि अन्ततोगत्वा यह बात मान ली गई कि मोटरकार पारिवारिक वाहन मात्र न होकर रेलगाड़ी बन गई है। उन्होंने भविष्यवाणी की कि एक ऐसा समय भी आयेगा, जब मोटरवाले क़स्बारहित सार्वजनिक चौड़ी सड़क पर तेज़ी से गुजर सकेंगे। तब वे अधिक सुगमता और सुरक्षापूर्वक ६० मील प्रति घण्टे की रफ्तार से अपनी गाड़ी भगा सकेंगे।

१९३१ तक वह दिन नहीं आया था। अभी न तो 'मेरिट पार्क वे' बना था और न 'पेनसिलवेनिया टर्न पाइक' ही। न तो तितली जैसी रंगबिरंगी क्यारियाँ छाँटी गई थीं और न लास एंजिल्स की 'कहूंगा पास' की तरह भिन्न यातायात के भिन्न मार्ग निर्धारित किये गये थे। मोटर बसों का उपयोग बढ़ गया था परन्तु ठेलों की लाइनें उखाड़ने का काम अभी आरम्भ ही हुआ था। मोटर ट्रक पहले से ही माल ढोने के व्यवसाय को रेलों से छीन रही थी। परन्तु हमारे बड़े-बड़े नगरों के बीच सारी रात ट्रकों, ट्रेक्टरों आदि के कोलाहलपूर्ण यातायात का युग अभी दूर था। हमारी राष्ट्रीय सक्रियता का पूर्ण प्रतीक निवास योग्य ट्रेलर अभी प्रयोग में आने ही लगा था। छुट्टियों में उपयोग के लिए १९२९ में जीवशास्त्रियों ने ऐसा पहला ट्रेलर बनाया था। परन्तु यह गतिशील घर १९३० के मध्य तक

व्यापक उपयोग में नहीं आया था। तब भी मोटर-वाहन युग का आदर्श स्थापित किया जा चुका था।

२

सामाजिक रीति-रिवाजों पर व्यापक प्रभाव डाले बिना लोगों की आदतों में ऐसा आश्चर्यजनक परिवर्तन न हो सकता था। आइए, यहाँ हम उनमें से कुछ पर दृष्टिपात करें।

(१) उपनगरीय क्षेत्रों में मोटरों की पहुँच हो गई थी। पहले लोग शहर के बाहरी हिस्सों को रेल द्वारा ही जा सकते थे; परन्तु यह सुविधा भी बड़ी सीमित थी, क्योंकि किसी कस्बे अथवा गाँव से रेलवे स्टेशन एक मील से कम दूर न होता था। इस कारण स्टेशन पहुँचना कठिन था। लेकिन इस स्थिति में आश्चर्यजनक गति से परिवर्तन हुआ। लोगों ने ज़मीन के बड़े-बड़े टुकड़े खरीद लिये और वहाँ पर नये कस्बे बसा दिये, जहाँ बच्चों को खुली हवा, रोशनी तथा खेलने-कूदने के लिए पर्याप्त स्थान उपलब्ध थे। वहाँ उनके माता-पिता को स्थानीय स्कूल के बोर्ड की नीति पर निरन्तर वाद-विवाद करने का मौका मिलता और गृहणी अपने बच्चों के स्कूल पहुँचाने और गृहस्थी के कार्य शुरू करने के पहले ७ बज कर ५२ मिनट पर काफी पीकर अपने पति को ८ बज कर ३ मिनट पर जाने वाली गाड़ी पकड़ने को मोटर द्वारा स्टेशन छोड़ आया करती।

उस बाहरी इलाके में भी जहाँ रेल द्वारा पहले नहीं पहुँचा जा सकता था, कुछ थोड़े-से हेरफेर के साथ वही परिवर्तन हुआ। कुटुम्ब का अभिवाहक अपने देहात स्थित घर से अपने काम के स्थान तक का सारा रास्ता मोटर द्वारा तय करता। शहर में गाड़ी खड़ी करने की समस्या उसके सामने थी। जिन लोगों की आजीविका शहर की नौकरी पर निर्भर थी वे हरेभरे नजदीकी देहाती इलाकों को जाने लगे। तब नगर नियोजकों का ध्यान शहर के इर्दगिर्द के गन्दे इलाकों पर गया जहाँ ज़मीन की कीमतें गिर रही थीं और जहाँ विनाश के लक्षण प्रकट होने लगे थे।

(२) मोटर-वाहन के युग ने अन्य परिवर्तन भी किये। रेलवे स्टेशनों के निकटस्थ व्यावसायिक तथा आर्थिक और सामाजिक महत्त्व के कस्बे अन्यत्र भी बसने

लगे। रेलवे स्टेशन से चार मील की दूरी पर अवस्थित कम उपजाऊ फार्मों के निकटवर्ती कस्बे रेलवे स्टेशनों से २० या ५० मील दूर अधिक उपजाऊ फार्मों के निकट जा बसे। इसी प्रकार छोटे-छोटे नगरों के केन्द्र में आबाद व्यावसायिक तथा आर्थिक एवं सामाजिक महत्त्व के क्षेत्र नगरों के बाहरी इलाकों में आबाद होने लगे।

"मैन स्ट्रीट" पर स्थित होटल को, जो पहले व्यापारियों के ठहरने का एक-मात्र स्थान था, ८४ नम्बर हाइवे पर स्थित पर्यटक शिविर ने चौपट कर दिया। कुछ समय बाद वह पर्यटक शिविर नये प्रकार के होटल के रूप में परिवर्तित हो गया। इसमें यात्रियों को एकान्त और कभी-कभी अतिरिक्त आरामदेह कमरा उपलब्ध था। इस होटल को रेस्टरां अथवा अन्य सार्वजनिक कमरे रखने का बोझ उठाना नहीं पड़ता था। "मैन स्ट्रीट" की दूकानों को कस्बे के किनारे स्थापित स्टोरों की नयी शृङ्खला ने चौपट कर दिया। इन स्टोरों के पास गाड़ी खड़ी करने के लिए पर्याप्त स्थान था। शहर के स्टोर मालिकों को जब स्थिति की विषमता मालूम हुई तो उन्होंने कस्बे के बाहर का व्यापार अपने हाथ में लेने के लिए शहर के बाहरी हिस्सों में अपनी शाखाएँ खोल दीं। और शताब्दी के मध्य तक दुकानदारी के केन्द्रों का विकास खुले हुए देहात में आरम्भ हो गया, जहाँ पर मोटर गाड़ी खड़ी करने के लिए पर्याप्त स्थान उपलब्ध था।

ग्रीष्मकालीन होटलों का व्यवसाय ठप्प हो गया। अब अनेक लोग आसानी से एक होटल से दूसरे होटल को जा सकते थे अथवा देहात में अपना छोटा-सा घर खड़ा कर सकते थे जहाँ वे न केवल गर्मी का समय बिता सकते थे बल्कि वर्ष के दूसरे समय में भी साप्ताहिक छुट्टियों का उपभोग सपरिवार कर सकते थे। परिवार के लोगों और उनके सामान को उनकी मोटर गाड़ी वहाँ पहुँचा देती थी।

केवल १९२०-३० की अवधि में रेल द्वारा लोगों का आना जाना आधा हो गया। केवल व्यापारी लोग रेल का उपयोग कर रहे थे। (न्यूयार्क के बाहरी हिस्से में आगामी २० वर्षों में रेल द्वारा व्यापारियों का भी आना जाना कम हो गया।) नये-नये रास्ते, पुल और मनहट्टन तक सुरंगें बन जाने से मोटर बस और निजी कार में चलने वालों की संख्या बढ़ गई।

(३) मोटर-वाहन के युग ने कार खड़ी करने के स्थान की समस्या को हमेशा

के लिए उपस्थित कर दिया। यह समस्या बराबर सुलझती और फिर उलझती रही। १९२० के आरम्भ काल में जो व्यापारी पहले अपनी कार को रेलवे स्टेशन के बाहरी स्थानों पर छोड़ देते थे, बाद में स्टेशन के किनारे तक, जहाँ तक पहुँच हो सकती थी, मोटर खड़ी करने लगे। उन्हें कार खड़ी करने के लिए और अधिक स्थान की आवश्यकता हुई। और यह आवश्यकता क्रमशः बढ़ती ही चली गई। जितना अधिक स्थान उपलब्ध होता उतने ही अधिक लोग उसे इस्तेमाल करना चाहते। वृक्षों की छाया से ढँके नये प्रशस्त रास्तों, चौड़ी सड़कों और पार्क ने बड़े शहर के प्रवेश स्थल पर की भीड़भाड़ कम कर दी जिससे अधिकाधिक गाड़ियों को शहर के भीतरी हिस्से में पहुँचने की सुविधा मिली। और, मध्य शताब्दी में "मैं कार कहाँ खड़ी करूँ" यह मनहूस प्रश्न उतना ही जटिल हो गया जितना वह मोटरगाड़ी के चालू होने के समय कभी था।

(४) यह नई व्यवस्था अचानक मृत्यु का संदेश लेकर आयी। १९२०-२९ में अमेरिका में मोटरों से कुचल कर मरनेवालों की संख्या, १९२२ में १५ हजार से लेकर १९३० में ३२ हजार से ऊपर पहुँच गयी। और १८ वर्ष बाद १९४८ में यह संख्या १९३० के अंकों के लगभग बिलकुल बराबर रही। कारें शक्तिशाली बनती गयीं, सड़कें सीधी और चिकनी। और, गाड़ी की रफ्तार भी बढ़ी। फलस्वरूप सड़क-दुर्घटनाओं में वृद्धि हुई। इस भयावह मृत्यु संख्या को देखते हुए ड्राइवरों को काफी देखभाल कर लाइसेंस देने, कारों का निरीक्षण करने, सड़कों पर चेतावनी के चिन्हों की बढ़ोत्तरी करने का अभियान चला और, दुर्घटनाओं के कारण का और उनके रोकने के उपायों की खोजबीन होने लगी। 'नेशनल सेफ्टी कौंसिल' और 'आटोमोटिव सेफ्टी कौंसिल' जैसी संगठित संस्थाओं ने इस कार्य को विशेष रूप से अपने ऊपर लिया। तथापि अर्द्धशताब्दि के अन्त तक कोई भी व्यक्ति तह भविष्यवाणी कर सकता था कि सप्ताहान्त की छुट्टी सैकड़ों पुरुषों, स्त्रियों और बच्चों को जीवन-लीला अचानक समाप्त कर देगी।

(५) टेलिफोन, रेडियो और बातचीत करने के अन्य साधनों के साथ मोटर वाहन की क्रांन्ति ने किसानों का एकाकीपन समाप्त कर दिया। १९०० में रे स्टेनार्ड बेकर ने मिड वेस्ट के किसानों की खुशहाली का जिक्र करते हुए कहा था कि यदि किसान धनिक होता तो सबसे पहले वह अपने खलियान को रंग डालता। फिर

अपने घर में ड्योढ़ी लगाता, फिर प्यानो खरीदता और अपने बच्चों को कालेज भेजता। १६२०-२६ के मध्य तक खलिहान रंगने से पहले वह संभवतः कार खरीदने की बात सोचता और नया प्यानो तो विरले ही खरीदता। ट्रैक्टर का विस्तृत उपयोग खेतों की उपज बढ़ा रहा था और बहुत-सी वैज्ञानिक सूचनाओं की मदद से, जो कृषि विभाग द्वारा नियुक्त काउन्टी एजेन्टों से या प्रकाशित पुस्तकों से उपलब्ध होती थीं, किसान अपने हाथ पैर से श्रमसाध्य काम बहुत कम करने लगा था। वह किसान से अधिक भूमि-व्यवसायी और कारीगर बनता जा रहा था। अब जब वह कस्बे को जाता तो गँवार देहाती नहीं लगता। श्वेत वस्त्रों से सुसज्जित उसकी पत्नी और लड़कियाँ ग्रामीण नहीं मालूम होतीं।

(६) मोटर गाड़ियों ने भौगोलिक सीमा को प्रशस्त कर दिया। विशेषकर उन लोगों के लिए जो कहीं की यात्रा करने के लिए अपने आपको बहुत निर्धन समझते थे। अब भी कुछ ऐसे लोग मिल सकते थे, जिन्होंने अपने घर तथा काउंटी के सदर मुकाम से बाहर जाने का कभी साहस ही नहीं किया था। परन्तु उन जैसों की संख्या तेजी से कम होती जा रही थी। क्योंकि अब तक जो लोग घर पर ही रहा करते थे वे अब छुट्टी के दिन कार से झीलों या समुद्र के किनारे सैर को जा सकते थे। बड़ी छुट्टियों में तो वे देश भर में फैल जाते — नयी चीजों को देखते, नये खेल खेलते और नये लोगों से मिलते।

मोटरगाड़ी से उन जड़ों को और भी कमजोर कर दिया जो एक परिवार को एक ही स्थान पर जमाये रखती थीं। यूरोपवासियों की अपेक्षा अधिक सक्रिय अमेरिकनों ने अब पहले की अपेक्षा अधिक तत्परता से आर्थिक लहरों को अपनाया। वे बराबर बाहर जाने के अवसर की बाट जोहने लगे। जहाँ कहीं भी भवन निर्माण का या फल बीनने का काम हो, हवाई जहाज के मिस्त्रियों की माँग हो वे मोटरगाड़ियों और बाद में ट्रेलरों में बैठकर जाने लगे। पुरानी परम्परा के बुद्धिजीवियों ने अमेरिकनों की इस बढ़ती हुई बेचैनी की निन्दा की। और उन लोगों की प्रशंसा की जो अपने बाप-दादों और अपने जन्म-स्थान पर ही जमे रहते। परन्तु मोटरगाड़ी अमेरिकनों की जिज्ञासा के अनुकूल थी क्योंकि उनकी रुचि एक जगह स्थिर रहने की न थी, बल्कि वह आगे बढ़ने के साहस की थी। अमेरिकनों ने अनुभव किया कि इधर उधर घूमने फिरनेवाला मनुष्य अनुभव

ता प्राप्त करता ही है उसकी बुद्धि का विकास भी होता है और यदा कदा उसे अत्यन्त सुन्दर फलदायक अवसर हाथ लगते हैं।

(७) मोटरयुगीन क्रान्ति ने व्यक्ति में आत्मगौरव की स्थापना कर दी थी। मैं यह बात उन नर-नारियों के लिए नहीं कह रहा जो अपने पड़ोसियों की क्रय शक्ति की तुलना में अधिक कीमती कार रख कर खुश होते हैं। मेरा तात्पर्य कुछ ऐसी चीज़ से है जिसकी विशद परिभाषा नहीं की जा सकती ; परन्तु जो यथार्थ है। किसी ने कहा है कि यूरोपवालों के हाथों मान मर्दन का अभ्यस्त एशियावासी भी यदि एक बार ट्रैक्टर अथवा बुलडोजर चलाने बैठ जाये तो वह उक्त अपमान को आगे सहन नहीं कर सकता। इसी प्रकार एक अमेरिकन, जो गरीबी, व्यापार में तुच्छ स्थान अथवा जाति या किसी अन्य कारण से अपने आप ही तुच्छ समझता है जब एक बार मोटरगाड़ी चलाने को बैठता है तो उसकी यह हीन भावना हवा हो जाती है। अनन्त शक्ति उसकी चेरी बनी दीखती है। यदि वह बस या ट्रक अथवा ट्रेलर चलाता है तो उसे उसका पद और भी शाही लगता है। क्योंकि वह अनुभव करता है कि एक महान पूंजीभूत शक्ति उसके इशारों पर नाच रही है।

मोटरगाड़ी की क्रान्ति का प्रभाव विशेषकर दक्षिण में दिखायी पड़ा, जहाँ पर कोई भी व्यक्ति सार्वजनिक रास्तों पर गौरांगों को "दयनीय काले आदमी" के विरुद्ध शिकायत करते हुए सुन सकता था। परन्तु अभिमान की भावना इससे भी कहीं अधिक व्याप्त हुई थी। कुछ हद तक उसने सड़क पर चलनेवाले प्रत्येक व्यक्ति पर अपना प्रभाव डाला। १९५० में नागरिक मजदूरों की संख्या अमेरिका में ५ करोड़ ९० लाख से कुछ कम आँकी गयी थी। उसी साल अमेरिका में ड्राइवरों की संख्या थोड़ी अधिक यानी ५ करोड़ ९३ लाख आँकी गई! इस हिसाब से प्रत्येक मजदूर पर एक से अधिक ड्राइवर था। मानव-इतिहास में इससे पहले शायद ही किसी देश के लोगों ने शक्ति के निर्बाध प्रयोग द्वारा आत्मा का ऐसा उत्थान कभी देखा होगा।

६
खोखला आधार

१९१८ की युद्धविराम-संधि के बाद तीन या चार वर्ष में भावुकता के वातावरण में परिवर्तन हुआ। ऐसा लगा मानो आदर्शवाद की मशाल, जिसने अमेरिकी अन्तःकरण के विद्रोह को उत्तेजित किया था, स्वयं जल कर राख हो गई। लोग थक गये थे। विशेषकर उनका उत्साह, उनका अन्तःकरण और उनकी आशाएँ सब ठंडी पड़ गयी थीं।

वापस आये हुए सैनिक जिस जेहाद के लिए भेजे गये थे, उसके भ्रांतिजाल से मुक्त हो गये। लीग आफ नेशन्श के लिए अमेरिकी उत्साह समाप्त हो गया। और हमने अपने को अपने में सीमित रखने का निश्चय किया, जो संभवतः विनाशकारी रहा, परन्तु तत्कालीन परिस्थिति में वह अनिवार्य था। लोगों ने अनुभव किया कि अब आराम करने का, दूसरे आदमियों अथवा आमतौर से दुनिया की अपेक्षा अपनी देखभाल का और चैन करने का समय है। मद्य-निषेध कानून, जो अमेरिकी अन्तःकरण के विद्रोह की अन्तिम देन था, बहुत दिनों तक लागू नहीं रह सका और लोग उसे हर तरह से तोड़ने लगे। सुधारक लोग भी थक गये थे। उन्हें आश्चर्य होने लगा कि वे अब बड़ी राजनीतिक बातों के लिए लड़ने के विचार मात्र से घबराने क्यों लगे हैं?

आगे बढ़ने और उन्नति के उपायों से ऊबकर मतदाताओं ने १९२० में राष्ट्रपति-पद के लिए सुन्दर वारेन जी हार्डिंग को चुना। वह सिनेटर थे। सुन्दर स्वरूप के अतिरिक्त उनकी सब से बड़ी पूंजी उनकी दयालुता, मिलनसारिता और विनम्रता थी। उनके नैतिक सिद्धांत अधिक ऊँचे न थे और न उन्हें किसी चीज़ में सुधार करने की कोई उत्कट भावना थी। बाद में मालूम हुआ कि उनके दफ़्तर में बड़े-बड़े अवसरवादी घाघ बैठे थे। उन सब के काले कारनामों का भाँडा फोड़ होने के पूर्व ही हार्डिंग का देहान्त हो गया है और कालविन कूलिज राष्ट्रपति बने। कूलिज ईमानदार, होशियार और बुद्धिमान पुरुष थे। किन्तु उनमें रचनात्मक प्रेरणा का सर्वथा अभाव था। कूलिज ने किसी राष्ट्रीय समस्या को

तब तक हल नहीं किया जब तक वह उसके लिए बाध्य नहीं कर दिये गये।

मेरे एक मित्र से जो १९१८ में बहुत छोटे बालक थे, उनके पिता ने कहा कि विरामसंधि पर हस्ताक्षर हो गये। उन्होंने पूछा, "अब जब कि युद्ध समाप्त हो गया है समाचार पत्र क्या छापेंगे ?" उनके पिता हँस पड़े। किन्तु गम्भीरता पूर्वक विचार करने पर यह प्रश्न बड़ा अर्थपूर्ण मालूम होगा। वस्तुतः हुआ यह कि समाचारपत्रों में फौजी, विदेशी और राजनीतिक मामलों की जगह धीरे-धीरे विभिन्न गड़बड़ कांडों, अपराधों, दुर्घटनाओं, मानवीय नाटकों और खेलों ने ले ली। ऐसा न केवल सनसनी पूर्ण समाचार छापने वाले अखबारों में हुआ बल्कि अधिक अनुशासित और विवेकशील पत्रों में भी। जब युवक चार्ल्स ए. लिण्डबर्ग ने न्यूयार्क से पेरिस तक बिना रुके उड़ान की तो अखबारों ने इस समाचार को ऐसे छापा मानों सृष्टि के बाद की वह महानतम घटना रही हो।

२

ज्ञानोन्नति के प्रसादों का उपभोग करने के साथ-साथ १९२०—२९ में कट्टर सुधारवादी प्रतिबन्धों को मिटाने और प्राचीन शिष्टाचार की नीतियों को बदल डालने की इच्छा लोगों में उद्वेलित हो रही थी।

इस विद्रोह के चिन्ह पहले से ही स्पष्ट होने लगे थे। एक नृत्य की सनक थी जो १९१२ में पैदा हुई थी और जिसने जर्जरित बूढ़े जोड़ों को अपने से छोटों के साथ नाचने को प्रेरित किया। इर्विंग बर्लिन का ग्रामीण संगीत बड़ा लोकप्रिय हुआ। दूसरी सनक १९१३ की आरमरी शो की थी जिसमें भौंचक्की जनता को अपूर्व आधुनिक कला-कौशल के अशास्त्रीय नमूने दिखाये गये। काव्य के माने हुए नियमों के विरुद्ध विद्रोह कर कवियों ने रबड़ छंद की कविता रचना आरंभ कर दिया। युद्ध ने लाखों नौजवान पुरुषों और स्त्रियों को उनके अभ्यस्त वातावरण से बाहर निकाला था और उन्हें स्वतन्त्रता का आस्वादन कराया था। १९२० तक धार्मिक कट्टरता के विरुद्ध विद्रोह स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होने लगा और आगामी दशक व्यतीत होने के बाद लोगों की इस विद्रोही भावना को बड़ी प्रेरणा और प्रोत्साहन मिला।

लड़कियों ने इसे सब से अधिक आगे बढ़ाया। क्या माताओं ने सोचा था

कि छोटी लड़की को शराब नहीं पीना चाहिए ? पुत्रियों ने मालूम किया कि खड़ी हुई मोटरकार में बैठे हुए लड़के की कमर से लटकनेवाली बोतल की गैरकानूनी का शराब का घूँट और भी मजेदार लगता है। क्या माताएँ वक्रोक्ति करती थीं ? पुत्रियाँ पुरुष-स्त्री-संबंधी और कामवासना की स्पष्ट चर्चा करती थीं। इसका उपदेश उन्हें फ्रायड से प्राप्त हुआ था, जिनके कथित मतानुसार "यौवन पर प्रतिबन्ध हानिकारक है।" क्या माताएँ लम्बे घाघरे के युग में पली थीं, जब घुटने का जनता के समक्ष उघड़ जाना वस्तुतः पुरुष की कामेच्छा को निमन्त्रण देना माना जाता था ? पुत्रियाँ नये फैशन से आनंदित हो रही थीं। पाँच वर्ष के अन्दर ही घाघरे का किनारा घुटने तक ऊँचा हो गया।

कुछ ही वर्षों में अमेरिकी स्त्रियों का स्वरूप इतना बदल गया कि पहचानने में ही न आये। वे अपना बाल छोटा रखतीं। लहरदार अथवा बच्चों की तरह मर्दाना कटे हुए बालों में लहरें डालने अथवा घुँघराले बनानेवाली दुकानों में लड़कियों की भीड़ लगने लगी। शरीर के रंग के मोज़े का प्रयोग तो १९२०-२९ के आरम्भ काल में शुरू हो गया था। बूढ़ी स्त्रियों ने इस परिवर्तन को बहुत धीरे-धीरे अपनाया। कुछ ने तो इसे अनिच्छा के भाव से अपनाया। उनकी धारणा यह होती कि वह जवानी के हानिकारक आवेश की वशीभूत होती जा रही हैं। किन्तु उस अभिरुचि का प्रतिवाद नहीं हो रहा था।

यह नई लहर स्त्री-पुरुषों के संबंध के परिवर्तित ढाँचे में ठीक बैठ रही थी। जरूरत हो या नहीं औरतें नौकरी करने की ओर अधिकाधिक झुक रही थीं। स्त्रियों में सिगरेट पीने की आदत बढ़ रही थी। स्त्रियों और पुरुषों के मिल-जुल कर शराब पीने की प्रथा प्रगति पर थी। काकटेल पार्टी का आयोजन शुरू हो रहा था — यह प्रथा आज तो सामाजिक आयोजनों का मानदण्ड बन गई है। यह १९२०-२९ के काल की विशेषता थी कि चलचित्रों की कन्यासुलभ निरीहता की प्रतीक मेरी विकफोर्ड का स्थान सिने-जगत की देवी क्लेरा बो ने ले लिया था। बात यह हुई कि नारीत्व ने नया स्वरूप अपनाना शुरू कर दिया था। मतदान करने का अधिकार उन्हें प्राप्त हो गया था। पर राजनीति में औरतों का प्रवेश बड़े पैमाने पर नहीं हो रहा था। इसके बदले स्त्रियाँ आनन्द मनाने के अपने अधिकार पर ही विशेष जोर दे रही थीं।

इस सामान्य कथन में मध्य शताब्दी की दृष्टि से कुछ जोड़ा जा सकता है। पहली बात यह कि आजकल के मानदण्ड से उन दिनों का सामाजिक आचार विशेष भ्रष्ट न था। इससे भी अधिक आश्चर्यजनक बात यह है कि १९२०-२९ के तरुण सुधारवादी प्रतिबन्धों के प्रति विद्रोही हो रहे थे। वर्तमान सामाजिक आचार-नियमों और १९२०-२९ के आचार-नियमों में काफ़ी अन्तर पड़ गया है। फिर भी, आज की स्थिति का श्रीगणेश उसी शताब्दी में हुआ था। तिस पर भी तब का वातावरण भिन्न था। नियमों को ढीला करने के प्रयोग में मौलिकता और स्वचेतनता की आभा थी; जो उसमें सम्मिलित होनेवालों को उत्तेजित कर रही थी और जो परिवर्तन के साथ कदम नहीं बढ़ाना चाहते थे उन्हें मर्मान्तक चोट पहुँचा रही थी।

दूसरी बात यह कि डाक्टर किन्से जैसे विचारकों के अनुसार नैतिक और अनैतिक व्यवहार के वास्तविक तत्व में पीढ़ी दर पीढ़ी कोई खास परिवर्तन नहीं होता।

तीसरी यह कि प्रचलित प्रथा त्याग की ओर उतनी उन्मुख न थी जितनी उद्दंडता की ओर। स्त्रियों के फैशनों को देखिए जिससे प्रौढ़ औरतें भी ऊँचे घाघरा पहनें, लम्बी कमर और फैले वक्ष, छोटे बालों वाली छोटी लड़कियों जैसी मालूम होतीं और अपने-अपने दानिशमन्द दिखाने की कोशिश करतीं। यह भी देखिये कि 'चालर्सटन' जैसे नृत्य सजीव लगते थे, किन्तु कामोत्तेजक नहीं थे। अन्तिम टीका यह हो सकती है सब स्त्री पुरुष इस नयी धारा में नहीं बहे। लाखों अमेरिकी ऐसे थे जिनके लिए उक्त प्रथा कल्पनातीत थी।

सामाजिक नियमों की शिथिलता के साथ-साथ धार्मिक सिद्धांतों में संदेह की भावना पैदा हो रही थी। क्या विज्ञान प्राचीनकाल के धर्म की खिचड़ी नहीं बना रहा था? और "खाओ पियो और मस्त रहो" के सिद्धांत की लहर दौड़ गई थी। नौजवान पुरुषों और स्त्रियों को, जो अपने को आधुनिक विचार वाले होने का गर्व करते थे, चर्च अथवा समाज सेवा कार्य विषवत् लगता था। इसके विपरीत आनन्द मनाने और गिरिजा घर जाने की अपेक्षा रविवार की सुबह मोटर कार की सवारी करना अधिक आनन्ददायक समझने का उन्हें अधिकार था। वे लोग जो स्वभाव से गम्भीर थे अपने आदर्शवाद को मनोवैज्ञानिक खोज में नई शिक्षा-प्रणाली

अथवा मानव-सेवा जैसे अस्पष्ट कामों में लगाने की ओर प्रवृत्त हो सकते थे। मनोवैज्ञानिक प्रणाली को वह विज्ञान द्वारा मुक्ति का साधन मानने लगे थे।

लेखक भी भ्रांति मुक्त हुए और उनमें विद्रोह की भावना जागी। मुक्ति उस धर्मयुद्ध की भावना से हुई जिसको लेकर अमेरिका प्रथम महायुद्ध में शामिल हुआ था। क्रोध उस विधि पर हुआ जिसके आधीन लेखक लोग अपनी जवानी में लोक-रीति और जटिल सिद्धांत द्वारा दबाये और त्रस्त्र किये गये थे। और घृणा उस समय की व्यावसायिक सभ्यता की कथित विद्रूपता पर थी। एच. एल. मैंकिन ने धर्म कुलीनता, कला की विक्टोरिया युगीन शिष्टता, सुधारकों और आमतौर से राजनीतिज्ञों की काफी छीछालेदर की। वह डीजर जैसे कट्टर लेखक के भी आलोचक थे। सिनक्लेयर लेविस ने छोटे अमेरिकी कस्बे के संबंध में और व्यापारी बेबिट के बारे में प्रबल अरुचि के साथ लिखा। परन्तु उनकी रचनाओं में पीड़ितों के प्रति सहानुभूति विद्यमान थी। अर्नेस्ट हेमिंगवे ने अपने सुन्दर ग्रन्थ में नौजवान बुद्धिजीवियों को विश्वास दिलाया कि वे वास्तव में पतित पीढ़ी में हैं और उनके लिए शराब पीने और भोगविलास के अतिरिक्त कुछ बाकी न रह गया है। युगिने ओर नील फ्रायड की विचारधारा को और साहित्यिक कौशल की चैतन्य, विचार प्रणाली के जरिए ऐसे विषयों को नाटकों में प्रस्तुत किया जिसे पहले की पीढ़ी नितान्त दुखद मानती। तत्कालीन कुछ लेखकों में भ्रम मुक्ति का जो प्रदर्शन किया वह पलायनवाद का प्रतीक था।

परन्तु सब कुछ होने के बाद भी नई प्रवृत्ति निराशाजनक न थी। यथार्थ में वह तीव्र प्रोत्साहन देनेवाली थी। कला कौशल के संसार में एक भावना जागृत हो गई थी कि अन्ततोगत्वा अब हम प्राचीन प्रतिबन्ध को तोड़कर सचाई प्रकट कर सकते हैं। परिणामस्वरूप बुद्धिजीवियों के जागरण का युग उपस्थित हो गया। यह न केवल लेविस हेमिंगवे, ओ नील और डीजर का उदयकाल था; अपितु डोस पेलोस, शेरऊड, एंडर्सन, मैक्सवेल एंडर्सन, विला केनार, एडना सेंट, विंस टमिले, एलेन ग्लासगो, एफ़ स्काट फिटजेलाइज़ड तथा अनेक अन्य योग्य उपन्यासकार कवि और नाट्यकारों का युग था। सिनेमा ने एक उद्योग का रूप धारण कर लिया। फिर जिसने प्रतिदिन लाखों लोगों को आकर्षित किया, उस काल में रंगमंच को जितनी लोकप्रियता मिली उतनी

पहले कभी नहीं मिली थी। केवल १९२७ में ब्राडवे में २६८ नाटक आयोजित हुए। यह संख्या पिछले वर्षों की अपेक्षा बहुत अधिक है। यह सच है कि नौजवान अमेरिकी लेखकों और कलाकारों के आराध्य देव अधिकांशतः विदेशी थे। उदाहरणार्थ प्राऊस्ट, जोइस, टी. एस. इलियट, गरट्रयू आधुनिक फ्रांसीसी चित्रकार स्टीन बहस के शिल्पी आदि। फिर भी इस बात के संकेत बढ़ रहे थे कि अमेरिका सांस्कृतिक दृष्टि से भी आगे बढ़ता जा रहा है।

ऊँची नाँकवाले लोग व्यवसायी को इस दृष्टि से देखते थे। पर व्यापारी वर्ग उत्कर्ष के पथ पर अग्रसर था। प्रतीत की तुलना में १९२३ और १९२९ अथवा अक्तूबर १९२९ के बीच की अवधि में अमेरिकी उद्योग और व्यवसाय ने जो उन्नति की वह साहित्य और कला के विकास की अपेक्षा अधिक महत्त्वपूर्ण थी।

ये वर्ष महान उत्कर्ष के थे और इसका पर्याप्त आधार भी था। मोटर-गाड़ियों के व्यवसाय की वृहत उन्नति हुई। एकाएक रेडियो का उद्योग फूलने फलने लगा। आश्वस्त व्यापारी समाज ने अधिक बड़ी और अधिक अच्छी इमारतों की माँग की। घनी आबादीवाले इलाकों में रहने के लिए कमरों की माँगें बढ़ीं। उपनगरों, जहाँ मोटर द्वारा पहुँचा जा सकता था तथा सैलानी स्थानों में नयी जायदाद के विकास की आवश्यकता पड़ी। फलतः भवन निर्माण के उद्योग में बड़ी उन्नति हुई। रेयन व्यवसाव और शृंखलाबद्ध स्टोरों की वृद्धि हो रही थी। निर्मातागण यह सिखते जा रहे थे कि नयी मशीनों के उद्योग से उत्पादन कैसे बढ़ाया जा सकता है। १९२२-१९२९ की अवधि में कृषि उत्पादन निर्माण खान और भवन निर्माण उद्योगों में ३४ प्रतिशत वृद्धि हुई और १९२०-३० की अवधि में प्रति-घंटा माल का उत्पादन २१ प्रतिशत बढ़ गया। यह आँकड़े हैरत में डाल देनेवाले हैं।

यहाँ तक जो हुआ सो तो अच्छा हुआ। सामान बिलकुल ठीक तैयार कराया जा सकता था। प्रश्न यह उठा कि वह बेचा भी जा सकता है या नहीं? सब इस निर्णय पर पहुँचे कि काफी चुस्त और फुर्तीला विक्रेता उसको ठीक तरह से बेच सकता है और इस तरह १९२०-२९ में सैल्समैन विक्रेता अमेरिका की उज्ज्वलतम आशा माने जाने लगे।

विक्रेताओं के लिए माल का कोटा निर्धारित कर दिया जाता। विक्रेताओं

की प्रतियोगिताएँ अक्सर बड़ी निर्दयतापूर्ण आयोजित की जाती थीं। प्रवन्धक लोग अपने अधीन काम करनेवालों से कहते थे कि आर्डर लेने के दिन लद गये और ग्राहकों को प्रतिज्ञा न कर उन्हें उनकी तलाश में जाना चाहिए। विज्ञापन कम्पनियाँ ऐसे सजे सजाये आकर्षक विज्ञापन छापने लगीं, जिसकी तुलना में पहले के विज्ञापन तुच्छ प्रतीत होते थे। वे उपभोक्ता को डराकर तथा उनकी सामाजिक आकांक्षाओं, प्राचीनतम तंतु को छू कर, उन्हें सामान खरीदने के लिए राजी करने के तरीके का अधिकतम प्रयोग करते थे।

३

वाणिज्य व्यवसाय की इस तीव्र गति को कौन रोक सकता था ? कम से कम सरकार तो नहीं। उसके अफसर और अधिकारी कूलिज के साथ ही ऊँघते हुए मालूम पड़ते थे। मजदूर भी नहीं। युद्ध के तुरन्त बाद ही हड़तालों की तीव्र लहर के पश्चात् मजदूर-संघों में शिथिलता आ गई। अमेरिका में मजदूर संघों के सदस्यों की कुल संख्या १९२० में ५० लाख से घटकर १९२७ में ४० लाख और १९३१ में लगभग ३३ लाख रह गई। (इस कमी का एक कारण संभवतः यह था कि संघ के सदस्य बढ़ाने के लिए कोशिश और लगन की आवश्यकता थी। पर सदस्यों ने अन्य लोगों की तरह विश्राम करना ही पसन्द किया।)

व्यवसाय को आगे बढ़ने से जो चीज रोक सकती थी वह अमेरिकनों की नई गतिविधि थी। अमेरिका के व्यवसायी कागजी मूल्य को देखकर हैरत में पड़ गये थे। कारण कि सट्टे में कृत्रिम रूप से पैदा किये हुए धन का ढेर लग गया था, जिसका माल के उत्पादन से कोई संबंध न था। उस समय जब कि राष्ट्र की सबसे बड़ी आर्थिक जरूरत उन्हीं योजनाओं से थी जिनसे व्यापक और न्यायोचित तरीके से औद्योगिक उन्नति के फल को सब लोगों में और वह भी लोगों की प्रेरणा नष्ट किये बिना (मालिक, प्रवन्धकों और मजदूरों में भी) वितरित किया जा सके। तभी सट्टे की सनक पैदा हो गई, जो केवल उन्हीं को तात्कालिक लाभ पहुँचाती थी जिनके हाथ में पूंजी होती। इसके अतिरिक्त कुछ ऐसे भी साधन निकाले गये जिनसे समृद्धि और सम्पन्नता

का फल चन्द लोगों में बटने लगा ।

इन योजनाओं के अन्तर्गत चढ़ी हुई कीमतों पर कम्पनियों का विलय हो जाता था । इससे कम्पनी वालों को अपनी जेबें भरने का सुअवसर मिलने लगा । होल्डिंग कम्पनियाँ एक के बाद दूसरी इकटठी होती चली जाती थीं । जैसा कि इन्सल और वान स्वरिंगन कम्पनियों के मामले में हुआ । यह क्रम तब तक चलता रहता जब तक कि पाँच-छः या सात कम्पनियाँ एक दूसरे पर बैठ न जातीं । परिणाम यह होता कि ऐसे व्यापार संगठन का सब से ज्यादा मुनाफा, जो कम्पनी रूपी पिरामिड के नीचे पड़ी कम्पनी द्वारा होता था, ऊपर वाली कम्पनियों के मालिकों द्वारा निकाल लिया जाता था । बैंकों द्वारा जमानत दिलाए जाने का कायदा बनाया गया था, जिसके जरिये जमा करनेवालों की रकमें अन्य जमानतों या अचल सम्पत्ति पर लगा दी जाती । इस प्रकार के कार्य कानून द्वारा वर्जित थे । कम्पनियों के समुदाय की सम्पत्तियों को चढ़ी हुई कीमतों पर बेचकर और फिर वापिस ले कर व्यावसायिक संघों के मुनाफ़े को बढ़ाने का कार्य अक्सर किया जाता था । स्टाक मार्केट के कोष बनाये जाते थे, जिनमें कम्पनी के अफ़सर लोग दलालों और ऊँचे दर्जे के सटोरियों के साथ मिलकर कम्पनी के स्टाक की कीमत बढ़ा देते थे । फिर उसे नये खरीददारों के गिरोह को बेच देते और इस तरह खुद उन अफसरों के अपने स्टाक होल्डरों से पैसे पर ही पूँजी जमा कर ली जाती ।

उन दिनों पैसे बनाने के प्रचलित तरीकों में से कुछ ही यहाँ दिये गये हैं । वे सामूहिक रूप से विश्वसनीय परंपरा का भयानक पतन ही नहीं बतलाते, सट्टेवाली या हवाई कीमतों को देश के अर्थतन्त्र में ऐसे-ऐसे स्थानों पर मिलाते चले जा रहे थे कि यदि कीमतें गिरतीं तो बैंक के बैंक, कम्पनी के कम्पनी, उनमें पैसा जमा करनेवाले लोगों और कर्मचारियों को गहरी हानि पहुँचती । लोगों के अनुत्तरदायित्वपूर्ण कार्य विनाश का मार्ग तैयार कर रहे थे ।

उक्त वर्षों में कितने लोग सट्टा खेलते थे इसका ठीक-ठीक पता नहीं चल सका है । परंतु संभवतः लाखों व्यक्ति ऐसे थे जो मामूली मुनाफे पर स्टाक खरीदते थे — खरीदे हुए स्टाक की कीमत का थोड़ा-सा ही भाग चुकाते थे — और दस या बीस लाख से अधिक लोग यद्यपि अपने खरीदे हुए माल की पूरी

क़ीमत नकद चुकाते थे, तथापि स्टाक मार्केट के भावों को अखबारों में बराबर ध्यान से देखते थे। न केवल पूंजी देनेवाले और छोटे बड़े दर्जे के व्यापारी ही सट्टा खेलते थे, बल्कि गृहणियाँ, मवेशी का रोजगार करनेवाले, स्टेनोग्राफर, पादरी, लिफ्टमैन आदि भी सट्टा खेलते थे। ऐसा कोई भी व्यक्ति जिसके पास कुछ पूँजी होती वह जनरल मोटर्स अथवा रेडियो, या मोटेवार्ड या फेसथू शिंग या एलेक्ट्रिक बाड और शेयर का कारबार कर सकता। कहते हैं कि एक नौजवान व्यापार की शिक्षा कैसे प्राप्त हो सकती है, इस पर सलाह लेने को एक पूँजीपति के पास गया। पूँजीपति ने उससे कहा कि अमुक-अमुक स्टाक खरीद लो और फिर देखो कि क्या होता है! कुछ सप्ताह बाद वह युवक उक्त पूंजीपति के पास फिर आया। उसे आश्चर्य भी हो रहा था और खुशी भी। उसने पूछा "इस तरह का व्यापार कब से हो रहा है?" १९२८-२९ में अधिकतर स्टाक की खरीद रेस के खेल की तरह होती थी। कीमतें बढ़ती चली गयीं। आम स्टाक के प्रामाणिक आँकड़ों की सूची में कीमतें १९२६ में औसतन १०० थीं, १९२७ के जून तक वह ११४ हो गयीं, १९२८ के जून तक १२८, १९२९ के जून तक १९१ और १९२९ के सितम्बर तक २१६ तक पहुँच गयी।

जब कीमतें ऊँची चढ़ीं तो तत्कालीन बुद्धिमानों ने कहा कि अब वे स्थायी पठार पर पहुँच गये हैं और यह नया युग है। दूसरे लोगों ने यह आशा व्यक्त की कि सारा राष्ट्र आम स्टाक खरीद कर मालामाल हो जायगा। कुछ लोगों ने यह कहा कि जो कुछ हो रहा है वह भयंकर जुआ है, और अनेक लोग ऐसे थे जिनकी धारणा थी कि अधिक से अधिक कुछ लोगों के कपड़े उतर जायेंगे पर उनकी दृष्टि में व्यापक संकट की कोई आशंका न थी। दरअसल जो तथ्य वह समझ न पा रहे थे वह यह था कि सट्टाबाज़ार इतना बड़ा हो गया था कि वह उपाय जो उसे स्वयं व्यवस्थित करनेवाले समझे जाते थे विनाशकारी औषधि का काम देंगे। और दूसरा यह कि अमेरिकी व्यवसाय का बहुत बड़ा भाग इतनी ऊँची चढ़ी हुई कीमतों पर आधारित था कि दिवाले की प्रतिक्रिया सारी अर्थ-व्यवस्था को हिला दे सकती थी।

उसे विनाश की तरफ जाने से कौन रोक सकता था?

हरबर्ट हूवर मार्च १९२९ में कैलविन कूलिज के बाद राष्ट्रपति बने। क्या

वे उसे रोक सकते थे ? जब तक वे ह्वाइट हाउस पहुँचे तब तक काफी देर हो चुकी थी और कौन राष्ट्रपति "खुशहाली के और चार साल" के नारे पर निर्वाचित होने के तुरन्त पश्चात् ही आतंक फैलता देखना चाहेगा ?

तब क्या अमेरिकी अर्थतंत्र के जिम्मेदार नेता, उदाहरणार्थ मोर्गन का फर्म उसे रोक सकते थे ? बहुत मुश्किल था ; क्योंकि मोर्गन की फर्म स्वयं ही होल्डिंग कम्पनी की कुछ अत्यन्त साहसिक योजनाओं में शामिल था, जिसकी माली हालत ऊँची कीमतों पर निर्भर थी। सब से बड़ी बात तो यह थी कि बड़े पियरपोन्ट मोर्गन के जमाने में इस फर्म का जो प्रभाव था वह अब रह नहीं गया था।

न ही किसी जिम्मेदार पद पर ऐसा कोई व्यक्ति था जिसमें इसे रोकने की लगन और क्षमता दोनों हों। इस तरह १९२९ की हर्षोल्लासपूर्ण ग्रीष्म ऋतु समाप्त हुई और पतझड़ शुरू हुआ।

आइये, एक सैकंड ठहर कर यहाँ कुछ अन्य आँकड़ों पर दृष्टिपात कर लें।

उसी १९२९ में अत्यन्त सतर्क और परम्परावादी ब्रूकिंग्स संस्था की पिछली गणना के अनुसार केवल २-६ प्रतिशत अमेरिकी कुटुम्बों की वार्षिक आय १० हजार डालर से ऊपर थी। केवल ८ प्रतिशत लोगों की आय ५ हजार से ऊपर थी, ७१ प्रतिशत की आय २॥ हजार डालर से कम और लगभग ६० प्रतिशत की आय २ हजार डालर से कम थी। ४२ प्रतिशत से अधिक लोगों की आय डेढ़ हजार से कम और २१ प्रतिशत से अधिक लोगों की आय १ हजार से भी कम थी।

ब्रूकिंग्स संस्था के अर्थशास्त्रियों ने बताया कि "१९२९ में विद्यमान चीजों के भाव की दृष्टि से एक कुटुम्ब की दो हजार डालर की वार्षिक आय उसको केवल बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पर्याप्त समझी जा सकती है।" कोई भी इस कथन का यही विवेकपूर्वक मतलब निकाल सकता है कि उस स्तर से नीचे की कोई भी आय गरीबी की द्योतक थी। व्यावहारिक रूप से ६० प्रतिशत अमेरिकी कुटुम्ब १९२९ के स्वर्णयुग में उस आय के नीचे के थे। ब्रूकिंग्स के अर्थशास्त्रियों के अनुसार कम से कम आखिरी दशक में या उसके आसपास आय के विभाजन की असमानता और बढ़ने के लक्षण विद्यमान थे। १९२०-२९ में वाल स्ट्रीट अमेरिका की धुरी होने का दावा कर रहा था। बैंकपति और

दलाल पृथ्वी पर बादशाहों की तरह चलते थे। ऐसा मालूम होता था मानो अमेरिका खुशहाल अमीरों को अधिक अमीर बनाने और समाज के निम्नवर्गों के लोगों को निर्धन बनाये रखने पर ही निर्भर है। फिर भी वह सारा वातावरण एक खोखले आधार पर आधारित था; क्योंकि जिन मूल्यों पर उसका निर्माण हुआ था, वे वस्तुस्थिति से परे थे और स्वविनाश के लिए प्रस्तुत थे। वह भाग्यवानों और बहुसंख्यकों के बीच की खाई को और गहरा करता जा रहा था।

१०
घोर मन्दी

२४ अक्टूबर, १९२९ के प्रातःकाल अमेरिकी खुशहाली की ऊँची इमारत तड़क गई। बहुत दिनों से न्यूयार्क स्टाक एक्सचेंज में स्टाक की कीमतें अधिकाधिक तेजी से गिरती चली आ रही थीं। उस दिन सुबह को उससे प्रचण्ड आतंक फैल गया। और १३ नवम्बर तक बाजार की हालत सँभल नहीं पाई।

कुछ सप्ताह की संक्षिप्त अवधि में ३० अरब डालर के मूल्य के कागजी नोट हवा में विलीन हो गये। यह राशि उस समय के राष्ट्रीय ऋण से भी अधिक थी। अमेरिकी अर्थ व्यवस्था की साख इतनी अधिक जोरों से हिल गई कि इसका अनुमान लगाना तक कठिन था। वाल स्ट्रीट के नेतृत्व की कहानी की पोल खुल गई और महान मन्दी का समय आने लगा।

पहले तो व्यवसाय और उद्योग पर आमतौर से गंभीर प्रभाव पड़ता हुआ नहीं मालूम हुआ। हरेक आदमी हर दूसरे को विश्वास दिलाता था कि वास्तव में कोई खास बात नहीं हुई है। और १९३० की वसंत ऋतु में बड़ा भारी 'लिटिल बुल मार्केट' (तेज़ड़ियों का बाजार) स्थापित होने वाला था। परन्तु मई में यह प्रयत्न भी समाप्त हो गया। और फिर दो साल की मन्दी का प्रभाव न केवल सिक्युरिटियों की कीमतों पर पड़ा, बल्कि अमेरिकी व्यवसाय के विस्तार

पर भी वह हावी हो गया।

इन घबराहट पैदा करनेवाले वर्षों में राष्ट्रपति हूवर ने पहले तो वाशिंगटन में व्यवसाय संचालकों को बुलाकर राष्ट्रीय आशीर्वाद को जुटाने की कोशिश की और उनसे घोषणा करवायी कि स्थिति मूलरूप से दृढ़ है और वेतन में कटौती न होगी। इससे काम न चला। तब कुछ समय के लिए वे अकर्मण्य रहे और विश्वास करते रहे कि बाजार अपने आप ठीक हो जायगा। इसका भी कोई फल न मिला। जब उनको विश्वास हो गया कि आर्थिक आतंक साथ-साथ यूरोप में भी फैल रहा है और यही सब से बड़े दुःख का कारण है तो उन्होंने युद्धकालीन ऋण और क्षतिपूर्ति की माँग को तत्काल स्थगित कर बाद को चुकाने की पद्धति चलाई। यह कूटनीति का एक अच्छा चमत्कार था जिसने, थोड़े ही समय के लिए सही, स्थिति को सुधार लिया। इसके बाद उन्होंने पुनर्निर्माण वित्तनिगम '(रिकान्स्ट्रक्शन फाइनेन्स कारपोरेशन)' की तंगदस्त बैंकों और व्यापारियों को संयुक्त सहायता देने के लिए स्थापना की। तभी सिद्धांततः संयुक्त कोष को व्यक्तिगत कठिनाई में पड़े हुए लोगों की सहायता के लिए देने से इंकार कर दिया। ठीक उसी समय जब १९३२-३३ की शीतऋतु में स्थिति में सुधार मालूम होने लगा था तभी अमेरिकी बैंक-व्यवस्था हिलने लगी। यहाँ तक कि रिकान्स्ट्रक्शन फाइनेन्स कारपोरेशन भी कुछ न कर सका। परिणामतः अमेरिका के इतिहास में एक साथ कई महत्त्वपूर्ण घटनाएँ घटीं। ४ मार्च, १९३३ को हूवर ने राष्ट्रपति पद से अवकाश ग्रहण किया और फ्रैंकलिन रूजवेल्ट ने उस स्थान को ग्रहण किया। उसी दिन अमेरिका की बैंक व्यवस्था पूर्णतः अवरुद्ध हो गई। एक योग्य और उत्कृष्ट बुद्धियुक्त परम्परागत आर्थिक सिद्धांतों को माननेवाले राष्ट्रपति भी अवसानासन्न प्रणाली के एकाएक पतन के दुखद शिकार बन गये।

रूजवेल्ट ने राष्ट्रपति पद से अपने प्रथम भाषण में घोषणा की कि "हमें केवल एक बात से डर है और वह बात स्वयं डर है।" वह सब को क्रियाशीलता के तूफान में उड़ा ले गये। इसके फलस्वरूप बैंक फिर से खुलने लगे। साहसिक और कभी-कभी परस्पर विरोधी सुधार कार्यक्रम आरम्भ किये गये। लोगों को सहायता दी गई तथा उन्हें उत्साहित किया गया। इन सब प्रयत्नों के

फलस्वरूप स्थिति अवश्य थोड़ी सँभल गई ।

दुखद असफलताएँ जल्दी ही भुलाई जाती हैं, चाहे वे व्यक्तिगत हों या राष्ट्रीय । स्वभावतः उनकी याद को अपने से दूर करने की कोशिश करते । हूवर की लम्बी अग्नि-परीक्षा के दिनों में जो कुछ हुआ इसको चमत्कारपूर्ण बनाने की कोशिश करना रिपब्लिकनों के लिए स्वाभाविक था । फिर भी बाद में अमेरिकनों पर क्या बीता इसे समझने के लिए उस महान मन्दी के समय की कई बातों को याद रखना आवश्यक है :

१. भयानक गिरावट आई थी और वह काफी दिनों तक रही । १९३२ के मध्य में १९२९ की मंदी के ढाई वर्ष से भी अधिक बाद अमेरिकी उद्योग १९२९ की अपेक्षा आधे से कम रह गये । १९३२ में कुल राशि जो वेतन के रूप में बाँटी गई वह १९२९ की अपेक्षा ६० प्रतिशत कम थी ।

उस साल २ करोड़ २० लाख से अधिक अमेरिकी बेकार थे और औद्योगिक कस्बों में बेकार लोगों की संख्या सिर चकरा देनेवाली थी । उदाहरणार्थ, वफेलो में करीब १५ हज़ार लोगों की, जो काम करने योग्य थे, स्थिति की जाँच करने पर मालूम हुआ कि उनमें ३.१ प्रतिशत लोगों को नौकरी नहीं मिल सकी और उनमें से आधे से कम पूरे समय काम करते थे। इधर किसान लोग भी अन्य वर्षों की अपेक्षा फसल से कम आय होने के कारण निराशापूर्ण जीवन व्यतीत कर रहे थे ।

२. अमेरिका की महान मन्दी दुनिया भर में होनेवाली गिरावट का एक अंश थी जिसके बारे में कार्ल पौलेनी ने ठीक ही कहा है कि वह बाजार की उस अर्थ-व्यवस्था का पतन था, जो १९ वीं सदी में स्थापित की गई थी ।

३. उसने लाखों लोगों को अन्दर ही अन्दर जीवन भर प्रभावित किया । केवल इसलिए नहीं कि वे और उनके मित्र बेकार हो गये थे, उनकी जीवन-वृत्ति टूटी दिखाई पड़ती थी और उन्हें अपना सारा रहन-सहन बदलना पड़ रहा था, बल्कि स्थिति और भी बुरी होने के छद्म भय से वे भीतर ही भीतर घुलते जा रहे थे । और बहुत से लोग तो सचमुच भूखे रह जाते थे । उनके भय का एक कारण यह भी था कि उन पर जो कुछ बीत रहा था, उसका कोई कारण अथवा संगति नहीं दिखाई देती थी । जैसे-जैसे

समय गुजरता गया नौजवान और बूढ़े सभी होरेशियो एल्जर द्वारा निर्दशित सफलता के प्राचीन नियम को वक्र दृष्टि से देखने लगे। महत्त्वाकांक्षा के लिए परिवर्तन करने की बात पर वे शंका करने लगे। वे पराक्रम रहित, पर सुरक्षित नौकरी को अपनाने की ओर झुके। सामाजिक बीमा योजना और पेन्शन योजना को वे अच्छी निगाह से देखने लगे। कटु अनुभव ने उन्हें सुरक्षा की माँग करने के लिए प्रेरित किया।

४. महान् मन्दी के समय ने वाल स्ट्रीट को अपने महत्त्वपूर्ण पद का परित्याग करने को वाध्य कर दिया। यह पद उसने १९वीं सदी में प्राप्त किया था और जो पियरपोंट मोर्गन के निजी नेतृत्व में संगठित हुआ था, और जिसने १९१३ में उनकी मृत्यु के पश्चात् एक संस्था का रूप ग्रहण कर लिया था। १९२९ से बड़े बैंकपति केवल आतंक को रोकने में ही असफल नहीं हुए, वल्कि निरंतर गिरावट, आर्थिक सिद्धांतों में उनका निजी अविश्वास और बैंकिंग प्रणाली का पतन सब उनकी असहाय स्थिति का प्रदर्शन कर रहे थे।

५. मन्दी ने व्यवसायियों की प्रतिष्ठा पर कड़ा आघात किया। सब से बुरी क्षति उठानेवाले वे बैंकपति और दलाल थे, जो सम्मान के पात्र होने के बजाय सार्वजनिक तिरस्कार और अविश्वास के पात्र बन गये थे। काँग्रेस की लगातार छान-बीन के फलस्वरूप उनके एक से एक बढ़कर काले कारनामे जनता के सामने आये, जिसने उनके प्रति जनता के अविश्वास को और पक्का कर दिया। व्यवसाय संचालक उस हद तक जनता की निगाह से गिर गये, जहाँ से उठने में उन्हें बहुत समय लगेगा। और इस क्रम में लूट-खसोट करनेवालों के साथ-साथ कर्तव्यपरायण और समाजसेवी लोगों ने भी कोई कम नुक़सान नहीं उठाया।

६. इस विश्वव्यापी मन्दी ने हिटलर को जर्मनी का सर्वेसर्वा बनाया। बहुत से अन्य देशों में पूँजीवाद की मृत्यु का घंटा बज गया। परन्तु अमेरिका में क्रांति जैसी कोई चीज़ नहीं हुई। आर्थिक सुरक्षा के लिए प्रस्ताव पर प्रस्ताव आये। हूवेलोंग जैसे डिक्टेटर को अल्पकालीन प्रादेशिक शासन मिला। किसानों के छोटे-मोटे उपद्रव हुए, कम्युनिस्ट लोगों का और मज-

दूरों के संघों का प्रभाव तेजी से बढ़ा, परन्तु अनगिनत अमेरिकनों को अपने भाग्य पर निराशा होने के बावजूद कोई क्रांति नहीं हुई। परंपरानुसार राष्ट्र के शासन की बागडोर सिर्फ एक राजनीतिक पार्टी के हाथ से दूसरी पार्टी के हाथ में चली गई। बस!

३१ दिसम्बर १९३३ को न्यूयार्क टाइम्स में, जब कि रूजवेल्ट अध्यक्ष हुए एक वर्ष से कम हुआ था, जान मेनार्ड किन्स ने जो अंगरेज अर्थशास्त्री थे, राष्ट्रपति को एक खुली चिट्ठी लिखी। उन्होंने लिखा, 'आपने मौजूदा स्थिति के दोषों को वर्तमान सामाजिक प्रणाली के अन्तर्गत विवेकशील प्रयोग द्वारा सुधारने के इच्छुक लोगों का ट्रस्टी बनने का भार अपने ऊपर लिया है। यदि आप असफल होते हैं तो विवेकशील परिवर्तन का काम अस्तव्यस्त हो जायगा और फिर इसके लिए क्रान्ति होगी।' बाद में जो कुछ हुआ उससे कट्टरता और क्रान्ति को सुलझाने की उसे ढील नहीं मिली, प्रचलित सामाजिक प्रणाली के अन्तर्गत प्रयोग पर प्रयोग चलते रहे। एक दफ़ा फिर जैसा कि अमेरिकी अन्तःकरण के विद्रोह के जमाने में हुआ था, लोग राष्ट्रीय तंत्र के स्पष्ट दोष को ठीक करने में लग गये। पर काम चलता रहा। और यह सब काम अमेरिका की परम्परागत दलीय पद्धति के जरिये हुआ।

१९३३ की बसंत ऋतु में रूजवेल्ट की आश्वासन एवं प्रभावपूर्ण घोषणा से प्रथम दिन ही सारे देश में आनन्द और उत्साह की लहर दौड़ गयी। न्यू डील के परिचित ब्यौरे की यहाँ पुनरावृत्ति आवश्यक नहीं है। केवल एक तथ्य जानने की आवश्यकता है और वह यह कि न्यू डील किसी समय भी पूर्णरूप से खुशहाली नहीं ला पाया और वह स्थिति वस्तुतः १९४०--४१ तक, जब कि प्रतिरक्षात्मक व्यय बेहद बढ़ा दिया था, नहीं स्थापित हो सकी।

लेकिन न्यू डील ने अनेक प्रकार के अमेरिकी अर्थ व्यवस्था की प्रवृत्ति को स्थायी रूप से बदल दिया।

प्रथम बात तो यह हुई कि 'न्यूडील' के अन्तर्गत अमेरिकी अर्थतंत्र के बहुत से नियम फिर से लिखे गये। उदाहरणार्थ १९२०--२९ की मूर्खताओं की पुनरावृत्ति को रोकने के लिए व्यावसायिक बैंकों को सिक्युरिटी का काम करने से वंचित कर दिया गया। आवश्यक सूचनाएँ पूर्णतः प्रकाशित किये बिना सिक्युरिटी जारी

करना रोक दिया गया। स्टाक एक्सचेंज पर कोष के विस्तार को सीमित कर दिया गया। साथ-साथ उन पर पूरी निगरानी रखने के लिए एक विशेष विभाग स्थापित कर दिया गया और होल्डिंग कम्पनियाँ सार्वजनिक उपयोग की वस्तुओं का व्यापार करने से रोक दी गई। नियमों की न केवल पुस्तक ही लिखी गई बल्कि कई मामलों में उनको लागू करने और उनकी व्यवस्था करने का अधिकार भी संघीय सरकार ने ले लिया।

दूसरी बात यह हुई कि आर्थिक दृष्टि से दलित वर्ग की रक्षा करने का उत्तरदायित्व सरकार ने अपने ऊपर ले लिया। उदाहरणार्थ पुराने नियमों में 'माँग और पूर्ति' वाला सिद्धान्त अमेरिकी किसान के लिए हानिकारक प्रतीत हो रहा था। इसलिए सरकार किसानों को उठाने के लिए आगे बढ़ी और उनकी जिन्सों की उचित कीमत की गारंटी दी। आशा के विपरीत परिणाम यह निकला कि अमेरिका का किसान जो अमेरिका के अन्य निवासियों की तरह ही रूढ़िवादी था, अपने आर्थिक अस्तित्व के लिए सरकार के निर्णय पर निर्भर रहने लगा। इसी प्रकार न्यू डील के अन्तर्गत हूवर द्वारा स्थापित रिकान्स्ट्रक्शन फाइनेन्स कारपोरेशन के जरिए संकटग्रस्त व्यावसायिक कारपोरेशनों को सहारा देना जारी रखा गया और फर्मों को दिवालिया होने से रोकने का प्रबन्ध किया गया। भूमिपतियों एवं मकानदारों को गिरवी की रकम चुकाने में सहायता दी गई। नये मकान निर्माण में वित्तीय सहायता की व्यवस्था की गयी। बेकार और बूढ़े लोगों को सामाजिक सुरक्षा के जरिए मदद पहुँचाने की व्यवस्था की गई तथा मजदूरों के लिए निम्नतम वेतन और काम के घंटों के बारे में कानून बनाये गये।

तीसरी बात जो हुई वह यह कि रोज़गारी को प्रोत्साहित करने के लिए बहुत बड़े पैमाने पर बाँध, पुल, उद्यान, मार्ग और खेल के मैदान बनाने के काम शुरू किये। साथ-साथ इस बात का भी ख्याल रखा गया कि इससे निजी उद्योग व्यवसाय को कोई हानि न पहुँचने पाये। टेनेसी वैली अथोरिटी की स्थापना पर बिजली व्यवसाय में प्रतियोगता; बाढ़ों की रोकथाम और किसानों को भूमि सुरक्षित रखने की विधि की शिक्षा देने का त्रिविध काम भी सरकार ने शुरू किया।

चौथी बात यह हुई कि न्यूडील ने संगठित मजदूर व्यवस्था को आगे बढ़ने की छूट दे दी। अब तक क्लेटन एक्ट के अन्तर्गत सामूहिक सौदेबाजी करने का

अधिकार मजदूरों को था पर अक्सर अदालतें उसे रद्द कर देती थीं। अब संगठित सौदेबाजी करने की स्पष्ट और विशेष व्यवस्था कर दी गई और संघों में सम्मिलित होने के लिए भीड़ एकत्र होने लगी।

१९३०-४० की अन्तिम अवधि तक अमेरिका में मजदूर संघों के सदस्यों की संख्या १९३३ की ३० लाख से बढ़ कर करीब ९० लाख तक हो गई और अंशतः संघों के दबाव के कारण व्यवसाय और उद्योग में साप्ताहिक काम का समय करीब ५ घंटा कम हो गया। एक गणना के अनुसार वह ४९.६ घंटों से घट कर ४४ घंटे पर आ गया और सप्ताह में दो दिन की छुट्टी सामान्य रिवाज बन गई।

मजदूरों से आम सहानुभूति के जरिए न्यूडील ने जे. केनिथ गालब्रेथ के शब्दों में अमेरिकी अर्थव्यवस्था का सम करने की शक्ति को छूट दे दी। यह एक ऐसी शक्ति थी जो व्यवसायियों के प्रबन्ध के विरोध में कार्य करती थी और जो कभी-कभी जबरदस्त संघर्ष उत्पन्न करती थी। उसने राष्ट्रीय आय को अल्प वित्तभोगी वर्गों में फिर से बांटने में सहायता दी।

न्यूडील ने सामूहिक तौर पर राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का प्रबन्ध करने की कोशिश की। पहले से जो स्वर्ण मानदंड अपने-आप चला आ रहा था, उसे समाप्त कर सुव्यवस्थित मुद्रा-प्रणाली का श्रीगणेश किया। उसने यह सिद्धान्त भी त्याग दिया कि प्रशासन का प्राथमिक कर्तव्य आय-व्यय को संतुलित रखना है। उसने केनेस का यह सिद्धान्त अपनाया कि संकटकाल में घाटे का बजट बनाने से समृद्धि के समय उस घाटे की पूर्ति अपने-आप हो जाती है।

यह सब हस्तक्षेप, जैसे सुधार के कार्यक्रम, आर्थिक सहायता और गारंटी, सार्वजनिक निर्माण कार्य, मजदूरों को प्रोत्साहन और सामूहिक तौर पर अर्थव्यवस्था को चलाने की कोशिश निश्चय ही सामाजवादी व्यवस्था न थी। कम-से-कम उस पुराने अर्थ में तो नहीं, जिसमें यह माना जाता था कि समाजवाद का अर्थ है सरकार द्वारा व्यापार और उद्योग का प्रबन्ध अपने हाथ ले लेना। विभिन्न उद्योग व्यवसाय अब भी निजी प्रबन्ध में थे।

यह प्रबन्ध अभी अनेक कायदे-कानूनों से जकड़ा और कई कर-भार से दबा था। एवं मजदूर यूनियनें उसका इतना विरोध करती थीं कि बहुत से व्यवस्थापक

अपने को सरकार और मजदूरों का बन्दी समझने लगे थे। और न वह एक स्वतंत्र आर्थिक व्यवस्था थी 'परम्परा पुराने अर्थों में' जिसमें प्रत्येक व्यक्ति का आर्थिक भविष्य खुले बाजार में खरीद बिक्री पर आश्रित होता और सरकार एक तरफ खड़ी देखती रहती, जैसा कि हरबर्ट हूवर ने १९३०--३१ में किया। नई व्यवस्था इन दोनों की बीच की चीज थी। उसे पूंजीवाद का सुधरा हुआ रूप कह सकते हैं। दूसरे शब्दों में सरकार उस अम्पायर की तरह थी, जो खेल के मैदान में दौड़ता है और कभी इस खिलाड़ी को तो कभी उस खिलाड़ी को दंडित करता है अथवा दबी हुई टीम को दो कदम आगे बढ़ा देता है।

और इस माने में रूजवेल्ट और उनके सहयोगियों ने नयी व्यवस्था के लिए कोई व्यापक योजना तैयार ही नहीं की थी। जहाँ कहीं आवश्यक दीख पड़ा वहाँ मरम्मत कर दी बस यही क्रम था। विभिन्न कार्यों में कोई संगति न थी और इसके परिणामस्वरूप कुछ वर्ष बाद ही अमेरिकी अर्थतंत्र का रूप एक नये राजसी भवन की अपेक्षा पुराने भवन का था जिसकी रंगाई कर दी गई हो, जहाँ तहाँ कुछ नये हिस्से बनाये गये और कुछ तोड़ दिये गये हों और जिसके कर्मचारियों की संख्या बढ़ा दी गयी हो।

तिस पर भी १९३०--३९ की दशाब्दी अमेरिकनों के लिए अनेक बातें छोड़ गई जो भविष्य में काफी महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुई। सबसे पहली और मूलभूत बात यह थी कि सब अमेरिकनों के भाग्य एक ही सूत्र में बँधे हैं और वे सब-के-सब एक ही नाव में सवार हैं। 'राष्ट्रीय संकट' ने पहले कभी भी इस तरह से अर्थशास्त्रियों, समाज-शास्त्रियों, प्रशासन के विद्यार्थियों और विवेकशील नागरिकों को आमतौर से अनुभव करने को न ललकारा था कि उनके साथी देशवासियों पर क्या बीत रहा है और उन पर वाल स्ट्रीट के बैंक पतियों, डिट्रोइट के कारीगरों, वाशिंगटन के विधायकों और नौकरशाही के क्रियाकलाप का कैसा प्रभाव पड़ता है और वे अपना दैनिक जीवन कैसे व्यतीत करते हैं ? बहुत से नर-नारियों, जिनमें विद्वान ही नहीं अपितु सीधे-सादे ग्रामीण भी शामिल थे, के मस्तिष्क में एक अर्द्ध रहस्यपूर्ण विश्वास घर करने लगा था। यह विश्वास इसलिए भी अधिक महत्त्वपूर्ण है कि अपने मामलों को सफलतापूर्वक व्यवस्था करने की इन लोगों की योग्यता की अग्नि-परीक्षा हो रही थी। ऐसा मालूम होता था कि भिन्न स्थिति

और इतिहास वाले स्त्री-पुरुषों ने यह मालूम कर लिया है कि उनके भाग्य परस्पर आश्रित हैं। वे एक-दूसरे को नई भावना से देखने लगे और यह अनुभव किया कि वे एक-दूसरे को चाहते हैं।

१९३०-३९ की दो और देन पहली अवलंबित थीं और उसकी पूरक थीं। एक बात यह थी कि यदि कोई अमेरिकन कठिनाई में हो तो बाकी लोगों का यह कर्तव्य है कि अपने शासन के जरिये उनकी मदद करें और दूसरी यह कि वे अपने शासन के माध्यम से ऐसी व्यवस्था करें कि राष्ट्र को फिर घोर मन्दी का सामना न करना पड़े। इनमें से हरके विचार को, जो संकट के समय में उत्पन्न हुआ था, और जिस पर वर्षों तक भयंकर वादविवाद होता रहा, १९४० में अधिकांश लोगों ने सम्पूर्ण रूप से स्वीकार कर लिया। वे इस पर कहाँ तक चले, यह देखना अभी शेष था।

११

अनिच्छुक विश्वशक्ति

१९३०-३९ के आरम्भ और मध्यकाल में समुद्र पार से यदाकदा यह दुःखद सूचना मिलती रहती थी कि दुनिया में कुछ युद्ध-प्रेमी राष्ट्र हैं, जो दूसरे देशों पर विजय प्राप्त करने के लिए कटिबद्ध हैं। अमेरिका के लोगों को यह बात बिल्कुल नापसंद थी। परन्तु हम में से अधिकांश यह अनुभव करते थे कि ऐसी विदेशी उलझनों को रोकना हमारे वश की बात नहीं है। सारा देश पृथक रहने की प्रवृत्ति अपनाये हुए था।

यह एक ऐसा विश्वास था जो विभिन्न मार्गों से अमेरिका के लोगों के मन में घर कर गया था। वस्तुतः सारी विदेशी चीजों के प्रति उनमें अविश्वास की भावना विद्यमान थी। आयरिशों के वंशज थे, जो इंगलैंड से प्रेम न करते थे और जर्मनों के वंशज थे जिन्हें जर्मनी से दूसरे युद्ध का डर था। और इसी तरह मध्य पश्चिम

और बड़े मैदानी इलाकों के लोग भी थे, जो पूर्ववालों और यूरोपियन कूटनीतिज्ञों पर संदेह करते थे। बहुत से ऐसे लोग थे जिन्होंने मन्दी के संकट से गहरा नुकसान उठाया था और जो अपनी तकलीफों का दोष पूंजीपतियों और बड़े व्यापारियों के लालच को देते थे। वे स्वभावतः यह विश्वास करने लगे थे कि यह 'अन्तर्राष्ट्रीय बैंकपतियों' और 'मृत्यु के सौदागरों' की मक्कारीपूर्ण चाल है जो राष्ट्रों को युद्ध के मैदान में घसीट लाती है। कम्युनिस्ट और उनके साथी भी थे जिनकी पार्टी ने उन्हें वाल स्ट्रीट और युद्ध के सामान बनानेवालों के विरुद्ध हो-हल्ला में सम्मिलित होने का आदेश दे रखा था। ऐसे भी व्यक्ति थे जिनका फ्रेंकलिन डी. रूजवेल्ट में घोर अविश्वास था। उनकी धारणा बन गई थी कि रूजवेल्ट अपना पद अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए अमेरिका को युद्ध में घसीटना चाहते हैं।

कुछ ऐसे भी नौजवान थे जो प्रथम विश्व-युद्ध से चिढ़े हुए थे। पिछली शताब्दी के बच्चे अब नौजवान बन चुके थे। उनमें से कई तो प्रभावशाली नागरिक हो गये थे। उनका विश्वास था कि प्रथम महायुद्ध में अमेरिका का कूदना उनके पूर्वजों की महान भूल थी।

१९३५, १९३६ और १९३७ के वर्षों में कांग्रेस ने तटस्थता के तीन कानून पास कर इस पृथकता की भावना को प्रकट किया। इन कानूनों का उद्देश्य अमेरिका को किसी भी युद्धरत देश को शस्त्रास्त्र और युद्ध का अन्य सामान बेचने से रोकना था। राष्ट्रपति रूजवेल्ट और विदेश विभाग ने इन कानूनों को पसंद नहीं किया। वे अनुभव करते थे कि ये कानून अव्यावहारिक हैं। इससे अमेरिका के हाथ-पैर बँध गये हैं और विदेशों में अमेरिका के प्रभाव और अधिकारों को नष्ट कर दिया है। परन्तु जनमत इतना जबरदस्त था कि उसका विरोध नहीं हो सकता था। और अब अक्टूबर १९३७ में रूजवेल्ट ने अपने भाषण में कहा कि आक्रान्ताओं को छूत के रोगियों की तरह 'निर्वासित' कर देना चाहिए, तब उसका बड़ा कड़ा विरोध किया गया।

परन्तु, घटनाचक्र अशुभ लक्षणों के साथ तेजी से आगे बढ़ता जा रहा था। और पार्श्व से जो शोर-गुल सुनायी दे रहा था, उसमें बढ़ते हुए संकट की ध्वनि स्पष्ट होती जा रही थी।

विदेशों की दुखद घटनाओं और रूजवेल्ट के लोगों को हिटलर की गति-

विधियों के माने समझाने के सतत प्रयास के फलस्वरूप अमेरिकनों की निद्रा भंग हो गयी और वे अनुभव करने लगे कि सब से पृथक रहकर वे अपना अस्तित्व बनाये नहीं रख सकते। १९३०-३९ के मध्य धीरे-धीरे लोगों की यह धारणा कि युद्ध-सामग्री निर्माता ही युद्ध की आग भड़काते हैं, विदेशों से आनेवाले समाचारों के शोरगुल में डूब गयी।

जून १९४० में फ्रांस का पतन हो गया। उस समय अमेरिका में शस्त्रास्त्रों का निर्माण तीव्रता किया जा रहा था। देश को सशस्त्र करने की नितांत आवश्यकता से प्रायः सभी सहमत हो गये। उसके कुछ सप्ताह बाद ही रूजवेल्ट ब्रिटेन को बन्दूकें और पुराने विध्वंसक जहाज देने लगे। १९४० के पतझड़ के आरम्भ तक अमेरिका में सैनिक भर्ती का काम शुरू हो गया। उस काल में राष्ट्रपति-पद के लिए दोनों उम्मीदवार रूजवेल्ट (तीसरी बार खड़े हो रहे थे) और वेंडेल विल्की इस बात पर एकमत थे कि यूरोप को सहायता की जानी चाहिए ; फिर भी दोनों ही यह बतलाने का प्रयास कर रहे थे कि अमेरिका को युद्ध में नहीं फँसना चाहिए। उसके बाद के वर्ष में ही हिटलर की सेनाएँ ब्रिटेन के नगरों पर बम बरसाने लगीं। बाल्कन देशों पर अपना अधिकार जमा लिया तथा रूस पर धावा बोल दिया। उधर जापान ने सुदूरपूर्वीय देशों पर अपना आधिपत्य स्थापित करने का कुचक्र रच डाला। इस घटनाक्रम ने अमेरिकनों की मनोवृत्ति में आमूल परिवर्तन कर दिया। वे अब कहने लगे कि अमेरिका और अधिक प्रत्यक्षरूप से हस्तक्षेप करे। उधार-पट्टा कानून (लेंड लीज एक्ट) को कांग्रेस ने प्रबल बहुमत से स्वीकृति दे दी। अमेरिका के जहाज इंगलैंड को बड़े परिमाण में युद्ध सामग्री पहुँचाने लगे। अमेरिका ने जर्मनी के विरुद्ध एक प्रकार से अघोषित युद्ध शुरू कर दिया।

उस क्षण बहुसंख्यक अमेरिकनों के दिल में यह बात बैठ गयी कि चाहे जैसे भी हो हिटलर को हराना ही चाहिए। कुछ ऐसे लोग थे जो यह चाहते थे कि अमेरिका अपनी सारी शक्ति के साथ युद्ध में कूद पड़े। लेकिन अब भी ऐसे व्यक्तियों की कमी न थी, जो रूजवेल्ट की इस नीति से सहमत न थे। इनमें चन्द ही ऐसे थे जिनकी हिटलर अथवा जापानी साम्राज्यवादियों से कोई सहानुभूति रही हो। उनका कहना था कि जब तक अमेरिका महादेश पर कोई खतरा न हो

तब तक अमेरिका को युद्ध से अलग रहना चाहिए।

तभी ७ दिसम्बर १९४१ को पर्ल हार्बर पर आक्रमण हो गया और अमेरिकावालों का रहा सहा संदेह काफूर हो गया। यह एक ऐसी चुनौती थी, जिसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती।

हमारी कोई इच्छा न रहते हुए भी घटनाचक्र ने हमें यह अनुभव करने को बाध्य कर दिया कि हमारा देश स्वतः खतरे से बाहर नहीं है। हम एक विश्व-शक्ति बन गये हैं और इसके गुरु उत्तरदायित्व को वहन करना ही पड़ेगा। हमें यह विचार नापसंद था। हम अनुभव करते थे कि हमें अपनी रक्षा आप ही करनी चाहिए। परन्तु, कोई चारा न था।

२

प्रथम महायुद्धकाल में जेहाद की भावना काम कर रही थी और साथ-साथ युद्ध का विरोध भी कुछ कम न था। इस बार ऐसा कोई विरोध न था। साथ-साथ जेहाद की भावना भी विद्यमान थी। क्योंकि प्रथम महायुद्ध सम्बन्धी भ्रांति और द्वितीय महायुद्ध में सम्मिलित होने के प्रश्न पर चल रहे विवाद ने तो अपना असर डाल ही रखा था।

हस्तक्षेप विरोधियों की भावनाजन्य भ्रांतियों ने उन्हें नियन्त्रणों और नागरिकों के त्याग की सरकारी माँग को संदेह की दृष्टि से देखने को प्रेरित किया। फिर भी उनकी देशभक्ति में कोई कमी न थी। वे स्वयं लड़ने गये अथवा अपने भाई या बेटे को लड़ाई पर भेजा। लेकिन ब्रिटेन के प्रति उनका अविश्वास और सुदूरपूर्व की अपेक्षा यूरोप को प्राथमिकता देने की हाईकमान्ड की नीति में उनका संदेह बना रहा।

पिछली मन्दी के दिन लोगों को अब भी अच्छी तरह स्मरण थे। जिन लोगों की यह धारणा बन गयी थी कि उनका भाग्य ही प्रतिकूल है तथा आगे की घटना उन्हें संकट के मुँह में ढकेल दे सकती है, वे अपने भविष्य के सामने एक अत्यन्त अशुभ प्रश्नवाचक चिन्ह लगा देखते थे। वे सोचते कि, हम लड़ेंगे, यह तो ठीक है, लेकिन उसके बाद क्या होगा? हम किस आधार पर अपने भविष्य के लिए आशाएँ बाँधें। युद्ध के उद्देश्य सम्बन्धी चर्चाएँ उन्हें बिलकुल

पीली लगती थीं। वे अपना काम करेंगे पर कोई आशा लेकर नहीं।

एकाध अपवाद को छोड़कर, अमेरिकी सेनाएँ खूब लड़ीं। अमेरिका के नागरिकों ने भी पूर्ण युद्ध की चुनौती का उचित ढंग से सामना किया। अमेरिका के उद्देश्यों में उनका पूर्ण विश्वास था। विपरीत स्थितियों में भी उनका यह विश्वास बना रहा कि चाहे कुछ भी हो विजय उनकी ही होगी। अमेरिका के लोग अपने राष्ट्र के निर्भ्रान्त योद्धा थे।

३

यहाँ द्वितीय महायुद्ध के पूर्ण सैनिक क़िस्सों की पुनरावृत्ति अभिप्रेत नहीं। यहाँ हमें एक बात पर दृष्टिपात करना है, जिसके बारे में अब तक पूरे तौर से विचार नहीं किया गया है। और वह यह कि उन चिंतापूर्ण वर्षों में अमेरिका की उत्पादन क्षमता अपनी चरम सीमा पर पहुँच गयी थी।

पिछली घोर मन्दी जनित कष्टों ने इस महत्त्वपूर्ण बात को आँखों से ओझल कर दिया था कि समय की माँग को देखते हुए १९३०-३९ में अमेरिकी उद्योग की क्षमता बड़ी तीव्र गति से बढ़ी। एतद्विषयक आँकड़े बड़े अर्थपूर्ण हैं। अधिकतम प्रामाणिक आँकड़ों के अनुसार प्रति व्यक्ति के अनुपात से उत्पादन १९००-१० में १२ प्रतिशत, १९१०-२० में केवल साड़े सात प्रतिशत और १९२०-३० में २१ प्रतिशत बढ़ा था। परन्तु हमें यह जान कर आश्चर्य होगा कि १९३०-४० में ४१ प्रतिशत बढ़ गया।

वाशिंगटन के सैनिक आयोजकों ने जो योजनाएँ बनायीं, वह वास्तव में बहुत बड़ी और शानदार थीं। युद्ध की समाप्ति तक अमेरिका के कोई सवा करोड़ सैनिक विदेशों में थे, जब कि प्रथम महायुद्ध के समय विदेशों में जानेवाले अमेरिकी सैनिकों की संख्या ५० लाख से भी कम थी। अधिकारियों ने यह निश्चय कर लिया था कि हमारे ये सैनिक सबसे अधिक सशस्त्र रखे जायेंगे और उनके सुख चैन की व्यवस्था इतिहास में अतुलनीय होगी। वस्तुतः ऐसा हुआ भी। यही नहीं, हमें अन्य देशों की सेनाओं के लिए भी सामान भेजना पड़ता था। इसके फलस्वरूप उत्पादन और व्यय में कल्पनातीत वृद्धि हुई।

१९४३ में हम जो खर्च कर रहे थे, वह प्रथम महायुद्ध के उच्चतम व्यय से

५ गुना अधिक था। १९३०-३९ में 'न्यू डील' के आलोचक कहा करते थे कि अमेरिका जिस प्रकार व्यय कर रहा है, उससे देश का दिवाला निकल जायेगा। उसमें हमारा वार्षिक बजट प्रायः ७ से ९ अरब डालर का होता था। परन्तु इसके विपरीत १९४२ में हमने ३४ अरब, १९४३ में ७९ अरब, १९४४ में ९५ अरब, १९४५ में ९८ अरब और १९४६ में ६० अरब डालर व्यय किया।

नये-नये कारखाने तेजी से बनते जा रहे थे। सभी मोटर के कारखानों में यात्री कारों के स्थान पर टैंक, ट्रक और शस्त्रास्त्र बनाये जाने लगे। कृत्रिम रबड़ से लेकर राडार तक, पानी से लेकर फ्यूजेस, एटेब्रीन, पेनिसिलिन, डी. डी. टी. से लेकर मनहटन में बनाये जानेवाले अणु-बम तक बनाने की जिम्मेदारी भी मौजूदा कारखानों पर सौंपी गयी। सरकार एक ही बात पर ध्यान दे रही थी — कम-से-कम समय में अधिक-से-अधिक उत्पादन हो।

परिणामस्वरूप अमेरिका में उपयोग्य तथा युद्ध-सामग्री का २१५ अरब डालर के मूल्य का उत्पादन हुआ। यह राशि १९३९ की कुल डालर राशि (९१ अरब डालर) से दूनी से भी अधिक है। यदि मूल्यों में युद्धकालीन बढ़ोतरी को बाद में भी दे दें, तो भी यह स्पष्ट है कि १९४५ का उत्पादन १९३९ के उत्पादन से दो तिहाई से भी अधिक था। ५ वर्ष की अवधि में अमेरिकी उद्योग ने जो चमत्कारपूर्ण काम किया वह सम्पूर्ण आर्थिक इतिहास में अतुलनीय है।

४

संघीय सरकार ने युद्धकाल में अरबों-खरबों डालर के युद्ध-सामान के जो आर्डर दिये उसका राष्ट्र के रहन-सहन के स्तर पर क्या प्रभाव पड़ा? अपूर्व समृद्धि की लहर आयी। १९३०-३९ में 'न्यू डील' के अन्तर्गत होनेवाला सीमित व्यय युद्धकाल में अपरिमित हो गया।

१९४३ तक बेकारी नाम की प्रायः कोई वस्तु नहीं रह गयी। चन्द ऐसे लोग ही बेकार थे जो अधिक अच्छे काम की प्रतीक्षा में थे। १९४४ तक हर जगह समृद्धि के लक्षण स्पष्ट हो गये। किसी भी शहरी होटल में कमरा पाना कठिन था। वे उपहार गृहों में, जहाँ पहले भोजन के लिए मेज खाली पड़ी रहती थीं १२ बजते-बजते भर जाते थे। फरकोट और जेवर की बिक्री बढ़ रही थी।

और वह भी अधिकतर नक़द। विलास की चीज़ों का बाजार, जो पिछले समय गिरता जा रहा था, एकाएक चमक उठा। संगीत भण्डार के एक संचालक ने बताया कि हमारी दुकान में पुराना या नया जो भी प्यानों आता है, ठहर नहीं पाता। न्यू इंगलैंड में, जो १९३०-३९ के पूर्व से ही उपेक्षित हो गया था, नये-नये और रंग-बिरंगे मकान खड़े हो गये थे और हो रहे थे।

जिस राष्ट्र के बारे में लोगों की धारणा यह बन गयी थी कि वह युद्ध के कारण तंगदस्त होता जा रहा है, उसमें समृद्धि की लहर एक विचित्र बात थी। मुद्रास्फीति को रोकने के उद्देश्य से सरकार अपना व्यय घटाने के लिए हर प्रकार से प्रयत्नशील थी। अधिकतम मूल्य निर्धारित किया गया। आवश्यक वस्तुओं की राशनिंग की गयी, मजदूरी को जहाँ का तहाँ, निश्चित कर दिया गया, अत्यधिक लाभ कर और वैयक्तिक आय-कर में अभूतपूर्व वृद्धि कर दी गयी। इसमें उसे कुछ सफलता भी मिली। लेकिन, फिर भी समृद्धि की जो लहर चली थी, वह रुक न सकी। और १९३०-३९ के सूखे के बाद यह ऐसी स्थिति थी, जिसका स्वागत किया गया।

अब प्रश्न उठता है कि पैसा किसकी जेब में जा रहा था?

सामान्यतः बड़े-बड़े कारपोरेशनों के स्टाकहोल्डर अधिक लाभान्वित न हुए। इनमें से अनेक कारपोरेशनों को युद्ध-सामग्री देने के बड़े आर्डर मिल रहे थे, लेकिन लाभकर तथा १९१८ के गड़बड़झालों को देखते हुए व्यवस्थापकों की सावधानी के कारण लाभांश में खास बढ़ोतरी न हो सकी। शेयर बाजार पिछड़ा रहा। इसी प्रकार बड़े-बड़े पूंजीपतियों के दिन भी उतने अच्छे न थे।

कुछ छोटी कम्पनियों को, जो मंदी के दिनों में कठिनाई से जिन्दा रह पायी थीं, लम्बे-लम्बे ऑर्डर मिले और खूब पैसा बटोरा, पर इन पर भी टेक्स लगा और इन्हें अपने ठेके बार-बार नये कराने पड़े। ऐसी अनेक छोटी कम्पनियाँ भी थीं, — उदाहरणार्थ कपड़ा व्यवसाय — जिन्हें सरकार से कोई आर्डर न मिला, पर उन्होंने खूब उन्नति की। इन पर भी टेक्स लगा। अन्य व्यवसाय निश्चित रूप से संकट में थे।

अमीरों ने भी कुछ फायदा उठाया, परन्तु लाभकर देने के भय से उन्होंने अपने पास बहुत कम रखा। स्थान-स्थान पर अपव्यय के जो लक्षण देखने में

आये, उनका कारण अधिकांशतः लाभ-कर का भय और कम्पनी के नाम पर होनेवाला व्यय था। युद्ध के कारण कुछ लोग जायज ढंग से भी करोड़पति बने — ऐसा विशेष कर तेल व्यवसाय में हुआ। जिन पर रिक्तिकरण-छूट मिलने के कारण संघीय करों का पूरा बोझ न पड़ा। लेकिन धनी और ईमानदार लोगों को सामान्यतः विशेष लाभ न हुआ।

युद्ध सामग्री बनाने वाले उद्योगों से इतर व्यवसायों में लोगों के वेतन और मज़दूरी में वृद्धि रोक दी गयी थी। इस कारण वे भी फायदा नहीं उठा रहे थे। हाँ, कामों के वर्गीकरण तथा योग्यता के कारण खास-खास लोग लाभान्वित हो रहे थे। जो लोग लाभांशों और इसी प्रकार का अन्य आय पर निर्भर थे, वे भी अधिकांशतः घाटे में रहे; मुद्रास्फीति के कारण तो उनकी स्थिति वस्तुतः और भी खराब हो गई।

युद्ध के कारण लाभ उठाने वालों में मुख्यतः किसान, इंजीनियर, कारीगर तथा युद्ध संबंधी अन्य कामों के विशेषज्ञ ही थे। युद्ध सामग्री बनानेवाले उद्योगों में काम करने वाले निपुण मज़दूरों ने भी अच्छा फायदा उठाया।

किसानों की विशेष चाँदी रही। पिछले समय उन पर संकट ही संकट पड़ते रहते थे। लेकिन अब कृषि सामग्री के दाम अच्छे थे, माँग भी अधिक थी, मौसम अनुकूल था और कृषि के तरीकों में बहुत सुधार हो गया था। १९४३ तक उनकी क्रय-शक्ति १९३०-३९ के अंत काल की अपेक्षा दूनी हो गयी।

यह सच है कि बाद में मज़दूरी वृद्धि रोक दी गयी। क्योंकि युद्ध श्रम बोर्ड 'वार लेबर बोर्ड' उनकी मज़दूरी को एक सीमा के अन्दर ही रखना चाहता था। लेकिन तथ्यतः एक वर्ग के रूप में युद्ध सामग्री बनाने वाले उद्योगों के मज़दूरों ने नयी समृद्धि का सब से अधिक लाभ उठाया। प्रमाण के लिए इन आँकड़ों को देखिये। १९३९ से १९४५ तक उनकी औसत साप्ताहिक आय ८६ प्रतिशत बढ़ गयी। उनकी स्थिति १९३९ की तुलना में कहीं अधिक अच्छी हो गयी। और उनकी वास्तविक मज़दूरी में काफी वृद्धि हुई।

युद्धकालीन समृद्धि से अल्प वित्तभोगी वर्ग को सामान्यतः अच्छा संबल मिला। हाँ, इसके अनेक अपवाद भी हैं।

कि हमारी पारस्परिक निर्भरता बढ़ती जा रही है ।

६

१९४५ का वर्ष महान घटनाओं का वर्ष था । इसके आरंभ में हिमाच्छादित आर्डेन्स पर नाजियों के पैर उखड़ रहे थे, उधर जनरल मेकार्थर की सेना फिलीपिन्स सागर में आगे बढ़ रही थी । मई के आरंभ में मुसोलिनी और हिटलर मर चुके थे और जर्मनी ने आत्मसमर्पण कर दिया था । जुलाई में न्यू मैक्सिको में अणुबम का प्रथम विस्फोट हुआ । अगस्त में जापान के दो नगरों में अणुबम गिराये गये और जापान ने आत्मसमर्पण कर दिया । इसके कुछ ही पहले स्टालिन ने अपनी सेनाएँ जापान के विरुद्ध रवाना की थीं । जापान पर विजय के दिन सम्पूर्ण दुनिया में हर्षोल्लास का वातावरण छा गया । अब शान्ति के युग का उदय हो चुका था ।

इधर अमेरिका में अपनी सेनाएँ वापस बुलाने की माँग बड़ी तीव्र हो रही थी । इसलिए हमने सैनिकों को यथाशीघ्र स्वदेश बुलाना शुरू कर दिया । तभी हमारे सामने दो आश्चर्यजनक बातें हुई ।

प्रथम बात आनन्ददायक थी । असंख्य लोगों ने यह आशंका व्यक्त की थी कि युद्ध की समाप्ति के बाद घोर मंदी का सामना करना पड़ेगा । पर, वास्तव में ऐसा हुआ नहीं । इसके विपरीत, नयी समृद्धि का क्रम बना रहा । सार्वजनिक व्यय इतना बढ़ने लगा कि संघीय नियंत्रण में शिथिलता के साथ ही मुद्रास्फीति युद्धकाल से भी अधिक बढ़ गयी । [१९४० से १९४५ तक सामान्य आय वाले परिवारों का जीवन निर्वाह व्यय २८.४ प्रतिशत बढ़ा था, जब कि १९४५ से १९४९ तक वह ३१.७ प्रतिशत तक चला गया, और वस्तुओं के मूल्य बढ़ते ही जा रहे थे ।] कई हड़तालें हुई, जिनमें संघीय सरकार को मध्यस्थता करनी पड़ी । मज़दूरों की माँगों का कुछ अंश तो स्वीकार हो ही गया । फलस्वरूप मजदूरों की बढ़ी हुई मजदूरी चुकाने के लिए जिन्सों के दाम बढ़े । और मज़दूरों की मज़दूरी केवल एक बार नहीं, बल्कि तीन बार बढ़ायी गयी । इसका कुप्रभाव कुछ खास उद्योगों और निश्चित आय वाले परिवारों पर पड़ा । परन्तु समृद्धि की सामान्य गति में कोई अन्तर न पड़ा। सरकारी व्यय बेहद बढ़ गया । फिर भी उस समय

अमेरिका के सामने यह आर्थिक सवाल नहीं था कि वह जितना उत्पादन कर सकता है उसकी पूरी खपत होगी या नहीं। प्रश्न यह था कि देश में खपत के अनुरूप उत्पादन हो सकता है या नहीं।

एक और आश्चर्यजनक बात हुई, जो मस्तिष्क को अशान्त कर देने वाली थी। हिटलर के अवसान तथा मेकार्थर के अन्तर्गत जापान के आत्मसमर्पण के बाद हम शान्ति की सांस लेने ही लगे थे कि यह स्पष्ट होने लगा कि अब सोवियत रूस विश्व विजय करना चाहता है। हमारे लिए यह आवश्यक हो गया कि सुदूरपूर्व और यूरोप में हम अपनी सेनाएँ रखें, आर्थिक सहायता देकर ब्रिटेन को पुनः अपने पैरों पर खड़ा करें और 'ट्रूमन सिद्धान्त' के अन्तर्गत यूनान और तुर्की को आवश्यक सहायता दें। भूख के मारे रूस के सामने आत्मसमर्पण करने से जर्मनी को बचाने के लिए उसे विमानों द्वारा सामान भेजना पड़ा और पश्चिमी यूरोप के गैर कम्युनिस्ट राष्ट्रों को 'मार्शल योजना' के अन्तर्गत अरबों डालर की सहायता देने का कार्यक्रम शुरू करना पड़ा। पश्चिमी यूरोप की सुरक्षा के लिए अतलांतक संधि संस्था की स्थापना करनी पड़ी तथा उसकी सुरक्षा के लिए भारी योगदान करना पड़ा। यही नहीं, १९५० में दक्षिणी कोरिया पर कम्युनिस्टों के आक्रमण को रोकना पड़ा। और इसके साथ-साथ संयुक्त राष्ट्रसंघ की प्रत्येक परिषद और आयोग के प्रत्येक अधिवेशन में रूस की ओर से अड़ंगेबाजियों का सामना भी करना पड़ा ही।

फलस्वरूप सेना में भर्ती का काम जारी रखना आवश्यक हो गया। सेना का पुनर्गठन जरूरी हो गया, जिसके फलस्वरूप मुद्रास्फीति को प्रत्यक्ष संबल मिला। अपनी विदेश-नीति को संतुलित करने के हमारे प्रयास सफल रहे। आश्चर्यजनक परिमाण में बढ़ी हुई हमारी जिम्मेदारियों के साथ-साथ देश में राजनीतिक संघर्ष जनित भार भी हम पर कुछ कम न था। यह आरोप भी लगाया गया कि हमारी ही गलतियों के कारण संसार के कई हिस्सों में कम्युनिज्म को अपना पैर फैलाने का अवसर मिल गया। यह भी पता चला कि कई मजदूर संस्थाओं, उदार जन-सेवा संगठनों और सरकारी विभागों में अमेरिकी कम्युनिस्टों का प्रवेश हो गया है। उस समय सोवियत विरोधी वातावरण इतना उग्र बन गया था कि देश के अनेक प्रतिष्ठित नागरिकों पर भी निराधार आरोप लगाये गये। लेकिन दूसरी

तरफ, सोवियत के प्रति हमारे अविश्वास के कारण ही यूरोप के पुनर्निर्माण, सहायता और सुरक्षा के लिए कानून पर कानून बनने लगे। यूरोप के लोग यह जानते थे कि युद्ध से उन्हें जितनी हानि पहुँची है उतनी हमें नहीं पहुँची। फिर भी हो सकता था कि जहाँ-तहाँ हमारी इस सहायता का विरोध होता, लेकिन हम उनकी सहायता को इतने चिंतित थे कि हमारा यह उदार कार्यक्रम चलता रहा।

अन्तर्राष्ट्रीय तनाव में वृद्धि के साथ एक और आश्चर्यजनक बात हुई। वास्तविक पृथकतावाद समाप्त हो चुका था।

वस्तुतः यह हुआ कि जो अमेरिकन पृथक रहने की नीति के समर्थक थे या हो सकते थे वे भी अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक आकाश साफ हो जाने पर हस्तक्षेप की नीति के हिमायती हो गये — खासकर सुदूरपूर्व के मामले में। अंतलांटिक महासागर के उस पार जब उनकी दृष्टि जाती, तो वे प्रायः अलग रहने की अपनी पुरानी नीति की हिमायत करते, ब्रिटेन को सहायता देने के विरुद्ध मतदान करते और यूरोप की सहायता के लिए निर्धारित रकम में भारी कटौती की माँग करते। परन्तु जब वे प्रशांत महासागर के उस पार दृष्टिपात करते तो अलग रहने की उनकी भावना तिरोहित हो जाती। च्यांगकाई-शेक में उनका पूरा विश्वास था और वे उनकी पूरी सहायता करना चाहते थे।

आखिर इन सब का परिणाम क्या निकला ? हमारे यहाँ यूरोप और एशिया में हस्तक्षेप के समर्थक तो बहुतेरे हो गये, परन्तु अलग रहने की नीति का समर्थक कम-से-कम थोड़े समय के लिए ही सही प्रायः एक भी न रहा। हमारी विदेश-नीति पर चाहे जो भी विवाद रहा हो, परन्तु इस बात पर प्रायः सभी सहमत थे कि गैर कम्युनिस्ट संसार के अभिभावक बनने और आर्थिक सहायता और सलाह देने की जिम्मेदारी अमेरिका पर ही है।

युद्धोत्तर काल की यही स्थिति थी, जिस पर १९३५ का अमेरिकन कभी विश्वास नहीं कर सकता था।

यह एक बिलकुल नयी बात थी — ऐसी बात थी कि जिसके लिए हम स्वयं तैयार न थे। अमेरिका में ऐसे विशेषज्ञों की कमी थी, जो चीन, कोरिया, इंडो-चीन, ईरान, मिश्र और अन्य द्वीपों की परिस्थिति से पूर्णतः परिचित हों। हमने ऐसे लोगों को जल्द प्रशिक्षित करना आरंभ कर दिया। विदेश-नीति की समस्याएँ

हममें से अधिकांश लोगों के लिए नयी और विचित्र थी। हम स्वभाव से विदेशों में सरकारी प्रचार में लगना पसन्द नहीं करते थे। हम पर विश्व के नेतृत्व का भार आ पड़ा था, परन्तु हमारी भावना उसके लिए प्रस्तुत न थी। अपनी परम्परागत अथवा परिस्थिति जन्य अन्तःप्रेरणा हमें अमेरिका को ही अपना सब कुछ मानने के लिए विवश करती थी। हम विश्व-शक्ति बन गये, लेकिन स्वेच्छा से नहीं।

१२

अंधकार से प्रकाश की ओर

वर्तमान शताब्दी के मध्य में कारीगरों, कूटनीतिज्ञों, विद्वानों और पत्रकारों का छोटा-सा दल अपने नये उत्तरदायित्व निभाने बाहर चला तो एक प्रश्न बार-बार पूछा जाने लगा, 'इसके पीछे कम्युनिस्ट प्रचार का भी कुछ हाथ था।' अमेरिका में जाति भेद को मिटाने के लिए आप क्या कर रहे हैं?' एशियाइयों, अफ्रीकनों और सभी देशों के अश्वेत लोगों के लिए यह बात बड़ी महत्त्वपूर्ण थी कि अमेरिका बाहर क्या कहता है और स्वयं अपने यहाँ क्या करता है।

इन प्रश्नों का जवाब प्रवासी अमेरिकनों के पास न था। वे इस बात से इनकार करने में असमर्थ थे कि अमेरिका में जाति भेद कुछ हद तक विद्यमान है। परन्तु वे जानते थे कि प्रश्नकर्ताओं की जानकारी पुरानी थी और एक हद तक वह तोड़-मरोड़ कर सामने रखी जाती थी। वे दुनिया को यह कह नहीं पा रहे थे कि पिछले कुछ दशकों में स्थिति बहुत कुछ बदल चुकी है।

१९०० में अमेरिका में निग्रो की संख्या ९० लाख भी न थी जब कि १९५० में उनकी संख्या करीब डेढ़ करोड़ थी और वे अधिकतर दक्षिण में बसे हुए थे। ९० प्रतिशत नीग्रो न केवल दक्षिण में रहते थे, बल्कि

उनकी तीन चौथाई आबादी तो बिलकुल देहाती इलाकों में बसी हुई थी। उनमें कम से कम ४४.५ प्रतिशत नीग्रो अशिक्षित थे। अधिकतर वे नितांत निम्न, गंदे और स्वल्प अर्थकरी काम करके अपनी जीविका चलाते थे। रुई चुनना उनका खास पेशा था। और वे तत्कालीन अलाभकर एवं हीन फार्म खेतिहर प्रणाली के शिकार थे। उनमें से कई तो ऋण के कारण वस्तुतः दासवृत्ति कर रहे थे।

१९०० में लगाये गये अनुमान के अनुसार सिर्फ अलबामा में मतदान करने की उम्र के योग्य १,८१,४७१ नीग्रो में से केवल ३ हजार नीग्रो के नाम दर्ज थे। उस समय उनकी पिटाई आम आमतौर पर होती थी। १९०० में ऐसे कम से कम ११५ मामले दर्ज किये गये, जब कि १९०१ में यह संख्या १३० तक चली गयी। परन्तु १९४० से १९४६ तक ऐसे मामलों की संख्या प्रतिवर्ष औसतन ४ पर आ गयी।

उत्तरी हिस्से में रहनेवाले लगभग १० लाख नीग्रो की स्थिति अपेक्षाकृत अच्छी थी, इसके कई कारण थे। उत्तर और पश्चिम में मजदूरी का स्तर ऊँचा था, स्कूल अच्छे थे और सफाई व्यवस्था पहले से बढ़िया थी। एक बात और थी और वह यह कि इस क्षेत्र के लोगों को नीग्रो से भय कम लगता था। छोटे मोटे समाज में जो थोड़े से नीग्रो थे, उनका आदर अच्छा होता था और समाज में उन्हें वस्तुतः बराबरी का पद प्राप्त था। परन्तु उत्तर में भी साधारण नीग्रो की वही स्थिति थी, जो नाटकों में छोटे मोटे विदूषकों की होती है। कुलीन लोग अपने अश्वेत नौकर की उक्तियों की उसी प्रकार चर्चा करते, जिस प्रकार किसी बच्चे की तोतली उक्तियों की होती है।

जो नीग्रो समर्थ होते, वे साधारणतः उत्तर की ओर बढ़ते। १९१५ तक तो उनका उत्तर की ओर आना तेज हो गया। युद्ध के कारण उत्तरवर्ती उद्योगों में अनिपुण मजदूरों की माँग बढ़ गयी थी। दक्षिण में यह खबर फैलने लगी कि उसके भाई बंधु हारलेम या फिलाडेल्फिया अथवा शिकागो में अधिक संपन्न हो गये हैं; उन्हें नियमित रूप से भोजन मिल रहा है और वहाँ 'जिम क्रो' जैसा कोई प्रतिबंध नहीं है। और वहाँ से लोगों का उत्तर की ओर आना जारी रहा। परन्तु, जब उत्तर में, खासकर बड़े नगरों में उनकी संख्या बेहद बढ़ने

लगी तो बहुत से उत्तरवासियों में भी वही भय घर करने लगा जो दक्षिणवासियों में था। जिन कामों पर श्वेतों को लगाया जा सकता था, उनसे नीग्रो को हटाना और उन्हें उनके गंदे क्षेत्रों में रखने पर लोग विशेष ध्यान देने लगे। १६२०-२६ के मध्यकाल में जाति-भेद का दौरदारा न केवल दक्षिण में था, बल्कि उत्तर में भी।

इसके बाद घोर मंदी आयी और इसके कारण नीग्रो की स्थिति बड़ी दर्दनाक हो गयी। उस समय लाखों अमेरिकनों का दिल रोजी छूट जाने की आशंका से भयभीत रहता था। अनिवार्यतः सबसे बुरी स्थिति उन्हीं की थी, जिन्हें काम तो सबसे अंत में मिलता था, पर जो बर्खास्त सबसे पहले होते थे। लेकिन उस जमाने में भी दक्षिण से नीग्रो का निष्क्रमण जारी रहा — मुख्यतः इसलिए कि उत्तर में उन्हें दक्षिण की अपेक्षा अधिक सहायता उपलब्ध हो सकती थी। १६३५ में कई नगरों में नीग्रो परिवारों की औसत आय का अनुमान लगाया गया था। उत्तरी क्षेत्रों में नीग्रो परिवारों की औसत आय श्वेत परिवारों की औसत आय की प्रायः आधी या इससे कुछ कम थी। दक्षिणवर्ती नगरों में उनकी आय इससे भी कम थी। उदाहरणार्थ मोबाइल, अलबामा आदि में नीग्रो परिवारों की औसत वार्षिक आय ४८१ डालर थी जब कि श्वेत परिवारों की १४१६ डालर और उसी वर्ष उत्तरी क्षेत्रों में रहनेवाले कुल नीग्रो परिवारों में लगभग आधे परिवार सरकारी सहायता पर आश्रित थे।

कम्युनिस्टों ने इस स्थिति का लाभ उठाने की जी-तोड़ कोशिश की। इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं। उनके मनोनुकूल सर्वहारा वर्ग का निर्माण तो हो ही गया था। लेकिन, फिर भी वे मुट्ठी भर नीग्रो को ही कम्युनिज्म में दीक्षित करने में सफल हो सके। इसका कारण कुछ हद तक यह था कि नीग्रो स्वयं में एक वर्ग न थे। अलबत्ता उनकी एक पृथक जाति थी। तिस पर स्वयं उनकी जाति में कई श्रेणियाँ बनी हुई थीं। कम्युनिस्टों की बात उनमें से अनेक को अच्छी न लगी। कम्युनिस्टों की असफलता का एक कारण यह भी था कि कम्युनिज्म लोकप्रिय न था और जैसा कि एक नीग्रो ने कहा, 'काला होना ही काफ़ी बुरा है, फिर लाल बनने की क्या जरूरत।' सबसे बड़ी बात तो यह

थी कि कम्युनिस्ट सिद्धांत और कार्यविधि के विदेशीपन से उन्हें स्वाभाविक नफ़रत थी।

द्वितीय विश्वयुद्ध शुरू होते-होते आर्थिक विकास की गति तीव्र हो गयी। मजदूरी का सामान्य स्तर बढ़ गया और इसका लाभ उठाने से नीग्रो भी वंचित न रह सके। यह बात जरूर है कि इसका लाभ उन्हें कुछ देरी से मिल पाया क्योंकि श्वेतांग मजदूर अच्छे काम स्वयं अपने लिए रखना चाहते थे और उनकी यह मनोवृत्ति प्रथम महायुद्ध काल की अपेक्षा इस समय अधिक सबल हो गयी थी।

इस समय तक एक नयी विचारधारा भी सामने आ गयी थी। असंख्य अमेरिकनों के मन में यह बात आने लगी थी कि लोकतंत्र के लिए लड़नेवाले देश में किसी शोषित एवं उपेक्षित जाति का बना रहना इस राष्ट्र के लिए कलंक की बात है। नीग्रो नेताओं ने उनके मस्तिष्क में यह बात बैठाना शुरू कर दिया कि सेना में लिये गये नीग्रो जवानों को अलग रखा जाता है और उनसे हीन काम कराया जाता है। इस बात से उन अमेरिकनों की अन्तःपीड़ा और बढ़ी। इस रंग भेद के विरुद्ध तथा शस्त्रास्त्र बनानेवाले कारखानों में 'उचित काम दिलाने' के आन्दोलन को उत्तरी क्षेत्रों में श्वेतांगों का अच्छा समर्थन मिला। दक्षिण में ऐसे कट्टरपंथी अब भी विद्यमान थे, जो 'श्वेतांगों' की सर्वश्रेष्ठता का नारा बुलन्द करते थे, परन्तु वहाँ भी ऐसे लोगों की कमी न थी जिनकी अन्तरात्मा को यह बात कुरेद रही थी। वे इस बात को समझते जा रहे थे कि जनसाधारण के एक भाग को आवश्यक उपभोग्य सामग्री से वंचित रखकर उसे गरीबी के गढ़े में जान-बूझकर ढकेलना कितना अशोभनीय है। और दक्षिण में नीग्रो की गरीबी और कष्ट की प्राचीन समस्याओं का सहानुभूतिपूर्वक समाधान खोजने के लिए वे प्रयत्नशील थे।

कुछ काल तक तो जागरण का यह वातारण अनिश्चित-सा रहा। युद्धकाल में लिखित अपनी पुस्तक, "एन अमेरिकन डायलेमा" में गुन्नार मिर्दल ने कहा, "नीग्रो पत्र-पत्रिकाएँ पढ़ने तथा दक्षिण और उत्तर में नीग्रो लोगों की स्थिति का अध्ययन करनेवाले प्रेक्षकों ने जो कहा है, उससे मुझे विश्वास हो गया है कि आज अमेरिकन नीग्रो लोगों में पृथक रहने की भावना, यहाँ तक कि सनक तो

है ही, उनमें अस्पष्ट, भ्रांत तथा कुछ असंतोष भी है।" जैसा कि १९४३, १९४४ और १९४५ में बहुतेरे लोगों का अनुमान था, मिर्दल के मन में भी यह आशंका थी कि युद्धोत्तरकाल में पुनः जोर की मन्दी आयेगी और इससे जो संघर्ष पैदा होगा, वह नीग्रो की प्रगति में व्यवधान डाल सकता है।

२

परन्तु, युद्धोत्तरकालीन मन्दी जैसी कोई बात न हुई। अमेरिका की अशांत अन्तरात्मा निरन्तर कार्यशील थी। इसके फलस्वरूप युद्धोपरांत ऐसे-ऐसे परिवर्तन हुए, जिन पर एक दशक पहले के लोग सहसा विश्वास न कर सकते थे।

सुप्रीम कोर्ट ने कई ऐसे निर्णय किये जिनके अनुसार नीग्रो लोगों को चुनाव में भाग लेने तथा शिक्षा का लाभ उठाने से वंचित रखनेवाले कई कानून और रिवाज़ गैरकानूनी घोषित कर दिये। एक निर्णय के फलस्वरूप जाति-भेद मूलक मिलकियत कानून अवैध हो गए। दक्षिण के कई राज्यों ने पाल टैक्स हटा लिया। इस टैक्स के कारण बहुतेरे अमेरिकन — श्वेत और अश्वेत-चुनाव में भाग लेने से वंचित थे। १९४८ के चुनावों में दक्षिण के कोई १० लाख नीग्रो लोगों ने मतदान किया। वायु एवं जलसेना में रंगभेद समाप्त हो गया तथा उनमें नीग्रो लोगों को अलग रखने के रिवाज में भी संशोधन कर दिया गया। "उचित रोजी देने" विषयक कानून के दबाव तथा काम पर लगाने की उदार नीति का आदर्श कायम करने की कई उद्योग-मालिकों की उत्कट अभिलाषा ने नीग्रो लोगों के लिए नये-नये कामों के द्वार खोल दिये, जिसकी कल्पना भी उन्होंने न की होगी। उदाहरणार्थ, न्यूयार्क नगर में ऐसे-ऐसे परिवर्तन हो गए थे कि लम्बी अवधि बाद वहाँ लौटनेवाला व्यक्ति आश्चर्यचकित हुए बिना न रहता। बसों में और नगर की प्रधान सड़कों पर अब नीग्रो लोगों के झुण्ड के झुण्ड देखे जा सकते थे। वे ऐसे कामों पर लिये जा चुके थे, जो पहले केवल श्वेतों के लिए सुरक्षित थे। यही नहीं, होटलों, उपाहारगृहों और थियेटरों में नीग्रो पर लगा प्रतिबन्ध समाप्त हो चुका था।

१९२०-२९ से ही कला को, खासकर दीर्घस्वर गान-कला की नीग्रो लोगों की देन को अमेरिका के बुद्धिजीवी स्वीकार करने लगे थे। कालक्रमेण अमेरिकनों

की यह जागरूकता तथा उक्त गान कला के प्रति उनकी दिलचस्पी इतनी बढ़ गई कि न्यू ओर्सियन्स और मेम्फिस के दीर्घस्वर गायकों को बड़ा आदर दिया जाने लगा। इसी कारण ड्यूक एलिगटन और लुई आर्मस्ट्रांग को हजारों संगीतज्ञों की श्रद्धा प्राप्त हुई। इधर निकट पूर्व में मध्यस्थ के रूप में राल्फ बुञ्चे की उनकी राजनीतिज्ञता तथा सचाई के लिए, असंख्य श्वेतांगों ने भी प्रशंसा की। परन्तु नीग्रो जाति को इससे भी अधिक सम्मान 'जो लुई' के कारण मिला जिसे न्यूयार्क के एक खेलकूद संवाददाता ने नीग्रो जाति का अभिमान, मानव जाति का गौरव कहा। १९४०-४९ की अवधि में तो अन्य खेलों में भी नीग्रो खिलाड़ी अधिक संख्या में देखे जा सकते थे। बेज़बाल खेलनेवालों में जेकी राबिन्सन श्वेत और अश्वेत दोनों के प्रिय हैं। १९५० तक तो बेज़बाल खिलाड़ियों के चुनाव में रंगभेद जैसी कोई चीज़ ही न रह गई थी। रेडियो संवाददाता खिलाड़ियों की जाति न बताते थे। और अनेक खेलप्रेमी थे, जो घर बैठे खेलों का आनन्द लेते। वे राय केम्पानेला की औसत 'बैटिंग' तुरन्त बता सकते थे, पर जो यह नहीं जानते थे कि वह नीग्रो है।

श्रीमती एलिनर रूज़वेल्ट के शब्दों में संभवतः सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण बात यह हुई कि जहाँ तक दोनों जातियों के एकीकरण का संबंध है, बहुत-सी बातें अब निश्चित-सी मान ली गई हैं। इसकी पहली जानकारी मुझे १९४६ में ह्वाइट हाउस के एक समारोह के सिलसिले में मिली। समाचार-पत्रों की कुछ महिला प्रतिनिधियों ने स्वागत-विधि को निकट से देखा था; दिनांत में वे मेरे पास आयीं और कहने लगीं, "क्या आप जानते हैं कि पिछले १२ वर्ष में क्या हुआ? यदि १९३३ के ऐसे समारोह में अश्वेतांग खुलेआम शामिल होते और उपस्थित लोगों से इस तरह मिलते, तो देश के प्रायः सभी समाचार-पत्रों में यह खबर छप जाती। हमारे लिए अब यह कोई समाचार न रहा और इसलिए हममें से कोई भी अब इसका फिक्र न करेगा।"

अब पत्र-पत्रिकाओं तथा चलचित्रों ने नीग्रो को कंचुकी या निम्न पात्र के रूप में दिखाने की परिपाटी बन्द हो गई थी। प्राचीन परम्परा प्रायः समाप्त हो चुकी थी।

इन सभी परिवर्तनों में सब से अधिक जोरदार परिवर्तन संभवतः दक्षिण

और उत्तर के श्वेत नवयुवकों का मानसिक परिवर्तन था। वे नीग्रो को बिना किसी रंगभेद के अपना लेने को कृत संकल्प होने लगे थे। और उनकी यह विचारधारा तब स्पष्ट हुई, जब सुप्रीम कोर्ट के एतद्विषयक निर्णयों के अंतर्गत दक्षिण के कई विश्वविद्यालयों में नीग्रो को सब के समान सुविधाएँ दी गयीं। विश्वविद्यालय अधिकारियों को भय था कि कहीं कोई गर्म दिमागवाला श्वेतांग इसके विरुद्ध कोई आंदोलन न खड़ा कर दे। परन्तु तब से लेकर १९५१ तक ऐसी एक भी दुर्घटना न घटी। छात्रों ने इसे अपने प्रगतिपथ के नवीनीकरण के रूप में स्वीकार कर लिया।

साथ-साथ ओल्ड साउथ के अर्थतन्त्र में भी एक महान परिवर्तन हो रहा था, जिसका नीग्रो लोगों पर बड़ा असर पड़ा। रुई चुनने तथा उसे साफ करने के यन्त्रों के आविष्कार ने फार्म खेतिहर प्रणाली की जड़ पर कुठाराघात कर दिया। हल्के-हल्के जार्जिया, अलबामा और केरोलीना के रुई बागान नष्ट होते जा रहे थे, क्योंकि मिसिसिपी डेल्टा, टेक्सास, ओकलाहोमा, न्यू मेक्सिको और एरिजोन के रुई उत्पादकों ने रुई की खेती में यन्त्रों का इस्तेमाल शुरू कर दिया था और यह उनके लिए अधिक लाभदायक सिद्ध हो रहा था। धीरे-धीरे दक्षिण में रुई के स्थान पर पशु-पालन, साग-सब्जी तथा देवदार के पेड़ उगाने पर अधिक बल दिया जाने लगा। इसके फलस्वरूप भूतपूर्व मुजारे — क्या काले, क्या गोरे — आजीविका के लिए औद्योगिक नगरों की ओर जाने लगे।

१९५० की जनगणना के आँकड़े उस पर विशेष प्रकाश डालते हैं। जैसा कि हम पहले देख चुके हैं १९०० में अमेरिका के नीग्रो ज्यादातर दक्षिण के देहातों में रहते थे। १९५० तक उसके पाँचवें भाग से भी कम नीग्रो वहाँ रह गये थे। और इनमें से आधे से भी कम लोग खेतिहर थे। अलबामा, आर्कन्सास, जार्जिया तथा मिसिसिपी में १९४० से ही नीग्रो जनसंख्या में ह्रास होने लगा था। केरो-लीना में उनकी संख्या अवश्य बढ़ रही थी, परन्तु बहुत थोड़ी। उत्तरी प्रदेश से प्राप्त आँकड़ों से यह स्पष्ट हो गया था कि वहाँ नीग्रो लोग एक जगह एकत्र न होकर कई स्थानों पर बसते जा रहे हैं।

अश्वेत लोगों की आर्थिक स्थिति के विषय में द्वितीय महायुद्ध काल में गुन्नार मिर्दल ने लिखा है :

"नीग्रो लोगों की आर्थिक स्थिति ऐसी निम्न है कि उसका निदान खोजना जरूरी है। उनमें कुछ ही ऐसे लोग हैं, जिन्हें उच्च या मध्यम वर्ग का पद प्राप्त है, शेष नीग्रो तो बिलकुल यतीम हैं—वे चाहे दक्षिण के देहाती इलाकों में रहते हों, अथवा उत्तर और दक्षिण के नगरों की गंदी बस्तियों में। उनके पास संपदा नाम की कोई वस्तु नहीं है। उनका घरेलू सामान भी अनुपयुक्त और टूटा-फूटा है। उनकी आय न केवल कम है, बल्कि अनियमित भी। वे प्रायः लूट लाते और कूट खाते हैं। भविष्य की सुरक्षा जैसी कोई चीज़ नहीं। उनकी संपूर्ण संस्कृति, वैयक्तिक स्वार्थ और अभिलाषाएँ संकीर्ण हैं।"

इस शताब्दी के मध्य तक भी कुछ हद तक यह स्थिति विद्यमान थी। परन्तु इस बात के प्रमाण मिलने लगे थे कि १९४०-४९ की समृद्धि के वातावरण का प्रभाव नीग्रो लोगों पर भी पड़ा।

१९४८ के इस अनुमान में सचाई है कि सामान्य नीग्रो परिवार की औसत आय उसी श्रेणी के श्वेत परिवार की औसत आय से ४७ प्रतिशत कम थी। परन्तु राष्ट्रपति की सलाहकार परिषद् द्वारा १९५० में प्रकाशित 'नेशनल इकनामिक रिव्यू' में जो बातें बतायी गयीं, वे इससे भिन्न थीं। नेशनल इकनामिक रिव्यू में परिवारों और व्यक्तियों की कई श्रेणियाँ की गयी थीं। एक श्रेणी वह थी, जिसकी वार्षिक औसत आय १ हजार डालर थी। इस श्रेणी में ८३ प्रतिशत श्वेत और १५ प्रतिशत नीग्रो थे। दो प्रतिशत के बारे में कोई निश्चय नहीं किया जा सका। इसके बाद की श्रेणी में एक हजार से दो हजार डालर वार्षिक आय वाले परिवार और व्यक्ति रखे गये थे। इसमें ९२ प्रतिशत श्वेत और ७ प्रतिशत नीग्रो थे। ३ हजार और इससे अधिक की आयवालों में ९७ प्रतिशत श्वेत और केवल ३ प्रतिशत नीग्रो थे। इन आँकड़ों की जाँच करते समय हमें इस बात का ध्यान रखना होगा कि देश की कुल जनसंख्या का लगभग १० प्रतिशत ही नीग्रो हैं। इन आँकड़ों से यह स्पष्ट हो जाता है कि ऊँची आय वालों में नीग्रो का अनुपात बहुत कम और निम्न आय वालों में उनका अनुपात अधिक था। परन्तु मेरी ही तरह बहुत से पाठकों को यह देख कर आश्चर्य होगा कि निम्नतम कोष्टकों पर बहुत अधिक भार नहीं है।

अन्य भी कई अनुकूल लक्षण सामने आये। पिछले ५० वर्षों में नीग्रो में

अशिक्षा ४४.५ प्रतिशत से घटकर ११ प्रतिशत पर चली आयी थी। उनकी औसत उम्र बढ़कर २६ वर्ष पर आ गयी। कम्युनिस्ट प्रचार का जबर्दस्त आधार नीग्रो की पीटाई की घटनाएँ भी वस्तुतः समाप्त हो रही थीं। सम्पूर्ण अमेरिका में १६४५ में नीग्रो की पिटाई की केवल १ घटना दर्ज हुई, १६४६ में ६,१६४७ में १, १६४८ में २, (इसमें पिटाई का शिकार एक श्वेतांग ही था) १६४६ में ३ और १६५० में २ (इसमें भी एक श्वेतांग था)।

इस शताब्दी के मध्य तक अमेरिकन कालेजों और विश्वविद्यालयों में नीग्रो छात्रों की संख्या ६४ हज़ार तक पहुँच गई थी। अन्तर्राष्ट्रीय छात्र विनियम कार्यक्रम के अन्तर्गत फ्रांस गयी एक अध्यापिका ने बताया कि फ्रांस की जनता को मुझे बराबर यह बताना पड़ता था कि मेरे जैसे अनेक लोग अपना जीवन यापन मजे में कर रहे हैं, वे रंग-भेद जैसी कोई बात अनुभव नहीं करते। उससे यह प्रश्न पूछा जाता कि क्या तुम्हें वाशिंगटन की पटरियों पर निर्बाध चलने फिरने दिया जाता है? और उसे सफाई देनी पड़ती कि वस्तुतः सचाई यही है। एक बात और देखने में आयी। दक्षिणी नगरों में नीग्रो पुलिसमेन की संख्या बढ़ती जा रही थी। वे प्रायः श्वेत अपराधियों की भी धरपकड़ करते थे। यही नहीं, रिचमांड (वर्जिनिया) की नगर परिषद में एक नीग्रो भी चुन कर भेजा गया। संक्षेप में, नीग्रो की स्थिति इतनी सुधर गयी थी, जितनी कि कम्युनिस्ट प्रचारों (अमेरिकी रंगभेद के विरुद्ध पहले के लेखों) से प्रभावित यूरोपियनों ने आशा न की होंगी और स्वयं अमेरिकन भी जिसकी कल्पना न कर सके होंगे।

इस बात की बहुत कम आशा थी कि बिना किसी संघर्ष अथवा पारस्परिक विरोध के अमेरिका की यह अहम् समस्या स्वयं अपना समाधान ढूँढ़ लेगी। मित्रतापूर्ण सामंजस्य के युग की आशा सन्निकट न थी। फिर भी कम से कम विचारों की युद्धभूमि वहाँ बनती जा रही थी, जो नीग्रो जाति के लिए उतनी हानिकारक न था। जैसा कि १६५१ में नीग्रो नेता वाल्टर व्हाइट ने लिखा, "अपने गणतांत्रिक रेकार्ड पर कलंक के इस घोर चिह्न को मिटाने में अमेरिका तीव्र प्रगति कर रहा है। यह बात जरूर है कि यदाकदा इसमें बड़ी शिथिलता आ जाती है, फिर भी वह आगे ही बढ़ता जा रहा है।"

१३

तीव्र गति

१९०४ में हेनरी आदम्स ने, जो अपने को पेरिस का एकमात्र वयोवृद्ध भीरु भद्र पुरुष बताते थे, अपने एक लेख में वाष्प शक्ति, विद्युत शक्ति और रेडियो सक्रियता के आविष्कार पर आश्चर्य प्रकट किया। उन्होंने त्वरण-नियम (Law of Acceleration) का निरूपण किया। उन्होंने बताया कि "मानव के हाथ में शक्ति का परिमाण बड़ी तीव्र गति से बढ़ता जा रहा है। १८४० से लेकर १९०० तक संसार में कोयले का उत्पादन प्रति दस वर्ष में दूना होता गया और इससे १८४० में जितनी शक्ति प्राप्त हुई उससे तीन चार गुना अधिक शक्ति १९०० में पैदा की गयी।" उन्होंने उस कल्पनातीत भविष्य की कल्पना की जब "नया अमेरिकन-कोयला, रासायनिक शक्ति, विद्युत शक्ति तथा विकिकरण शक्ति (Radiation Power) के बल पर एक प्रकार का भगवान बन जायेगा।"

आदम्स ने लिखा कि १८०० से प्रगति का जो वेग चलता आ रहा है उसके अनुसार "जो कोई भी अमेरिकन सन् २००० को देख सकेगा, वह निश्चित रूप से जान लेगा कि असीमित शक्तियों का नियन्त्रण किस प्रकार किया जा सकता है। उसका साबका ऐसी समस्याओं से पड़ेगा, जो इसके पूर्व के समाज के सामने कभी आई न होंगी। उसकी दृष्टि में १९वीं सदी और चौथी सदी बिलकुल साधारण मालूम होगी और उसको आश्चर्य होगा कि इतना कम जानते हुए और शक्ति में इतना क्षीण होने पर भी इन दोनों ने यह सब कुछ किस प्रकार कर लिया।

अमेरिकी शिल्पकला विज्ञान की इस आश्चर्यजनक प्रगति के विवेकशील प्रेक्षकों को इस मध्य शताब्दी में उतना ही अचरज होगा, जितना १९०४ में आदम्स को हुआ था। क्योंकि अमेरिकी जीवन-विधि में शक्ति का यह प्रयोग न केवल आदम्स के जमाने में तीव्र गति से बढ़ रहा था, बल्कि वह अब भी बढ़ता जा रहा है और भविष्य में उसकी और प्रगति की आशा है।

ग्यारहवें अध्याय में हमने देखा है कि द्वितीय विश्वयुद्ध के आरंभ के साथ

अमेरिकी उद्योग की उत्पादन-शक्ति किस प्रकार मुक्त होकर सामने आई, किस प्रकार निर्माताओं ने सक्रिय होकर दुनिया को अचम्भे में डाल दिया। लेकिन युद्ध ने किस प्रकार आविष्कारों और शिल्प-कला विज्ञान में परिवर्तन की प्रेरणा दी, इस पर हमने सरसरी तौर से ही विचार किया है।

इस संबंध में सबसे उत्कृष्ट उदाहरण तो अणु के विकास का है। १९३९ में सबसे पहला अणु-विखण्डन हुआ। १९४० में अरबों डालर की लागत की मनहट्टन योजना बनायी गयी। और ५ वर्ष से भी कम की अवधि में इसके अनुसंधान, इंजीनियरिंग, निर्माण एवं विकास में जो सफलता प्राप्त हुई, वह सामान्य परिस्थितियों में एक पूरी पीढ़ी व्यतीत हो जाने के बाद ही प्राप्त हो सकती थी। इसके अन्य असंख्य उदाहरण भी मिलेंगे।

युद्ध के संकट ने सिद्धांतकार वैज्ञानिकों, प्रयोग करने वाले वैज्ञानिकों, निर्माताओं, सैनिक अधिकारियों और सरकारी प्रशासकों को एक साथ ला दिया। इन सब में जो सहयोग स्थापित हुआ, उसने उन सबके एक दूसरे के प्रति भावी दृष्टिकोण पर गहरा असर डाला। भौतिक विज्ञानवेत्ता अथवा रसायनशास्त्री, जिनकी गतिविधियाँ विश्वविद्यालयों की चहार दीवारी तक सीमित थीं, और जिन्हें अपने अन्वेषणों के व्यावहारिक उपयोग की परवाह न थी, बाहर निकले और इस महान् कार्य में लग गये। सैनिक अधिकारियों, सरकारी अफसरों, इंजीनियरों तथा निर्माताओं से राय परामर्श के लिए उन्हें वाशिंगटन लाया गया। अब इन लोगों ने वैज्ञानिकों की क्षमता को पहचाना। यह प्रश्न उठाया गया है कि १९४५ के बाद भी सरकार की विशेष योजनाओं में वैज्ञानिकों की क्षमता के उपयोग के कारण क्या विशुद्ध वैज्ञानिक अन्वेषणों की गति धीमी न पड़ गई होगी? लेकिन, यह निश्चित है कि युद्धकाल में चिन्तन की बहुमुखी धाराएँ प्रस्फुटित हुईं, जो सभी सम्बन्धित लोगों के लिए प्रेरणादायक सिद्ध हुईं।

सब का निचोड़ यह है कि युद्धकाल में अमेरिकी शिल्पकला विज्ञान ने अप्रत्याशित प्रगति की।

२

इस युद्ध-प्रेरित समृद्धि शिल्प-कला विज्ञान को भिन्न दिशा में मोड़ रही

थी। जेब में पैसे की खनक असंख्य सामान्य अमेरिकनों को अधिक से अधिक मशीनों का उपयोग करने को प्रेरित कर रही थी। 'जापान पर विजय' दिवस के बाद ही मशीनें खरीदने की यह होड़ शुरू हो गई थी।

हर आदमी नयी मोटरगाड़ी खरीदने को उत्सुक था, क्यों कि युद्ध-काल में वह मिल नहीं रही थी। मोटरगाड़ियों की माँग पूरी करने में निर्माताओं को कई वर्ष लग गये। उन्होंने केवल १९५० में ८० लाख से भी अधिक मोटर-गाड़ियाँ बेचीं। और यह संख्या प्रथम महायुद्ध की समाप्ति पर अमेरिका भर में जितनी गाड़ियाँ थीं, उनसे भी अधिक है।

यही नहीं, युद्ध के बाद के वर्षों में किसान ने नये ट्रैक्टर, फसल काटने की मशीन और दूध निकालने की मशीनें और अन्य बिजली के यन्त्र खरीदे ; वस्तुतः उसने तथा उसके पड़ोसियों ने मिलकर कृषि-यंत्रों का भण्डार एकत्र कर लिया। किसान की पत्नी ने बिजली का चमकदार रिफ्रीजरेटर मँगाया, जिसके लिए वह वर्षों से लालायित थी, उसने कपड़े धोने तथा बर्फ़ जमाने की मशीनें भी लीं। उपनगर निवासी परिवारों ने बर्तन धोने तथा घास छीलने के विद्युत यन्त्र मँगाये। नगर निवासी परिवारों ने अपने बैठकों में टेलिविजन सेट लगवाये। पति के दफ्तर का काम एयरकंडीशन्ड किया जा चुका था। यह बात नहीं कि ये सब की सब चीजें नयी-नयी बनी थीं। इनमें से बहुत सारी चीजें अरसे से दूकानों में उपलब्ध थीं। वस्तुतः हाल की समृद्धि ने इनके व्यापक उपयोग की स्थिति उत्पन्न कर दी थी। अमेरिकी फार्मों तक बिजली पहुँचाने का काम भी तीव्रगति से चल रहा था। १९३५ में केवल १० प्रतिशत कृषि-फार्मों का विद्युतीकरण हुआ था, जब कि १९५० तक ८५ प्रतिशत फार्मों में बिजली पहुँचायी जा चुकी थी।

आर्कन्सास का एक प्राचीन निवासी बहुत समय बाहर रहने के बाद इस सदी के मध्य में फेयेत्तेविले पहुँचा तो उसने कहा कि, यहाँ के कृषि फार्मों में एक विलक्षण परिवर्तन देख रहा हूँ और वह यह कि प्रायः सभी फार्मों का विद्युतीकरण हो गया है। मेरे बचपन के जमाने में ऐसे कृषि-फार्म बड़ी मुश्किल से मिलते थे, जिनमें बिजली का प्रकाश हो। १९५० में ब्रिटिश उत्पादकों का एक दल आया, जिसने अमेरिकी कृषि-प्रणाली का अध्ययन किया। उसने न्यूजर्सी से नेब्रास्का तक बड़े-बड़े कृषि फार्मों को तो देखा ही, परन्तु सर्वाधिक दिलचस्पी

की चीज जो उसे मालूम हुई, वह थी छोटे-छोटे किसान परिवारों की छोटी-छोटी खेती। सदस्यों ने ट्रेक्टर चालित हल, हेंगे, बीज डालने वाले तथा फसल-काटने वाले यन्त्र आदि तो देखे ही उन्होंने यह भी देखा कि इन यन्त्रों के अधिकतम उपयोग के लिए किस प्रकार कृषि कार्य को संगठित करने का प्रयास किया जा रहा है। किसान अब यह नहीं समझता कि इन यन्त्रों का उपयोग वह केवल घोड़ों और मानव श्रम के स्थान पर कर रहा है, बल्कि वह यह भी समझने लगा है कि इन नये साधनों से वह अपना काम-काज नये ढंग से करने में समर्थ हो सकेगा।

१९४०-४९ की अवधि में खेतिहर मजदूरों की संख्या ९५ लाख से घटकर करीब ८० लाख पर आ गई थी। इसके बावजूद कृषि उत्पादन २५ प्रतिशत बढ़ गया। इसका आंशिक कारण स्वदेश की समृद्धि और विदेशों में अन्न का अभाव था, जो उनके लिए अच्छा बाजार बन गया। कृषि उत्पादन में वृद्धि का एक कारण यह भी था कि अन्य अमेरिकनों की तरह अमेरिकी किसान भी अपने रोजमर्रे के कामों में नये और पुराने मशीनों का अधिक उपयोग करने लगे थे।

३

इसके साथ-साथ अमेरिकी कारखानों में मजदूरी की दर भी बेतरह बढ़ती गयी। इसने उद्योग-मालिकों को श्रम बचाने वाले उपाय ढूँढ़ने के लिए प्रेरित किया। और इसके प्रयोग अनेक रूपों में हुए। कहीं-कहीं तो सामान्य बुद्धि से ही काम चल गया, पर कहीं-कहीं विशाल और पेचीदा वैज्ञानिक उपाय अपनाये जाने लगे।

श्रम बचाने के सहज बोधगम्य उपायों की सूची बड़ी लम्बी है। ओवरहेड क्रेन, हर प्रकार के कन्वेयर, यूनिट लोड उठाने के लिए पावर ग्रेब, बिजली से चलने वाले हाथ-औजार, सफाई के लिए संकुचित हवा का प्रयोग आदि, आदि। कारखाने के अन्दर भारी सामान को एक जगह से दूसरी जगह ले जाने के लिए फोर्ड ट्रकों और पटरियों का उपयोग सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण रहा। जिस किसी व्यक्ति ने नगर की सड़कों के किनारे ट्रक से माल उतरते हुए देखा है, वह आसानी से इस बात का अनुमान लगा सकता है कि इन नये उपायों से मानव का काम कितना आसान हो गया है।

फोर्ड ट्रक के मूलभूत सिद्धांत को हर कोई समझ सकता है। परन्तु साधारण

मनुष्य उन पेचीदा इलेक्ट्रोनिक मशीनों को क्या समझेगा, जिनका प्रयोग १९३५ और १९५० के बीच हुआ। ऐसे यंत्रों का उपयोग वस्तु के अणुवीक्षणीय शुद्ध माप तथा मशीनों की चाल का पता लगाने के लिए किया जाता है। जिस प्रकार इन यंत्रों के संबंध में बातचीत करनेवाले इंजीनियरों की भाषा उसके पल्ले पड़ने वाली नहीं, उसी प्रकार इन यंत्रों की पेचीदा बनावट उसकी समझ के परे की बात है। ये यंत्र असेम्बली लाइन से बन कर निकलने वाली वस्तुओं को गिन सकते हैं और उनकी बराबरी अथवा शुद्धता के अनुसार उनका वर्गीकरण अपने-आप कर सकते हैं। ये यंत्र इस्पात की चादर की वास्तविक मुटाई सचाई के साथ बता सकते हैं, इसी प्रकार मशीनों के काम की रिपोर्ट भी इनसे मिल सकती है। ऐसे औजारों और मशीनों के बढ़ते हुए प्रयोग का फल यह निकला है कि आज आप किसी भी कारखाने में चले जायें, उसकी सतह मशीनों और औजारों से पटी हुई मिलेगी तथा मशीन की देखरेख करने वालों का सर्वथा अभाव मिलेगा।

और इसका परिणाम क्या निकला? प्रथम तो यह कि इससे अनिपुण मज़-दूरों की माँग बहुत कम हो गयी है। १९०० में अमेरिका में कोई एक करोड़ दस लाख 'सामान्य मज़दूर' (खेतिहर मज़दूर समेत) थे, जो घटते-घटते १९५० में ८० लाख से भी कम पर आ गये। दूसरी ओर इंजीनियरों और कारीगरों की माँग बढ़ गयी है। हार्वर्ड के प्रेसिडेन्ट कोनेंट के अनुसार शताब्दी के आरंभ में रासायनिक इंजीनियरिंग, व्यवसाय के रूप में अधिक विकसित न हुई थी। आज [वह १९५१ में बोल रहे थे] रासायनिक इंजीनियरों की बेहद कमी है, हालांकि पिछले ५ वर्ष में १५ हजार ऐसे इंजीनियर प्रशिक्षित किये जा चुके हैं। जहाँ तक साधारण इंजीनियरों का सवाल है, उनकी संख्या १९५० में ५ लाख थी, जबकि १९०० में केवल ४० हजार। इंजीनियरों की माँग अब भी बनी हुई है।

अर्थशास्त्री कालिन क्लार्क ने इस बात की ओर ध्यान आकृष्ट किया है कि औद्योगिक सभ्यता के विकास के साथ लोग खेती का काम छोड़-छोड़ कर उद्योगों में लग जाते हैं और उसके बाद उद्योगों को छोड़कर नौकरियों में जाने लगते हैं। अमेरिका में यही बात होती रही है। १९०० से ही खेती के काम में लगे लोगों की संख्या गिरती आ रही है, लेकिन इस अनुपात से औद्योगिक कामों में लगे लोगों की संख्या में कोई खास वृद्धि नहीं हुई है।

इसके विपरीत नौकरपेशावालों की संख्या बेहद बढ़ गई है। सदी के मध्य में बहुत कम लोग हाथ से काम कर रहे हैं, अधिक लोग मेजों पर बैठकर काम करनेवाले हैं। मसलों से काम लेनेवालों की संख्या कम और मस्तिष्क से काम लेनेवालों की संख्या अधिक है। ऐसे लोग कम हैं, जिनके काम के लिए सीमित शिक्षा की जरूरत है ; ऐसे व्यक्तियों की संख्या बढ़ गयी है, जिन्हें अपने काम के लिए ऊँची शिक्षा की जरूरत है।

अब भी अमेरिका में ऐसी बहुत-सी मिलें हैं, जिनमें 'पैशाचिक' काम होता है। ऐसे असंख्य कारखाने हैं, जिनमें कमर तोड़नेवाला और मनहूस काम होता है। अधिकतम स्वचालित कारखानों में भी भंगियों और मेहतरों की जरूरत पड़ती ही है। इस मशीन युग में भी उनके काम का यंत्रीकरण न हो सका है और उनका एक नया सर्वहारा वर्ग बनता हुआ-सा लगता है। फिर भी, साधारण रुख श्रम का मान बढ़ाने की ओर है।

४

जिस प्रकार सैनिक टुकड़ियों के आगे-आगे बालचरों का दल चलता है, उसी प्रकार अनुसंधानकर्ता शुद्ध और व्यावहारिक विज्ञानों के इंजीनियर आगे बढ़ते जा रहे हैं। एक पीढ़ी से भी अधिक काल से रसायन शास्त्री और रसायनिक इंजीनियर इस पुस्तक में पूर्व उद्धृत इस विचारधारा पर काम करते आ रहे हैं, कि प्रकृति की कोरी नकल करने की बजाय कृत्रिम वस्तुओं से अधिक काम निकल सकता है। द्वितीय महायुद्ध से पूर्व, २५ अक्तूबर १९३९ को, पहली बार नाइलोन के बने हुए जुराब बाजार में आये। १९३०-३९ की अवधि तथा युद्धकाल में डिजल इंजनों का उद्योगों में तथा रेलों पर व्यापक उपयोग होने लगा। विमानों के लिए गेसोलिन को शक्ति का प्रचुर साधन बनाया गया। इसी समय कृत्रिम रबड़ सामने आया, जिसका उपयोग न केवल युद्ध में हुआ, बल्कि समस्त वाहनों के लिए अति लाभदायक सिद्ध हुआ। उसी प्रकार चिकित्सा क्षेत्र में भी गजब की नयी नयी चीजें — एंटीबायोटिक औषधियों की महान खोज सामने आयीं।

जहाँ तक आणविक शक्ति का संबंध है, इसके महानाशक प्रभाव को हम

देख चुके हैं। इसका लाभकारी पहलू अभी अनिश्चित है। लेकिन शीघ्र ही यह शक्ति मनुष्य को, आदम्स के शब्दों में, अपरिमित शक्ति का अधिकारी बना देगा, इसकी पूरी संभावना है।

अन्य क्षेत्रों में, खास कर अमेरिकी व्यावसायिक क्षेत्र में भी महान् परिवर्तन होता रहा है। जैसा कि कार्निग ग्लास वर्क्स के अधिकारी बताते हैं इस कम्पनी ने १९५० में जितना सामान बेचा, उसका ५० प्रतिशत ऐसी चीजें थीं जो अब से १० वर्ष पहले तक देखने में नहीं आयी थीं।

१९४०-४९ की अवधि रसायनशास्त्रियों और रासायनिक इंजीनियरों के उत्कर्ष की अवधि थी। जैसा कि करोल विल्सन ने बताया, तेल उद्योग के लिए यह खोज बड़ी सुखकर रही कि 'कच्चे तेल के इन पीपों में ईंधन से अधिक महत्त्व की चीजें विद्यमान हैं।' १९४२ से ही ऐसे तेल कारखानों का निर्माण होने लगा, जो एच. जी. वेल्स की 'असंभव' कल्पनाओं से भी होड़ लेने लगे। १९५१ में 'फार्चुन' नामक पत्र के सम्पादकों ने १९५१ में प्रकाशित अपनी पुस्तक "यू० एस० ए० — दि पर्मानेंट रिवोल्यूशन" में लिखा कि इन आश्चर्यजनक नये कारखानों में कच्चा माल — तरल अथवा गैस के रूप में — नली के एक छोर से अन्दर आता है और पेचीदा यंत्रों और नलियों से घूमता हुआ उससे निर्मित वस्तुएँ २४ घंटे में निकलती रहती हैं। और सामान भी कितने किस्म का है? खाद से लेकर शोधक तक, अंगार सामग्री से लेकर ठंडा करनेवाले पदार्थों तक, कृत्रिम रबड़ से लेकर छपाई की स्याही तक इन कारखानों में बनते हैं।

परन्तु भविष्य में आश्चर्यजनक आविष्कारों के लिए हमें रसायनशास्त्रियों की ओर उतना नहीं देखना है, जितना कि भौतिक विज्ञानवेत्ताओं की ओर, या यों कहिए कि भौतिक विज्ञानवेत्ताओं, रासायनशास्त्रियों, प्राणिशास्त्रियों और गणितज्ञों के सम्मिलित प्रयास से महान अचरज भरे आविष्कार होने वाले हैं। १९४८ में रसायन शास्त्र ने एक ऐसी चीज (कोर्टिसन) दी, जिसने सम्पूर्ण चिकित्सा सिद्धांत को हिला दिया। उसी वर्ष भौतिक विज्ञानवेत्ताओं ने ट्रांसिस्टर का आविष्कार किया जो वैक्यूम ट्यूब का स्थान मजे में ग्रहण कर सकता है। आधी शताब्दी मुश्किल से व्यतीत हुई थी कि

क्रिलियम का आविष्कार हुआ। इससे बड़े-बड़े लाभ होने की आशा है। कुछ ऐसे लोग भी हैं, जिनका विश्वास है कि भौतिक विज्ञानवेत्ताओं, रसायन-शास्त्रियों और प्राणिशास्त्रियों के सम्मिलित प्रयास से एक ऐसा दिन आने वाला है, जब लोग प्रकाश से अन्न उसी प्रकार पैदा करने लगेंगे जैसे पौधे करते हैं।

यदि हेनरी आदम्स ने यह भविष्यवाणी की कि सन् २००० को देखने-वाला प्रत्येक अमेरिकन यह जान जाएगा कि असीम शक्तियों पर नियंत्रण किस प्रकार किया जा सकता है, तो शायद उन्होंने कोई गलत बयानी नहीं की। शताब्दी के मध्य में परिस्थितियाँ निश्चित रूप से बड़ी तेज़ी से बदलती जा रही हैं।

१४

दीर्घ आयु

१६३२ में समाज के वैज्ञानिकों के एक दल ने अमेरिकी जीवन के सविस्तार अध्ययन के बाद 'रिसेंट सोशयल चेंजेज़' नाम से एक पुस्तक प्रकाशित की, जिसमें कुछ वैज्ञानिकों ने भविष्य में देश की जनसंख्या में वृद्धि की संभावना व्यक्त की थी। वृद्धि की रफ्तार में शिथिलता को दृष्टिगत करते हुए, उन्होंने कहा था कि यदि यही रुख बना रहा, तो १६४० में अमेरिका की जनसंख्या १३ करोड़ २० लाख अथवा १३ करोड़ ३० लाख हो जायगी। यह भविष्यवाणी विशेष गलत न थी; १६४० आते-आते देश की वास्तविक जनसंख्या १३,१६,६६,२५७ हो गयी। परन्तु १६५० के लिए उनकी भविष्यवाणी गलत हो गयी। उस वर्ष उन्होंने देश की जनसंख्या चौदह या साढ़े चौदह करोड़ होने की भविष्य-वाणी की थी, परन्तु वास्तविक जन संख्या उस वर्ष १५,०६,६७,३६१ रही — उनके अनुमान से ५० लाख से भी ऊपर।

जनसंख्या में इस वृद्धि का मुख्य कारण १९४०-४९ की अवधि में जन्म संख्या में बेहद वृद्धि हो जाना था। कुछ लोगों ने ऐसा 'युद्ध और समृद्धि' के कारण हुआ बताया है, जो तर्क संगत प्रतीत नहीं होता ; क्योंकि प्रथम महायुद्ध काल में तो ऐसा हुआ नहीं था, और १९२०-२९ की समृद्धिशाली अवधि में जन्म-संख्या बढ़ी नहीं, अपितु कुछ घट ही गयी थी।

इस समय युद्ध जनित विनाश और अस्त-व्यस्तता की जो प्रतिक्रिया हुई, वह निश्चित रूप से दिलचस्प थी। यह ऐसे समय में हुआ जब कि अधिक विचार-बुद्धिजीवियों की यह धारणा बनने लगी थी कि जीवन के खतरों और अंधकार-पूर्ण भविष्य को देखते हुए मनुष्य की विवशता तथा मानव प्रयास के प्रति आस्था में ह्रास के कारण मानव जाति हतोत्साह होती जा रही है। परन्तु जन्म-संख्या की इस गति के कारण यह आश्चर्य का विषय बन जाता है कि क्या भविष्य के प्रति जन-साधारण का दृष्टिकोण आशापूर्ण नहीं था ?

२

१९४०-४९ में देश की जनसंख्या में इतनी वृद्धि क्यों हुई, इसका एक कारण यह भी था कि मृत्यु-संख्या घट गयी थी। हमारा राष्ट्र इससे पूर्व इतना स्वस्थ कभी न था।

१९०० के बाद से इस मामले में जो सामूहिक परिवर्तन हुआ है, वह आश्चर्य-जनक है। १९०० में कई बीमारियों से लोग बेतरह मर रहे थे। लोग एक प्रकार से भयातुर हो गये थे। अब बीमारियों का प्रकोप बिल्कुल कम हो गया है। इंफ्लुएंजा और न्यूमोनिया से मरनेवालों की संख्या १८१.५ (प्रति एक लाख व्यक्तियों पर) से घटकर १९४८ में ३८.७ पर आ गयी, तपेदिक से होनेवाली मौत की संख्या २०१.९ से घटकर ३० पर, टाइफाइड और पैरा टाइफाइड — ३६ से घटकर ०.२ पर, डिफ्थीरिया (कंठावरोध) — ४३.३ से घटकर ०.४ पर और पीतज्वर — ११.४ से घटकर ०.१ पर आ गयी। पीतज्वर से १९४८ में देश भर में केवल ६८ व्यक्ति मरे। हृदय रोग तथा कैंसर से होनेवाली मृत्यु संख्या बढ़ी, परन्तु कुल मिलाकर १९०० से १९५० तक की अवधि में अमेरिकनों की औसत आयु में आश्चर्यजनक वृद्धि हुई — ४९ वर्ष से बढ़कर ६८ वर्ष पर चली आयी

लेकिन यह सब आखिर हुआ कैसे ? इसका उत्तर है : यह सब चिकित्सा सम्बन्धी ज्ञान, मेडिकल प्रशिक्षण, अच्छी चिकित्सा, सफाई तथा जन स्वास्थ्य के लिए उठाये गये कदम तथा जनता की स्वास्थ्य नियमों की जानकारी में वृद्धि के कारण ही हुआ। डाक्टरों ने न केवल बीमारियों की अधिक उपयुक्त चिकित्सा का अधिक ज्ञान प्राप्त किया, उन्हें सल्फानीलामाइड, पेनिसिलिन, एरोमाइसिन, ए० सी० टी० एच० और कोर्टिसन जैसी महान चमत्कारिक दवाएँ उपलब्ध हुईं। जन स्वास्थ्य सम्बन्धी सेवाएँ सफल और प्रभावशाली हो गयीं। मलेरिया के मामले में तो प्रगति इतनी विलक्षण हुई कि १९५० में मिसिसिपी राज्य प्रशासन के यह घोषणा करने पर भी कि मलेरिया के रोगी ढूँढ़नेवाले डाक्टर को प्रति रोगी १० डालर दिया जायेगा, एक भी रोगी न मिल सका।

स्पेनिश-अमेरिकी युद्ध काल में युवक डा० हार्वे कशिगने टाइफाइड के शिकार सैनिकों से भरी एक ट्रेन बाल्टिमोर में देखी थी। उस गंदगी और दुर्व्यवस्था को देखकर वह बड़े मर्माहत हुए थे। "स्पेनिश-अमेरिकी युद्ध में टाइफायड से मरनेवाले हमारे सैनिकों की संख्या प्रति वर्ष २५ प्रति हजार थी। प्रथम महायुद्धकाल में यह संख्या घटकर लगभग १६ पर आयी और द्वितीय महायुद्ध के समय तो वह केवल ०.६ प्रतिवर्ष प्रति हजार पर आ गयी।" अब यह बात "हार्वार्ड स्कूल आफ पब्लिक-हेल्थ" के डीन ब्रिगेडियर जनरल साइमंस पर है कि वह उस समय की और आज की स्वास्थ्य-सेवाओं के अन्तर के शुद्ध तुलनात्मक आँकड़े तैयार करें।

संक्रामक रोगों के विरुद्ध सतत सफल युद्ध के फलस्वरूप १९४०-४९ में देश में वृद्ध पुरुषों और स्त्रियों की संख्या बढ़ गयी और इस कारण पेंशन योजनाओं में लोगों की नयी दिलचस्पी पैदा हुई। इधर जन्म-संख्या में वृद्धि के कारण १९५० तक यह आशंका पैदा होने लगी कि पहले से ही ठसाठस भरे हुए प्राइमरी स्कूलों पर बेहद भार पड़ेगा। १९५० के आरम्भ के साथ कमाऊ अमेरिकनों पर किसी न किसी प्रकार अधिक मानव प्राणियों — अल्प वयस्क और वृद्ध — के भरण-पोषण का भार आ पड़ने की संभावनाएँ पैदा हो गईं। हाल के इतिहास में पहले ऐसा कभी नहीं हुआ।

२

अधिकांश अमेरिकन पहले की अपेक्षा न केवल अधिक स्वस्थ हैं, बल्कि शारीरिक दृष्टि से भी वे अधिक लम्बे-चौड़े हो गये हैं। इसका प्रमाण हमें दो महायुद्धों के मेडिकल रेकार्ड से नहीं मिल सकता, क्योंकि द्वितीय महायुद्ध के प्रथम दो वर्षों में सेना में भर्ती के लिए जो युवक लिये गये उनकी औसत ऊँचाई वही थी, जो पहले विश्वयुद्ध के समय थी — ५ फीट साढ़े ७ इंच। यह बात ज़रूर थी कि १९४१–४२ में भर्ती किये गये रंगरूटों का औसत वजन १५० पौंड था, जब कि १९१७-१८ की बहाली के समय १४२ पौंड। "स्थानीय निकायों ने जिन लोगों के नाम रजिस्टर किए थे, उनकी औसत ऊँचाई ५ फीट साढ़े ८ इंच और औसत वजन १५२ पौंड था।" लेकिन इस प्रकार की तुलना निश्चित रूप से भ्रामक होगी। क्योंकि इसमें ऐसे लोग आते हैं, जो भिन्न जलवायु में और भिन्न स्थानों के रहनेवाले होते थे। सम्पन्न और पुराने अमेरिकनों का जो तुलनात्मक अध्ययन किया गया है उसके अनुसार उनका क़द पहले की अपेक्षा बढ़ गया है।

वर्तमान शताब्दी के मध्य तक, जनसंख्या के आँकड़ों के अनुसार, लोग पश्चिम की ओर, खासकर केलिफोर्निया उत्तर पश्चिम की ओर बढ़ रहे थे। साथ-साथ फार्मों और छोटे-छोटे कस्बों से लोग घनी आबादी वाले स्थानों की ओर जा रहे थे।

स्थिति की यह अस्थिरता बड़ी सफलतापूर्वक अपना काम करती जा रही थी। चूँकि १९२० तक बाहर से आनेवालों की संख्या बिलकुल सीमित हो गई थी, इसलिए विदेशों में पैदा हुए अमेरिकनों की संख्या भी घटती पर थी। पहले जमाने में जो स्त्री और पुरुष यूरोप से आये थे, एक-एक कर के उन सबके जीवन का अवसान समीप हो चला था। अमेरिका के नगरों और औद्योगिक केन्द्रों में विदेशी भाषाएँ अब बहुत कम सुनने को मिलती थीं। निष्क्रमणार्थियों के पुत्र और पुत्रियों ने अमेरिकी रीति-रिवाजों को पूरी तरह अपना लिया था। जैसा कि इटालियन वंश के एक न्यूयार्क निवासी ने कहा, "तीसरी पीढ़ीवालों को

सब से बड़ा लाभ यह था कि उनके माता-पिता अंग्रेजी भाषा बोलते थे।" वे सब के सब उतने ही अमेरिकन थे, जितने मे फ्लावर वालों के वंशज। हाँ, यह बात जरूर है कि मे फ्लावर वालों को उनके नाम अब भी विदेशी लगते रहे होंगे।

खंड ३ नया अमेरिका

१५
निखिल अमेरिकी स्तर

अब हम वर्तमान शताब्दी के उत्तरार्द्ध में प्रवेश करते हैं। कुछ क्षण रुक कर पहले हम अपनी स्थिति का निरीक्षण करेंगे, और देखेंगे कि आखिर गरीबों और धनिकों में जो महान अन्तर चला आ रहा था उसका क्या हुआ।

पैसे, अर्थात् आय की दृष्टि से कोई विशेष महान परिवर्तन न हुआ। अमेरिका में आज भी नितांत दारिद्रय की खाई बनी हुई है और ऐसे अनेक परिवार और हजारों-लाखों व्यक्ति हैं, जो बीमारी, बुढ़ापा, कष्ट, अथवा सीमित योग्यता के कारण अभावग्रस्त जीवन व्यतीत कर रहे हैं। जनसाधारण समृद्धि के आधिक्य का प्रतिनिधित्व करता हो ऐसी बात नहीं। फिर भी पिछली अर्द्ध-शताब्दी में खास कर १९४० के बाद जो कुछ हुआ, उसे 'नेशनल ब्यूरो आफ इकनामिक रिसर्च' के निर्देशक ने 'इतिहास की महान सामाजिक क्रांतियों में से एक' की संज्ञा दी है।

धन के वर्तमान वितरण के आँकड़े उपस्थित करने से पूर्व यह बता देना जरूरी है कि ये आँकड़े मात्र आनुमानिक हैं। फिर भी शताब्दी के आरम्भ की अपेक्षा आज के आँकड़े अधिक सच्चे हैं। उस समय तो आयकर जैसी कोई चीज़ न थी और एंड्रयू कार्नेगी की आय सामान्य अमेरिकी मजदूर से कोई २०

हजार गुनी अधिक थी। गंदी बस्तियों में बाहर से आने वाले लोग नितांत गंदे और दुर्गन्धपूर्ण वातावरण में ज़िन्दगी के दिन बिता रहे थे।

यहां जो आंकड़े मैं उपस्थित कर रहा हूं, वह अमेरिकी कांग्रेस की संयुक्त आर्थिक रिपोर्ट समिति की उपसमिति द्वारा प्रस्तुत किये गये हैं। इनमें १९४८ में आय का वितरण दिखाया गया। ये आंकड़े आर्थिक सलाहकार परिषद द्वारा राष्ट्रपति को १९५१ में दी गई रिपोर्ट के आंकड़ों से प्रायः मिलते-जुलते हैं और संभवतः सचाई के ज्यादा निकट हैं।

इन रिपोर्टों के अनुसार अमेरिका के कुल परिवार का १०.६ प्रतिशत १ हज़ार डालर की पारिवारिक अथवा वैयक्तिक वार्षिक आय पर निर्भर है। अर्थात् प्रति १० परिवारों में से एक परिवार घोर अनुपयुक्त आय का भागीदार है।

लगभग १४.५ प्रतिशत परिवारों अर्थात् प्रति सात परिवारों में से एक परिवार की वार्षिक आय एक हज़ार डालर से दो हज़ार डालर के बीच है।

करीब २०.६ प्रतिशत परिवार, अर्थात् प्रति ५ परिवार में से १ परिवार २ हज़ार डालर से ३ हज़ार डालर की वार्षिक आय पर गुजर-बसर कर रहा है।

लगभग ३३.६ परिवारों, अर्थात् प्रति ३ परिवारों में एक परिवार की वार्षिक आय ३ हज़ार डालर से ५ हज़ार डालर के बीच है।

केवल १७.९ प्रतिशत परिवारों अथवा यों कहिये कि प्रति ७ परिवारों में से एक परिवार की वार्षिक आय ५ हज़ार डालर से लेकर १० हज़ार डालर तक है।

और बहुत थोड़े से अर्थात् २.९ प्रतिशत परिवारों [प्रति ३४ परिवारों में से एक] की वार्षिक आमदनी १० हज़ार डालर अथवा इससे अधिक है।

ऐसे भी अनेक लोग हैं जो किसी परिवार में नहीं रहते। १९४८ में ऐसे लोगों की संख्या लगभग ८० लाख आंकी गयी थी। इन लोगों की आय प्रायः एक समान है। विशेषता है तो केवल यही कि इनमें से अधिकांश की आय निम्न कोष्टक में आती है।

अब हम सबसे निम्नवर्गीय लोगों की, अर्थात् १ हज़ार डालर से कम वार्षिक आय वाले परिवारों और व्यक्तियों की स्थिति का अवलोकन करेंगे। ये लोग आखिर हैं कौन ?

इनमें कुछ तो ऐसे किसान और व्यापारी हैं जिनकी या तो फसल मारी गयी है अथवा रोजगार में घाटा लगा है। फिर भी इनकी बचत इतनी ही रही है कि उसके सहारे संकट की घड़ी काट लेंगे। इनमें देहाती गरीब भी शामिल हैं, जो बहुत कम उपजाऊ जमीन जोतते हैं अथवा बटाई पर खेती करते हैं। इनमें एक दल ऐसे लोगों का है जो वृद्ध हैं अथवा जिन्हें अपनी स्वल्प आय से ही अपने आश्रितों का भरण-पोषण करना पड़ता है। कुछ ऐसे भी हैं, जिन्हें किसी प्रकार की सहायता नहीं मिल रही और येन-केन प्रकारेण जीवन व्यतीत कर रहे हैं। [राबर्ट एल हील ब्रोमरने हार्पर्स मेगेज़ीन के जून १९५० के अंक में लिखा था कि वयोवृद्ध व्यक्ति पर आश्रित प्रति चार परिवारों में से एक और प्रति तीन वयोवृद्ध पुरुषों और स्त्रियों में दो को १९४८ में २० डालर से भी कम साप्ताहिक आय पर गुजर करना पड़ता था।] निम्नतम आय वाली श्रेणी में कुछ लोग परिवार विश्रृंखलित हो जाने के कारण कष्टमय जीवन व्यतीत कर रहे हैं। इस श्रेणी में वे स्त्रियाँ भी हैं, जिनका तलाक के कारण कोई सहारा न रहा। कुछ अपंग और विकृत मस्तिष्क के लोग हैं। [हील ब्रोमर के अनुसार इसमें से अधिकांश के भरण-पोषण की ज़िम्मेदारी समाज पर है।] और संभवतः कुछ ऐसे भी लोग हैं जो आदतन बेकार हैं। यहाँ यह भी कह देना अप्रासंगिक न होगा कि ऐसे तिरस्कृत लोगों में अधिक संख्या नीग्रो की है।

अब हम उस श्रेणी पर दृष्टिपात करेंगे, जिसकी औसत वार्षिक आय एक से दो हजार डालर के बीच है। इस श्रेणी में अधिकांश वे हैं, जिनका व्यवसाय ह्रासोन्मुख है; ऐसे किसान हैं, जिन्हें खेती से कोई लाभ नहीं होता; वृद्ध लोग हैं, तलाक दी हुई पत्नियाँ और अपंग लोग हैं तथा ऐसे मजदूर हैं जिन्हें बराबर बेकारी का सामना करना पड़ता है। इनमें ऐसे लोग भी शामिल हैं, जिनकी आय समृद्धि के इस युग में भी स्वल्प है और इस कारण गरीबी का सामना करना पड़ता है। इनमें भी अधिक संख्या नीग्रो की है।

यद्यपि संकटग्रस्त लोगों की सहायता की वर्तमान व्यवस्था उपयुक्त नहीं कही जा सकती तथापि स्थिति अब काफ़ी सुधर गयी है। अभाव और कष्ट की व्यापकता अब उतनी नहीं है, जितनी पहले थी।

आज की समृद्धि का केन्द्रीय तथ्य वस्तुतः हमें तब मिलता है जब कि बाद के

दो या तीन कोष्टकों, अर्थात् २ हजार से १० हजार डालर वार्षिक आय वाली श्रेणियों पर दृष्टिपात करते हैं। और तथ्य यह है कि इसमें लाखों परिवार ऐसे हैं, जिनकी आय पहले २ हजार डालर अथवा दो से तीन हजार डालर तक थी और अब एक या दो कोष्टक ऊपर आ गये हैं। इन भाग्यशाली परिवारों की आय के कई साधन हैं। इनमें किसान हैं, दफ्तरों में काम करने वाले और विभिन्न पेशों के लोग तथा अर्द्धनिपुण और निपुण मजदूर हैं। वस्तुत: एक वर्ग के रूप में औद्योगिक मजदूरों ने ही विशेष उन्नति की है। उदाहरणार्थ इस्पात कारखानों के मजदूरों को ले सकते हैं ; जो पहले ढाई हजार डालर की आय पर गुजर करते थे, परन्तु अब औसतन ४,५०० डालर कमा लेते हैं। यही स्थिति निपुण मशीन-चालकों की है, जो पहले मुश्किल से ३ हजार डालर कमाते थे, अब साल में साढ़े पाँच हजार डालर अथवा इससे भी अधिक व्यय करने की सामर्थ्य रखते हैं। पिछले दशकों में इनकी आय में बढ़ोतरी के साथ जिन्सों के मूल्य भी बढ़ रहे हैं, तथापि उनकी आय कुछ आगे ही रही है।

मानवीय अर्थों में ये आँकड़े क्या संकेत करते हैं ? संकेत यह है कि औद्योगिक नगरों तथा कस्बों के लाखों परिवार गरीबी के गर्त से निकल कर उस स्थिति पर आ गये हैं, जहाँ वे मध्यम वर्गीय जीवन बिता रहे हैं। आज परिवार के हर व्यक्ति के लिए अच्छे कपड़े जुटाये जा सकते हैं, प्रत्येक परिवार अच्छी कार रख सकता है, बिजली का रेफ्रीजरेटर ला सकता है, गृहस्थी से लिए सुसज्जित रसोई-घर की व्यवस्था कर सकता है, दाँत डाक्टर की सेवाएँ प्राप्त कर सकता है, बीमा करा सकता है, आदि आदि।

स्वभावत: यह इच्छा उत्पन्न होती है कि बुद्धिजीवियों — उदाहरणार्थ शिक्षकों की स्थिति भी इतनी ही अच्छी होती तो ठीक रहता। वास्तव में ऐसा नहीं हुआ है, लेकिन यह जरूर है कि समृद्धि की इस धारा से वे अछूते भी नहीं रहे हैं। निम्न वर्ग की उन्नति का प्रभाव अन्य लोगों पर बड़ा अच्छा पड़ा है। क्योंकि जो परिवार एक या दो कोष्टक ऊपर बढ़े हैं, वे अधिक सामान खरीदने में समर्थ हो गये हैं और उनकी क्रय-शक्ति जैसे-जैसे बढ़ी, वैसे-वैसे अमेरिका के व्यवसाय भी विस्तृत होते गये। गरीबों की गरीबी कम करके ही अमेरिका समृद्ध हुआ है।

अब हम उन पाँच प्रतिशत लोगों की स्थिति पर विचार करेंगे, जो आठ

हजार या इससे अधिक की आय पर गुजर करते रहे हैं।

'नेशनल ब्युरो आफ़ इकनामिक रिसर्च' के साइमन कजनेट्स के अनुसार दो महायुद्धों के बीच की अवधि में इस श्रेणी की आय राष्ट्रीय आय की २८ प्रतिशत [कर चुकाने के बाद] थी। परन्तु १९४५ के बाद से वह घटकर १७ प्रतिशत पर आ गयी है। १९४५ की तुलना में इस उच्च वर्ग की स्थिति बहुत अच्छी तो नहीं, पर कुछ अच्छी जरूर रही है।

१६ हजार डालर या इससे अधिक आय वाले उच्च वर्गीय सम्पन्न और धनी व्यक्तियों का जहाँ तक संबंध है, राष्ट्रीय आय में उनका हिस्सा १९४५ तक १३ प्रतिशत से घटकर ७ प्रतिशत पर आ गया।

वस्तुओं के बढ़ते हुए मूल्य को देखते हुए आवश्यक रियायतें देने के बाद भी यह स्पष्ट हो जाता है कि १९४९ और १९५० के बीच सभी अमेरिकनों की आय ७४ प्रतिशत बढ़ी। यह बढ़ोतरी काफ़ी है।

यहाँ एक बात और जानने योग्य है। मजदूरी में वृद्धि के फलस्वरूप मुनाफ़े में कोई खास कमी नहीं आयी है। यदि १९२९ और १९५० के कुल मुनाफ़ों की हम तुलना करें तो देखेंगे कि इस अवधि मे मुनाफ़ों में जितनी क्रमिक वृद्धि हुई है, उतनी वेतन और मजदूरी में नहीं। [तब क्या कारण है कि धनिकों को अधिक फायदा न हुआ ? इसलिए कि मुनाफ़े का काफ़ी अंश रोजगार में लगाने के लिए रख छोड़ा गया और लाभांश पहले की अपेक्षा अधिक व्यापक पैमाने पर वितरित हुआ तथा पूर्वापेक्षा अधिक कर चुकाना पड़ा।]

इसके बावजूद धनिकों की स्थिति में काफ़ी अन्तर पड़ा है। कुछ लोगों का कहना है कि अब कोई भी आदमी वास्तव में धनी न रहा। यदि कोई है भी, तो वह करों की चोरी करने वाला अथवा आमदनी से अधिक व्यय करने वाला है। लेकिन यह कथन बिलकुल असत्य है। कर विभाग द्वारा बड़ी-बड़ी आयों के टुकड़े-टुकड़े तो कर ही दिये जाते हैं।

जिन लोगों को सम्पत्ति उत्तराधिकार में मिली हुई है अथवा स्वयं अर्जित है और जिसकी व्यवस्था पर भारी खर्च है तथा जो अपने संबंधियों, मित्रों और समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारी को समझते हैं, जो यह भी जानते हैं कि उन्हीं जैसे लोगों पर स्कूल, कालेज, अस्पताल एवं अन्य दातव्य संस्थाएँ दान के लिए

भरोसा रखती है। (क्योंकि कर चुकाने वालों, जुआड़ियों, यहाँ तक कि नये समृद्धिशील लोगों का ऐसे कर्तव्य और अवसर पर ध्यान नहीं जाता।) बढ़ते हुए करों एवं भावों को देखते हुए उनकी स्थिति का अनुमान उनमें से ही एक के इस कथन से लगाया जा सकता है कि, 'लोग धनी हैं ऐसी कोई बात नहीं, वस्तुतः वे विस्तृत पैमाने पर गरीब हैं।'

यही कारण है कि बहुत से लोग कर से बचने के लिए नकदी कारबार ही करने की इच्छा रखते हैं। यदि कारबार नया हुआ, तो कुछ समय तक ऐसा चल भी जाता है। [लेकिन जिन धनिकों, उत्तराधिकार स्वरूप सम्पत्ति प्राप्त करने वालों और बड़े-बड़े कारपोरेशनों के पदाधिकारियों को लोग जानते हैं, उनके लिए ऐसा करना संभव नहीं, क्योंकि कर विभाग की गृद्ध-दृष्टि उन पर हमेशा रहती है।]

इस कारण टैक्स कलेक्टरों की घूसखोरी चलती है। हाल में इस पर काफ़ी हो-हल्ला भी मचा था।

इस कारण, न केवल अति धनी वर्ग में, बल्कि अन्य वर्गों में भी अपने व्यय का कुछ भाग कम्पनी पर डालने की परम्परा चल पड़ी है। कम्पनियाँ उनके बिलों का भुगतान संचालन-व्यय के नाम पर अपने हिसाब में करा देती हैं।

१

गरीब और अमीर की आयों में अन्तर तो कम हुआ ही; लेकिन लोगों के जीवन स्तर के अन्तर में जो कमी आयी, वह अधिक प्रभावशाली थी।

उदाहरणार्थ, १९०० के किसी बैंकपति को लीजिये। जनसाधारण में जाने का यदि कभी उसने दुस्साहस किया, तो उसकी पहचान उसके फ्राक कोट और रेशमी टोपी से हो जाती थी। उसी प्रकार उसकी पत्नी का परिचय उसके पेरिस गाउन से मिल जाता था। लेकिन आज इस्पात के कारखाने में काम करनेवाले किसी मजदूर, या क्लर्क अथवा उच्च पदाधिकारी को उसकी पोशाक से नहीं पहचाना जा सकता। बहुत से ऐसे लोग हैं, जिनकी आय लाखों डालर है, परन्तु न्यूयार्क की किसी भूमिगत ट्रेन अथवा विमान में चलने वाले हजारों अन्य लोगों और उनकी पोशाक में विशेष अन्तर नहीं पाया जा सकता। हाँ, यह बात ही

सकती है उनका सूट जरा अच्छा कटा हो, बस !

यही बात औरतों के बारे में भी कही जा सकती है। कपड़ों पर प्रति वर्ष ५ हजार डालर खर्च करनेवाली तथा उसका शतांश ही खर्च करनेवाली औरतों को देखने पर उनमें खास अन्तर न मालूम पड़ेगा। भेद इतना ही है कि कुछ औरतों की रुचि परिष्कृत होती है और कुछ की नहीं ! किसी के पास ज्यादा कपड़े हैं और किसी के पास कम, इसका पता सड़कों पर नहीं लग सकता। किसकी पोशाक बढ़िया कपड़े की बनी है, और किसकी घटिया कपड़े की, इसका पता तो विशेषज्ञों को ही हो सकता है, और वह भी बहुत निकट से देखने पर।

यहाँ एक बात स्पष्ट कर देना आवश्यक है। मैं जिस रूप का विवरण दे रहा हूँ, वह समानता का नहीं है। मर्दों और औरतों के पहनावों में ज़मीन आसमान का अन्तर है। मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि लोगों के पहनावों में जो, भिन्नता है, उसका कारण व्यक्ति की निजी रुचि और सामाजिक परम्परा है। आर्थिक वर्ग-विशेष से इसका कोई संबंध नहीं।

अब हम उपभोग्य सामग्रियों की चर्चा करेंगे। जैसा कि प्रोफेसर एच. गोर्डन हेज ने १९४७ में 'हार्पर्स' मेगेज़ीन में लिखा, धनी व्यक्ति वही सिगरेट पीता है, जो कोई गरीब पीता है और वह हजामत उसी किस्म के उस्तरे से बनाता है जिससे एक निर्धन व्यक्ति बनाता है। उसके घर में वही टेलिफोन, वही रेडियो सेट, वही टेलिविजन सेट, वही वैक्यूम क्लीनर, प्रकाश और ताप का वही सामान लगा है, जो किसी गरीब के घर में है। धनी और गरीब की मोटरकारों में भी सामान्य अन्तर है।

नौकरों की श्रेणी प्रायः समाप्त हो गयी है। हालाँकि आज नौकरों की जो मज़दूरी है, वह १९०० की अपेक्षा ५ से १० गुना अधिक है। (और यदि किसी परिवार के साथ नौकर रह जाता है तो उसकी बचत इससे भी अधिक होती है)। अमेरिकी में परिवारिक नौकरों का अभाव इस बात का प्रमाण है कि बाहर से आये हुए लोग अमेरिकी समाज में किस प्रकार घुल मिल गये हैं। अमेरिका में घरेलू काम काज करने वाले नौकरों को उतने सम्मान की दृष्टि से नहीं देखा जाता। नौकरों की कमी के कारण कुछ परिवारों को रसोई आदि बनाने का काम स्वयं करना पड़ता है। इस तरह समृद्ध और गरीब लोगों के जीवन स्तर

का एतद्विषयक अंतर भी समाप्त हो गया है।

अमीरों और गरीबों के जीवन स्तर का समन्वय आखिर हुआ कैसे ? इसके कई कारण हैं ; और जैसा कि हमने पिछले अध्यायों में देखा है, वे जटिल भी हैं। कुछ कारण तो आर्थिक और राजनीतिक हैं, जैसे आयकर और मजदूर संगठनों का दबाव। इसके लिए कुछ सामाजिक कारण भी जिम्मेदार हैं, जैसे सार्वजनिक उद्यानों और क्रीड़ास्थलों का विकास। लेकिन इसका सबसे प्रमुख कारण उपभोग्य सामग्रियों का विस्तृत पैमाने पर उत्पादन है। इसी के कारण, वे विलास-सामग्रियाँ समाप्त हो गयीं, जिनके निर्माता और विक्रेता सामूहिक ढंग से उत्पादित सामग्रियों के निर्माताओं और विक्रेताओं के आगे ठहर न सके। उदाहरणार्थ, दर्जियों, जिल्दसाज़ों, कमीज़ बनानेवालों को अपने अस्तित्व के लिए भारी संघर्ष करना पड़ रहा है। हम पर वृहत् उत्पादन हावी है ; और वृहत् उत्पादन के अन्तर्गत भिन्नता एक सीमा तक ही रह सकती है।

इस परिवर्तन का एक कारण शिक्षा का प्रसार भी है। १६०० में हाईस्कूल में पढ़नेवाली अवस्था के प्रति दस लड़कों में एक लड़का वास्तव में हाईस्कूल में पढ़ता था। लेकिन आज ऐसे ५ लड़कों में ४ लड़के हाईस्कूलों में पढ़ते हैं। उन्हें न केवल किताबी बातें बतायी जाती हैं, बल्कि समाज शिक्षा भी दी जाती है। अमेरिकी विश्वविद्यालयों, कालेजों और शिक्षण-प्रशिक्षण संस्थानों में छात्रों की संख्या पहले से ८ गुना अधिक है।

द्वितीय विश्वयुद्ध ने भी इस नयी धारा को कम संबल नहीं दिया। लाखों लोगों को विदेशों में जाकर दूसरे लोगों के जीवन को देखने का अवसर मिला। बहुतों को फ्लाइंग अफसर बनने का सुयोग प्राप्त हुआ। मुझे याद है कि एक दिन अपना पासपोर्ट साइज़ का फोटो बनवाने मैं एक महज़ मामूली फोटोग्राफर के पास गया। उसने बताया कि उसका लड़का विमानचालक है और दक्षिणी अतलांतक सेना में कार्य कर रहा है। मैं सोचने लगा कि क्या आज से दो-तीन वर्ष पूर्व वह कल्पना कर सकता था कि उसका लड़का विमानचालक भी बन सकता है। इससे पूर्व उसके लड़के ने क्या सोचा भी होगा कि वह ब्राजील और लाइबेरिया भी देख सकेगा, और वह भी एक सैनिक अफ़सर की हैसियत से !

इसी प्रकार, अधिक प्रचलित पत्रिकाओं, फिल्मों, रेडियो और टेलिविजन के व्यापक प्रभाव की उपेक्षा नहीं की जा सकती। पीढ़ियों से पत्र-पत्रिकाएँ लोगों को बताती आ रही हैं कि बच्चों का लालन-पालन कैसे हो, अतिथियों की आवभगत कैसे की जाए, संतुलित भोजन कैसे बनाया जाए, घर को कैसे सजाया जाए, आदि आदि। यह बात जरूर है कि यदाकदा इन पत्रिकाओं में प्रकाशित विचार विज्ञापनदाताओं की चापलूसी के रहे हैं अथवा बेतुका। लेकिन कुल मिला कर जनता का जीवन तथा मानसिक स्तर उठाने में उनका योग महत्त्व-पूर्ण रहा है।

पत्रों द्वारा जनता के शिक्षण की बात बिलकुल २० वीं शताब्दी की है। १६०० के आसपास अमेरिका में ऐसा एक भी पत्र न था, जिसकी बिक्री १० लाख अथवा इसके आसपास होती हो। लेकिन १६४७ तक अमेरिका में ऐसी ३८ पत्रिकाएँ हो गयीं, जिनमें से प्रत्येक की बिक्री १० लाख से अधिक थी।

इसी प्रकार रेडियो, जिसका अधिक उपयोग १६२० के इर्द-गिर्द हुआ, और टेलिविजन तथा सिनेमा, जो १६०५ के इर्द-गिर्द शुरू हुआ, का आनन्द सभी प्रकार की आयवाले स्त्री-पुरुष, बच्चे-बूढ़े एक साथ उठा रहे हैं। इस कारण उनके कार्यक्रम और चलचित्र इस तरह बनाये जाते हैं, ताकि अधिकतम अमेरि-कनों की रुचि से वे मेल खा सकें।

३

यह कहना अतिशयोक्ति होगी कि अमीरों के साधनों में कमी तथा निखिल अमेरिकी जीवन-स्तर स्थापन की धारा ने अमेरिकी समाज को समाप्त कर दिया है। सामाजिक स्पर्द्धा मानव संबन्ध का एक शाश्वत तत्व है। किसी भी जन-समुदाय में सामाजिक रेखा बनती ही है। अधिकांश कस्बों और छोटे-छोटे नगरों में कुछ लोग ऐसे होते ही हैं, जो जनसाधारण से ऊँचे माने जाते हैं। हाँ, यह बात जरूर है कि इसमें भी परिवर्तन होता रहता है। पर, जैसे-जैसे हम छोटे समुदाय से बड़े समुदाय की ओर बढ़ते हैं, यह तत्व अधिक पेचीदा और अगम्य होता जाता है। पेशे और व्यवसाय की भिन्नता इस तत्व को जटिल बना देती है। विशेष व्यावसायिक स्थिति भी सामाजिक संबंधों पर अपना प्रभाव डालती

है। कई नितांत नवीन भिन्नताओं का आविर्भाव होता है, जिनका पुरानी पारिवारिक परम्पराओं से कोई सम्बन्ध नहीं होता। यह बात न केवल व्यावसायिक पदाधिकारियों पर, बल्कि बड़े-बड़े खेल-तमाशावालों तथा अन्य महत्त्वपूर्ण लोगों पर भी लागू होती है।

विकासोन्मुख उपनगरों में यह वर्ग-भिन्नता इस कारण जटिल हो जाती है कि वहाँ के लोग बराबर बदलते रहते हैं। परिस्थितिवश वे एक स्थान पर नहीं रह पाते। रोजी के सुअवसर, बच्चों को उपयुक्त शिक्षा-दीक्षा आदि उन्हें चलायमान रखते हैं।

पुराने जमाने में अधिक पूँजीवाले लोग न्यूयार्क आ जाते थे। परन्तु अब न्यूयार्क में ही यह वर्ग-वैभिन्य अपनी चरम-सीमा पर है — संपन्न लोगों का अपना वर्ग बन गया है, इसी प्रकार बैंकरों, दलालों, वकीलों और उनके परिवारों का अपना समाज है। प्रकाशकों, लेखकों, विज्ञापन करनेवालों, रेडियो और टेलिविजन पर काम करनेवालों का भी अपना वर्ग बना हुआ है। इसी तरह खुदरा और थोक व्यापारियों का समाज है। फिर गिरजाघरों से संबद्ध लोगों का भी एक अपना वर्ग है। इसके अतिरिक्त परिचय का बंधन भी एक है, जो लोगों को एक दूसरे के निकट आने को बाध्य करता है। यही क्यों, बहुत से लोग ऐसे हैं, जो अपने अवकाश के दिन देहातों में अथवा सुन्दर जगहों पर बिताने जाते हैं, वहाँ भी उनके कुछ अपने परिचित लोग होते हैं। फिर प्रत्येक कला के अपने समर्थक और प्रशंसक होते हैं। कुछ स्थानों पर यहूदी अयहूदियों से मिलते-जुलते रहते हैं, और कहीं-कहीं वे बिलकुल अलग रहते हैं।

तब, यह कहना ठीक न होगा कि आज समाज का कोई अस्तित्व रह ही नहीं गया है। आज भी ऐसे सुविख्यात एवं साधन सम्पन्न परिवार हैं, जिनको यह बात बेढंगी लगेगी। समाज आज भी विद्यमान है और यही संभवतः उनका रहस्य है।

विज्ञापकों ने शायद इस परिवर्तन को अधिक भली प्रकार समझा है। १९४९ में एगनेस रोजर्स ने लिखा कि "शारीरिक चमक-दमक का आज ऐसा विज्ञापन किया जाता है, मानों वह सभी स्त्रियों के लिए सुलभ है। निर्मातागण आज महसूस करते हैं कि अपनी चीजों की बिक्री बढ़ाने के लिए स्त्रियों के मस्तिष्क में

यह बात बैठा देना जरूरी है कि वे भी समाज की संभ्रांत और संपन्न महिलाएँ हैं। उपयुक्त वस्तुओं को खरीदकर उसका सही प्रयोग करने से सभी औरतें आकर्षक बन सकती हैं। थोड़े से व्यय और प्रयास के बल पर हर नारी अपना व्यक्तित्व चमत्कारपूर्ण बना सकती है, शारीरिक चमक-दमक का लोकतन्त्र करण हो चुका है।

जहाँ तक पुराने बड़े खानदानों का सवाल है, उनमें से अधिकांश सम्पदा-कर और अतिरिक्त कर के पंजे के नीचे दब चुके हैं। वे बड़े-बड़े किले, जिनके प्रासादों में बड़े शौकीन और फैशनेबुल लोग रहा करते थे अधिकांशतः खाली हो चुके हैं। कुछ अब भी हैं, विशेषकर न्यू पोर्ट में। जहाँ के पुराने ख्याल के रईस अब भी यही दिखाने का प्रयास करते हैं कि जमाना कुछ खास बदला नहीं है। लेकिन न्यूयार्क में जहाँ फिफ्थ एवेन्यू पर पहले विलियम एच., विलियम के, और कोरनेलिस वेन्डरबिल्ट जैसे करोड़पतियों के प्रसाद हुआ करते थे, वहाँ अब दफ़्तरों और रहने के कमरे बने हुए हैं। उनमें से कुछ अब लड़के लड़कियों के बोर्डिङ्ग हाउस, स्कूल अथवा अस्पताल बन चुके हैं। वैसे प्रासाद इधर अरसे से नहीं बने, क्योंकि एक तो बड़े-बड़े पुराने ढंग के प्रासादों की देख-भाल तथा मरम्मत आदि पर खर्च बहुत बैठता है, दूसरे आज के समृद्धिशाली लोगों की रुचि रईसी की ओर उतनी नहीं है।

इन निजी प्रासादों के अभाव को देख कर दो प्रकार की बातें मन में पैदा होती हैं। इन भवनों का आकार प्रकार यूरोपियन किस्म का होता था। आज के युग में उनकी देखभाल करना बड़ा व्यय साध्य काम है। दूसरे, उनके स्थान पर निर्मित नये मकानों में अधिक लोगों की सुख-सुविधा की व्यवस्था हो सकी है। फिर भी, इतना तो मानना ही पड़ेगा कि इन प्रासादों की भी अपनी शोभा थी। आज के कम निर्जीवद्ध समाज में उसका अभाव खटक ही जाता है।

४

आज बेतकल्लुफी की भावना व्यापक हो गयी है। इसकी प्रगति का इतिहास इतना लम्बा चौड़ा है कि इसकी प्रतिक्रिया-स्वरूप सजधज और रईसी के प्रति क्षण भर के लिए ही सही, लोगों की रुझान हो जाती है। परन्त स्थिति

यह है कि यदि औपचारिकता की ओर एक कदम उठाया गया, तो अनौपचारिकता की ओर दो कदम आप-से-आप उठ जाते हैं।

आज के अमेरिकी पुरुष को देखिए। 'कटअवे' कोट समाप्त होता जा रहा है। शादी ब्याह के मौके पर एकाधिक लोग उसका इस्तेमाल कर लेते हैं, बस। 'टेलकोट' का व्यवहार भी घटता जा रहा है। सम्पन्न वयस्क नागरिकों ने १९२६ में जो 'फुलड्रेस सूट' बनवाये थे, उन्हें निकालने का शायद ही कोई अवसर आया हो। रात्रि भोजन के लिए विशेष कपड़े पहनने की प्रथा दिन-दिन समाप्त होती जा रही है। वेस्टकोट पहनने की परिपाटी भी उसी प्रकार समाप्ति पर है। यदि ४० वर्ष से कम अवस्था का कोई व्यक्ति वेस्टकोट पहन लेता है, तो वह दकियानूस समझा जाता है। हैट भी लोप होता जा रहा है, खासकर गर्मियों के दिनों में वह देखने में नहीं आता।

इसके विपरीत खेलकूद की पोशाकों का प्रचलन दिनों-दिन बढ़ता जा रहा है। ट्वीट जैकेट और फलालैन या खाकी स्लैक अथवा भड़कीले रंग की कमीज और स्लैक का व्यवहार बढ़ता जा रहा है। कामकाज के लिए विशेष कपड़ों का इस्तेमाल हो रहा है। बहुत से कालेजों में सूट के नाम पर सिर्फ पेंट और कोट का प्रचलन अधिक है। यही पोशाक औपचारिक अवसरों पर भी पहनी जाती है।

यह बेतकल्लुफी स्त्री-पुरुष के साहचर्य की मौजूदा विचारधारा के अनुकूल ही है। पति पत्नी आज पहले की अपेक्षा अधिक समय एक दूसरे के साथ काटते हैं। बर्तन धोने, रसोईघर को रंगने, बच्चा खेलाने आदि में दोनों ही एक दूसरे का हाथ बटाते हैं, क्योंकि बढ़ी हुई मजदूरी उन्हें स्वयं यह सब काम कर लेने को बाध्य करती है। रसोई के सामान की मरम्मत आदि भी उन्हें स्वयं कर लेनी पड़ती है। फलतः पति पत्नी को इतना समय कहाँ मिलता है कि वे इस अवसर के लिए कपड़े बदलें। सहशिक्षा का दिनोंदिन विस्तार होता जा रहा है। फलस्वरूप लड़के और लड़कियाँ एक दूसरों को काम करते अथवा खेलते हुए देखते ही हैं और उसी के अनुरूप पोशाक भी पहनते हैं।

नौकरों की दुर्लभता के साथ बफे स्टाइल के भोजों का प्रचलन बढ़ता जा रहा है। किसी भी निजी होटल आदि में नृत्य का आयोजन करना कठिन हो गया है। यह बात अवश्य है कि युवक युवतियों के एक दल को रात्रि क्लब अथवा

होटल में नाचने के लिए बुलाया जा सकता है। परन्तु यहाँ व्यय इतना अधिक पड़ता है कि वे ही युवक युवती नाच से फारिग होने पर किसी छोटे होटल अथवा उपहार गृह में जाकर बीयर अथवा हल्का पेय लेते हैं। और वहाँ के मुक्त वातावरण में अपना दुःख सुख सुनते सुनाते हैं। स्कवेर डांसिंग आजकल अधिक लोकप्रिय है और यह जितनी गँवारू होगी, उतनी अधिक पसंद की जायेगी।

आखिर ऐसा क्यों ? मुख्यतः इसलिए कि यह अनौपचारिकता लोगों को अधिक लोकतांत्रिक, आडम्बर रहित और मैत्रीपूर्ण लगती है। अमीरों की बेटियों के मन में एक प्रकार की झेंप अब भी विद्यमान है। उनकी अन्तरात्मा इस कारण मर्माहत है कि पिछली मन्दियों में बहुत से लोग उनके रहन सहन का विरोध करने लगे थे तथा जिस पैसे से यह सब कुछ संभव था, उसकी उपार्जन-विधि के प्रति उनका संदेह बढ़ रहा था। यह झेंप कई रूपों में प्रकट होती है। एक रूप यह है कि वे साधारणतः ऐसे मनोरंजनों में शरीक होना चाहती हैं जिनमें बनाव श्रृंगार की आवश्यकता अपेक्षाकृत कम पड़ती है। यह बात बहुत हद तक बड़े-बड़े व्यवसायियों पर भी लागू होती है। वे हमेशा यह दिखाने की कोशिश करते हैं कि उनके मिजाज शाही नहीं हैं। अधिकतर लोग ऐसे हैं, जिन्हें लोकतांत्रिक लगनेवाली किसी भी चीज पर रहस्यपूर्ण संतोष होता है। और अन्य लोग औपचारिकता को मनहूसियत का प्रतिबिम्ब अथवा आधुनिकता के विपरीत मानते हैं।

इस अनौपचारिकता के प्रति किसी की चाहे जो भावना हो, परन्तु यह निश्चित रूप से अमेरिकनों के जीवन स्तर और आचार व्यवहार का व्यापक मानदण्ड है।

१६

कारपोरेशन, नयी शैली

अपने ही समय के जीवन और संस्थाओं के स्पष्ट पर्यवेक्षण से अधिक

कठिन काम शायद और कोई नहीं। स्थिति तब और जटिल हो जाती है जब सब कुछ देख चुकने के बाद हम अपनी धारणाओं को सामान्य स्थिति की संज्ञा देने लगते हैं। क्योंकि हमारे पास अपना मन्तव्य व्यक्त करने के लिए प्रायः उपयुक्त शब्द नहीं होते।

दृष्टांत स्वरूप 'पूँजीवाद' शब्द को ही लीजिये। हम प्रायः यही कहते हैं कि हमारी आर्थिक पद्धति पूँजीवादी है। परन्तु इस शब्द का जो अर्थ आज से अर्द्ध शताब्दी पूर्व अथवा यूरोप में आज भी लगाया जाता है, उसका वर्तमान अमेरिकी प्रणाली से कोई तुक नहीं बैठता। इसी प्रकार 'स्वतंत्र व्यवसाय' और 'समाजवाद' का अपना परम्परागत अर्थ है। इन शब्दों के माध्यम से आज की राजनीतिक और आर्थिक स्थिति की सही अभिव्यक्ति नहीं की जा सकती।

अब एक उदाहरण कारपोरेशन का लीजिये। अधिकांश अमेरिकी वाणिज्य व्यापार आज कारपोरेशनों के जरिये होते हैं। कारपोरेशन भी कई प्रकार के हैं: कुछ तो बिलकुल नीजी हैं और कुछ बृहत्काय, जैसे, जनरल मोटर्स, जिसका वार्षिक व्यय १९२०-२९ की अमेरिकी सरकार के वार्षिक खर्च से भी अधिक है। [इसमें सेना और जलसेना का व्यय भी शामिल है।] अमेरिका में कुल लाभकर रोजीशुदा लोगों में से करीब आधे लोग किसी न किसी कारपोरेशन में काम करते हैं। यदि किसानों और निजी व्यवसाय करने वालों को छाँट दें, तो यह अनुपात और बढ़ जाता है। यही नहीं, स्वयं कारपोरेशनों, खासकर बड़े कारपोरेशनों के स्वरूप में आरंभ से लेकर आज तक महान और व्यापक परिवर्तन हुए हैं — इतने व्यापक कि आज इन पर दृष्टि डालने पर भी वास्तविकता को समझने में हम अपने को प्रायः असमर्थ पाते हैं।

यह परिवर्तन हम सब के लिए बड़ा महत्त्वपूर्ण रहा है। इसलिए यहाँ हम इस संस्था पर नये सिरे से विचार करेंगे।

हम पहले इस संबंध में आम बातों पर दृष्टिपात करेंगे; परम्परानुसार कारपोरेशन पर उन्हीं लोगों का नियंत्रण माना जाता है, जो उसमें पैसे लगाते हैं और उसके विकास में योगदान करते हैं। वे उसके शेयर खरीदते हैं

रखी जाती है। कम्पनी के कामकाज का विवरण छाया चित्रों और नक्शों के साथ प्रस्तुत किया जाता है। भागीदार को प्रायः उसी दृष्टि से देखा जाता है, जिस दृष्टि से कोई दुकानदार अपने ग्राहक को देखता है ; भागीदार को कम्पनी के मालिक की दृष्टि से नहीं देखा जाता, उसकी स्थिति केवल एक ऐसे व्यक्ति को होती है जिसे व्यवस्था विभाग इसलिए संतुष्ट रखना चाहता है, कि वह नाराज होकर अन्यत्र भागने न पाये।

विरोधी तत्व के अवसान के साथ कम्पनियों पर व्यवस्थापकों का वस्तुतः एकछत्र जैसा अधिकार हो गया है। अन्यथा आज जो स्थिति है, वह हो ही नहीं पाती। उदाहरणार्थ, अमेरिकन टेलिफ़ोन कम्पनी को लीजिये, इसके भागीदारों की संख्या १० लाख से ऊपर है, फिर भी उनमें से किसी एक का शेयर कुल शेयरों के १ प्रतिशत के दशमांश से अधिक नहीं है।

अमेरिकी व्यवसाय के इस पक्ष पर दृष्टिपात कर लेने के बाद हम अपने अर्थतंत्र को 'पूँजीवादी' न कहकर 'व्यवस्थावादी' कहना ही अधिक उपयुक्त समझेंगे।

इन सारी बातों की जानकारी अनेक प्रेक्षकों को वर्षों से है। परन्तु, एक और भी परिवर्तन आया है, जिसे लोग उतनी व्यापकता के साथ समझ नहीं पाये हैं।

और वह यह कि आज के कारपोरेशनों, खास कर बड़े कारपोरेशनों के संचालन में बैंकों का महत्व पहले की अपेक्षा कम हो गया है। यह सच है कि अनेक व्यवसायों के पुनर्गठन में बैंक महत्वपूर्ण योगदान करते हैं। इस कारण उनका प्रभाव शक्तिशाली हो सकता है, लेकिन किसी पर अपना वजन डाल कर विशेष बात मनवा लेने के अवसर उनके लिए अब बहुत कम रह गये हैं। इसके दो कारण हैं : एक तो यह कि पूँजी लगाने अथवा धन उधार देने के नियम सरकार द्वारा निर्धारित किये जा चुके हैं। दूसरे, डूबते हुए व्यवसाय को उबारने के लिए अन्य कई साधन भी आज उपलब्ध हैं — सरकार का पुनर्निर्माण वित्त कारपोरेशन (रिकंस्ट्रक्शन फाइनेंस कारपोरेशन), बड़ी-बड़ी बीमा कम्पनियाँ, पूँजी लगाने वाले ट्रस्ट आदि।

आज के अधिकांश सम्पन्न और समृद्धिशाली कारपोरेशन अपने लिए अति-

रिक्त पूंजी की व्यवस्था स्वयं कर लेते हैं। वे अपने लाभ का सीमित अंश ही लाभांश के रूप में बांटते हैं। शेष मुनाफे को वे नयी मशीन खरीदने, नये कारखाने बैठाने आदि में लगाते हैं। बैंकों को दबाने का यह तरीका इस शताब्दी के आरंभ काल में शायद ही किसी कारपोरेशन ने अपनाया हो। इस प्रणाली की लोकप्रियता तो १९२०-२९ की अवधि में बढ़ी और आज तो यह बड़े-बड़े कारपोरेशनों के लिए मानदंड बन गयी है। किसी बड़े कारपोरेशन का प्रधान 'वाल स्ट्रीट' को उसी दृष्टि से देखता है, जिस दृष्टि से वह अपने डाक्टर को देखता है। उसके सामने विनम्र ही रहो, शायद कोई ऐसा दिन आ जाय कि हमें उसकी सहायता लेनी पड़े, और वैसे भी यदाकदा उसकी सलाह लेना लाभदायक ही रहेगा। इसका अभिप्राय यह नहीं हुआ कि डाइरेक्टर उसका मालिक बन गया, हालांकि श्री विशिस्की ठीक इसके विपरीत कहते हैं।

प्रश्न उठ सकता है कि क्या सफल कारपोरेशन स्वयं अपना मालिक है? सर्वांशतः नहीं।

इसके कई कारण हैं। प्रथम तो यह कि, सरकार ने इस पर बहुत सारे प्रतिबन्ध लगा रखे हैं। जैसा कि प्रोफ़ेसर समर एच. स्लिक्टर ने कहा, पिछले ५० वर्ष के महान् परिवर्तन के फलस्वरूप 'स्वतंत्र व्यवसाय' ने शासन द्वारा 'निर्देशित व्यवसाय' का रूप ग्रहण कर लिया है। डा० स्लिक्टर के कथनानुसार 'नया अर्थतंत्र' इस सिद्धांत पर आधारित है कि, किसकी आमदनी क्या हो, किस चीज़ का उत्पादन क्या हो और वह किस कीमत पर बेची जाये, इसका निश्चय सार्वजनिक नीति के अनुसार किया जाना चाहिए। किसी वस्तु का निम्नतम और किसी का अधिकतम मूल्य निर्धारित कर सरकार कीमतों पर नियंत्रण करती है। वस्तुओं का विज्ञापन किस प्रकार हो, उनकी बिक्री कैसे हो, कारपोरेशन को कौन-सा नया व्यवसाय खरीदने की अनुमति दी जाये और कर्मचारियों को कितना वेतन दिया जाये, यह निश्चय भी सरकार ही करती है। इस प्रकार बाज़ार का नियमन सरकार ही करती है। जिन राज्यों में 'उचित रोज़गार' का कानून लागू है, वहां तो यह निश्चय भी सरकार ही करती है कि किन लोगों को कौन-से कामों पर नियुक्त किया जाये। यही नहीं, आय-कर, सामाजिक सुरक्षा-कर तथा अन्य

प्रकार के करों के कारण कारपोरेशनों को बड़ा बीहड़ हिसाब-किताब रखना पड़ता है।

मज़दूर संगठनों के कारण प्रबन्धकों के अधिकार भी बड़े सीमित हो गये हैं। यह बात ज़रूर है कि मज़दूर संगठनों की शक्ति बिलकुल अरचनात्मक होती है। मज़दूर संगठन कारपोरेशन का काम-काज बन्द करा सकता है, पर उसे चला नहीं सकता, न ही वह अपने तथा कम्पनी के बीच हुए किसी समझौते की शर्तों को कार्यान्वित कर सकता है। परन्तु, किसी काम में टाँग अड़ाने की शक्ति मज़दूर नेताओं में बहुत है। लोग कहते हैं कि वैयक्तिक प्रभाव की दृष्टि से पियर-पोन्ट मोर्गन के सबसे निकट आने वाला कोई व्यक्ति है, तो वह जान एल. लेविस है, और बहुत अंश तक उनकी यह धारणा ठीक भी है। मज़दूर संगठनों से हुए कई समझौतों के फलस्वरूप ही कारखानों और दफ्तरों के लिए ये नये कानून बने हैं।

२

सम्मिलित व्यवसाय के ढाँचे में ही परिवर्तन होता जा रहा है।

इस परिवर्तन की अभिव्यक्ति के लिए एक शब्द ज्यादा उपयुक्त जँचता है। हम कह सकते हैं कि व्यवसाय पेशे का रूप ग्रहण करता जा रहा है—ठीक वही जो वकील, डाक्टर, इंजीनियर अथवा प्रोफ़ेसर का है। वाणिज्य-व्यवसाय भी एक प्रकार का पेशा बनता जा रहा है।

वर्तमान शताब्दी की प्रथम दशाब्दी के अंत में हार्वार्ड विश्वविद्यालय के अध्यक्ष 'ने जब हार्वार्ड ग्रेजुएट स्कूल आफ़ बिजनेस एडमिनिस्ट्रेशन को व्यावसायिक स्कूल कहा था, तब पुराने विचार वालों में खलबली पैदा हो गयी थी। व्यवसाय और पेशा। उनके विचार में व्यवसाय एक प्रकार का दुर्द्धर्ष युद्ध था। फिर, व्यवसाय के लिए आदमी तैयार करने की बात तो कल्पनातीत ही थी। लेकिन तब और अब में कितना बड़ा अन्तर आ गया है, इस बात का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि हार्वार्ड के उसी व्यावसायिक स्कूल को अब अत्यधिक सम्मान की दृष्टि से देखा जाने लगा है। बड़े-बड़े कारपोरेशन भी अपने व्यय से अपने योग्य अधिकारियों को वाणिज्य-व्यवसाय का उच्च प्रशिक्षण प्राप्त करने

के लिए वहाँ भेजते हैं। इसका अर्थ यह नहीं कि इस महान विश्वविद्यालय ने व्यापारिक स्कूल के चलते अपनी विद्वत्ता की परम्परा छोड़ दी है; अपितु इसके माने यह हुए कि वर्तमान अमेरिकी व्यवसाय अपने प्रमुख संचालकों में तत्वतः क्षेत्रीय निपुणता एवं योग्यता की अपेक्षा रखता है।

ऐसे व्यवसायियों की कमी नहीं, जिनका एकमात्र उद्देश्य रुपया कमाना होता है, चाहे उससे दूसरों का कितना ही अहित होता हो। फिर भी आज के बड़े कारपोरेशनों के अधिकारी यह बात अच्छी तरह जानते हैं कि अपने कर्मचारियों, शासन, उपभोक्ताओं और जन साधारण के साथ उनका अत्यंत पेचीदा संबंध है। उन्हें इन सारी पेचीदगियों के बीच अपना संतुलन बनाये रखना पड़ता है। और यही कारण है कि आज प्रशिक्षित और लचीले मस्तिष्क वाले की पूछ बढ़ गयी है।

व्यवसाय में आज अनेक पेशों के लोगों का समावेश हो गया है। आज बहुत से इंजीनियर व्यापारिक प्रतिष्ठानों से सम्बद्ध हैं। और, जैसा कि "एक्जेकिटिव एक्शन" नामक पुस्तक के लेखकों ने कहा है, "अब 'इंजीनियर' नाम का कोई आदमी न रहा, बल्कि विशेष व्यवसायों की जानकारी रखने वाले इंजीनियर हैं, जिनमें से अधिकांश की कुशलता उनकी अपनी चीज़ है।" व्यवसाय में आज आँकड़ा विशेषज्ञ, लागत आँकने वाले एकाउण्टेंट, आय-व्यय परीक्षक, अर्थशास्त्री, जिन्स की क्वालिटी पहचानेवाले विशेषज्ञ, वेग परीक्षक, सुरक्षा की व्यवस्था करने वाले इंजीनियर, स्वास्थ्य निर्देशक, श्रम सम्पर्क विशेषज्ञ, प्रशिक्षण अधिकारी, जन सम्पर्क अधिकारी, विज्ञापन विशेषज्ञ, बाजार का रुख पहचानने वाले लोग, शोध सलाहकार, विदेशी वाणिज्य सलाहकार, वकील, कर-विशेषज्ञ आदि सब लगे हुए हैं। [यह सूची अभी और बढ़ सकती है।]

एक बात और। किसी बड़े कारपोरेशन में लगे इंजीनियर तथा वैज्ञानिक कहीं अन्यत्र कार्य करने वाले हमपेशा वैज्ञानिकों और इंजीनियरों से मिलते-जुलते रहते हैं। विचारों का पारस्परिक आदान-प्रादान कर अपना ज्ञानवर्द्धन करते हैं। वे नेशनल सोसाइटी आफ सेल्स ट्रेनिंग एक्जेकिटिव्स, या नेशनल एसोसियेशन आफ़ कास्ट एकाउण्टेंट अथवा अमेरिकन सोसाइटी आफ़ कारपोरेट सेक्रेटरीज़ की बैठकों में जाते हैं। जब ये लोग — उदाहरणार्थ, अमेरिकन केमिकल सोसाइटी के अधिवेशन में औद्योगिक रसायनशास्त्री और सरकारी तथा विश्वविद्यालय के

रसायनशास्त्री मिलते हैं, तब वे अपने ज्ञान के विशेष क्षेत्र को विकसित करने के कार्य में पारस्परिक लगन पाते हैं·—एक धरातल पाते हैं। डा० जे. राबर्ट ओपन-हाइमर ने १९४५ में अमेरिकी कांग्रेस की एक समिति के समक्ष कहा था, "वैज्ञानिक आपस में मिल कर जो बातचीत करते हैं, वह भौतिक विज्ञान की जीवन-शक्ति है, और मैं समझता हूँ कि विज्ञान की अन्य शाखाओं के मामले में भी सच है।"

विचारों का यह आदान प्रदान एक विशेष अर्थपूर्ण बात की ओर इंगित करता है, जो यूरोपियन और यहाँ तक कि ब्रिटिश व्यापारियों के लिए भी आश्चर्यजनक है। वह यह कि अमेरिकी व्यवसाय में रहस्य नाम की चीज प्रायः है ही नहीं। बल्कि तथ्यों और विचारों के इस कोष से सम्पूर्ण अमेरिकी महादेश लाभान्वित हुआ और हो रहा है।

इसी प्रकार बहुत वर्ष पूर्व पत्र प्रकाशकों ने आडिट ब्यूरो आफ़ सर्क्यूलेशन की स्थापना की, जिसका काम प्रत्येक पत्र-पत्रिका की बिक्री संख्या की सच्ची रिपोर्ट देना है। कुछ देशों में पत्रों की बिक्री संबंधी आँकड़े बहुत गुप्त रखे जाते हैं। लेकिन यहाँ लोग यह मान कर चलते हैं कि विज्ञापन-दाता को इस बात का ज्ञान होना चाहिए कि जिस पत्र में वह विज्ञापन छपवाना चाहता है उसकी स्थिति क्या है।

इस ज्ञान संग्रह में व्यापारिक पत्र-पत्रिकाओं का भी बड़ा भारी योगदान रहा है। इन सब में वाणिज्य व्यापार सम्बन्धी बड़ी उपयोगी बातें भरी रहती हैं। मुझे बताया गया है (वह भी निराधार नहीं) कि द्वितीय महायुद्ध में इटली की वायुसेना की कमजोरी का प्रधान कारण यह था कि मुसोलिनी सरकार ने इटली में विमान व्यवसाय संबंधी ब्रिटिश और अमेरिकी पत्र-पत्रिकाओं के आयात पर प्रतिबन्ध लगा दिया था। इस कारण इटली के इंजीनियरों को बहुत सी-जान-कारियाँ नहीं मिल पाती थीं।

परन्तु, अमेरिका में सूचना संग्रह का सबसे विलक्षण साधन व्यापारिक सम्मेलन है। 'वाल स्ट्रीट जरनल' के अनुसार १९३० में अमेरिका में ४ हजार व्यापारिक संघ थे, लेकिन अब उनकी संख्या — आप मानें या न मानें—१२ हजार है। इनमें से डेढ़ हजार व्यापारिक संघ तो राष्ट्रीय हैं और साढ़े १० हजार

संघ प्रादेशिक तथा स्थानीय। इनमें से कई संघों के व्यवस्थापक वेतन पाते हैं। इसका एक स्वाभाविक परिणाम यह निकलता है कि १९५१ में इन संघों के प्रबन्धकों का एक सम्मेलन शिकागो में हुआ और उन्होंने उसमें व्यापारिक संघों के व्यवस्थापकों के व्यापारिक संघ के रूप में विचार-विमर्श किया।

३

वाणिज्य व्यवसाय की वतमान रूपरेखा और इसके कर्ता-धर्ताओं की समस्याओं का अध्ययन करने के बाद 'फारचुन' नामक पत्रिका के सम्पादकों ने अपनी किताब "यू. एस. ए. दि पर्मानेंट रेवोल्यूशन" में लिखा है कि "व्यवस्था का काम भी एक व्यवसाय बनता जा रहा है।" और एक विज्ञापन में यहाँ तक लिख मारा कि "दि टाइकून इज़ डेड" अर्थात् (व्यापारिक) राजा अब मर चुका।

राजा मर गया? यह रिपोर्ट अतिशयोक्तिपूर्ण हो सकती है। फिर भी, अब जिस प्रकार के लोग व्यावसायिक क्षेत्र में अग्रणी हो रहे हैं, वे पहले के लोगों से भिन्न हैं।

आज यह बिलकुल स्वाभाविक बात लगती है कि बड़े-बड़े व्यापारिक अधिकारी कालेजों के स्नातक हैं और बहुत से लोग इंजीनियरिंग अथवा कानून की शिक्षा प्राप्त किये हुए हैं।

उदाहरणार्थ, मोटर उद्योग को ही लीजिये। जनरल मोटर्स के चीफ़ एग्जेकिटिव अफ़सर, चार्ल्स इर्विन विल्सन कार्नेगी इंस्टीट्यूट आफ़ टेक्नोलाजी के स्नातक हैं। उन्होंने इलेक्ट्रिकल इंजीनियर के रूप में इस क्षेत्र में प्रवेश किया। क्राइसलर के अध्यक्ष, लेस्टर लम कोलबर्ट टेक्सास विश्वविद्यालय और हार्वार्ड ला स्कूल में पढ़े हुए हैं। वह पहले श्रम कानून के विशेषज्ञ बने। फोर्ड कम्पनी के प्रधान हेनरी फोर्ड द्वितीय की बात कुछ दूसरी है। उन्हें उत्तराधिकार के रूप में एक जमी जमायी कम्पनी मिली है (आज के युग में यह परिपाटी प्रायः समाप्ति पर है)। तथापि उन्होंने भी अपने कुछ वर्ष येल विश्वविद्यालय में बिताये हैं।

ये लोग इस महान परिवर्तन की कुछ विलक्षणता के प्रतीक हैं। यह विलक्षणता उससे कुछ जूनियर लोगों में और अधिक पायी जाती है। सरकारी और सार्वजनिक नौकरियाँ इनकी बाट जोहती हैं। इससे उनका सर्वाङ्गीण ज्ञान वर्द्धन

होता है। नयी शैली के कारपोरेशन को नयी शैली के नेता मिलते जा रहे हैं।

एक बात है, जिस पर हम तो चकित होते ही हैं, यूरोपवाले भी कुछ कम अचंभित नहीं होते। अमेरिका के एक छोर से दूसरे छोर तक निजी संस्थाएँ और संघ भरे पड़े हैं। और सब-के-सब सार्वजनिक कल्याण के किसी-न-किसी अंग को लेकर चल रहे हैं। इनमें से अधिकांश में व्यापारी वर्ग सक्रिय और कभी-कभी महत्त्वपूर्ण योगदान करता रहा है।

'फारचुन' के सम्पादकों ने अपनी पुस्तक 'यू. एस. ए. दि पर्मानेंट रेवो-ल्यूशन' में इस तथ्य को प्रमाणित करने के लिए एक नगर सेडार रेपिड्स, आयोवा का उदाहरण दिया है। उन्होंने बताया है कि किस प्रकार सेंच्युरी इंजीनियरिंग कम्पनी के उपाध्यक्ष कीथ डन्न, सेडार रेपिड्स चेम्बर आफ़ कामर्स की अध्यक्षता करने के तुरन्त बाद ही कम्युनिटी चेस्ट की बैठक में भाग लेने जाते हैं। गारण्टी बैंक एंड ट्रस्ट कम्पनी के अध्यक्ष वान वेक्टन शेफर न केवल उक्त चैम्बर की सम्पर्क के प्रधान हैं, बल्कि वह को — कालेज के ट्रस्टी और सेक्रेटरी, सेडार रेपिड्स कम्युनिटी फाउन्डेशन के अध्यक्ष, स्थानीय स्वास्थ्य परिषद के प्रधान, आयोवा स्वाथ्य परिषद के सदस्य और संत ल्यूक्स अस्पताल तथा स्थानीय नाट्यशाला के लिए धन संग्रहकर्ता भी हैं। अपने कुल समय का एक तिहाई से भी अधिक भाग स्थानीय समाज के कामों में लगाते हैं। व्यवसायियों का अस्पताल, स्कूल और कालेज-बोर्ड या दातव्य संस्थाओं का सदस्य होना कोई नयी बात नहीं। इसी प्रकार उनकी पत्नियों की सार्वजनिक सेवाएँ भी कोई अनसुनी बात नहीं। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि व्यवसायियों के सहयोग से विकसित ऐसी कुछ संस्थाएँ एक नयी धारा की ओर इशारा करती हैं। जैसा कि 'क्रिश्चियन साइंस मानिटर' के इर्विन डी. केनहम ने कहा है 'यह सब स्वैच्छिक सामूहिक कार्य हैं। यह वह सहकारिता है, जिसकी शक्ति शायद मार्क्सवादी सहकारिता से भी अधिक सक्रिय और प्रभावोत्पादक है।'

यहाँ हम ऐसी दो संस्थाओं की चर्चा करेंगे। एक तो आर्थिक विकास समिति है। इसका कार्य आर्थिक समस्याओं का अध्ययन और राजनीतिक सिफारिशें करना है। समिति न केवल व्यवसायिक हित साधन के लिए

कार्य करती है, बल्कि देश के सर्वांगीण आर्थिक विकास के प्रश्न को अपनी दृष्टि से ओझल नहीं होने देती। इसकी विभिन्न समितियों में कम्पनी प्रधानों से लेकर शुद्ध अर्थशास्त्री लिये जाते हैं। एक विज्ञापन परिषद भी है, जिसे लेविस गेलेन्टायर ने 'व्यवसायिक लोगों की स्वैच्छिक संस्था कहा है।' यह परिषद स्कूलों में सुधार, सड़क यातायात सुरक्षा, अग्निकांड की रोकथाम, सरकारी बांड की बिक्री बढ़ाने, यक्ष्मा तथा अन्य बीमारियों के निरोध पर प्रचार की रूपरेखा राष्ट्र के सामने प्रस्तुत करती है। विभिन्न कम्पनियाँ रेडियो और टेलिविजन द्वारा प्रचारित अपने विज्ञापनों में सार्वजनिक कल्याण की बातें भी प्रस्तुत करती हैं। आज निजी स्वार्थ और सार्वजनिक कल्याण एक दूसरे के पूरक हो गये हैं।

और इसमें जो कुछ अंतर रह गया है उसे मिटाने का प्रयास इस शताब्दी के मध्य में बहुत उग्र गति से आगे बढ़ रहा है। आज विभिन्न विज्ञानों, विज्ञान और उद्योग, समाज विज्ञान और व्यवसाय तथा समाज के विभिन्न तत्वों में विद्यमान अंतर को मिटाने का प्रयास प्रत्यक्ष परिलक्षित हो रहा है। विभिन्न प्रतिद्वन्द्वी स्वार्थोंवाले लोगों का सम्मेलन बुलाने और उसमें सर्वसम्मत करने की आज एक परिपाटी-सी चल पड़ी है। हाल में ऐसा ही एक सम्मेलन विज्ञापन परिषद द्वारा बुलाया गया था, जिसमें अमेरिकी जीवन के उस पहलू को प्रकाश में लाने का विचार किया गया, जिसके बारे में विदेशों की धारणा स्पष्ट नहीं है। १६ अप्रैल, १९५१ को न्यूयार्क के होटल वाल्डोर्फ एस्टोरिया में आयोजित इस सम्मेलन में लेखक, पत्रिका संपादक और लेखक, विदेशी रेडियो सलाहकार और लेखक, समाचारपत्र सम्पादक, प्रोफेसर, कालेज अध्यक्ष, फाउन्डेशन अध्यक्ष, निर्माता और राजनीतिज्ञों ने भाषण किया था। इन सब ने जो कुछ कहा वह दिलचस्प तो था ही, उससे बढ़कर दिलचस्पी और महत्त्व की बात यह थी कि लोग इस शताब्दी के मध्य में अमेरिका का अर्थ समझने और समझाने के लिए एकत्र हुए थे। व्यवसायों तथा अन्य प्रकार के कार्यों में लगे व्यक्ति किस प्रकार राष्ट्र के सर्वांगीण हित के लिए प्रयत्न करते हैं, यह उसका एक नमूना है।

इधर अमेरिकी व्यवसाय के प्रबन्ध को एक आदमी के हाथ में न छोड़कर उसे सामूहिक रूप में करने की धारा भी बह चली है। व्यावसायिक 'राजा'

मरा भले ही न हो, पर यह तथ्य है कि "अमेरिकन टुम्बको" के स्व. जार्ज वाशिंगटन हिल और मोंटगुमरी वार्ड के सिवेल एवरी जैसे निरंकुश व्यवसायियों का नितांत अभाव होता रहा है।

स्टैंडर्ड आयल (न्यू जर्सी) की स्थिति कुछ भिन्न है। इसके डाइरेक्टर वेतन लेते हैं और नियमित कर्मचारी के रूप में अपना पूरा समय कम्पनी के कार्य में लगाते हैं। उनकी बैठक सप्ताह में एक बार होती है। ५ सदस्यों की एक कार्य-समिति भी है, जिसकी बैठक प्रतिदिन होती है। आजकल मिलजुल कर काम करने की जो धारा चल रही है, उसका यह एक दिलचस्प उदाहरण है। सी. हार्टनलो ने हार्पर्स मेगेजीन के अपने लेख में कम्पनी में उच्च अधिकारियों की कार्य-प्रणाली पर प्रकाश डाला है।

डाइरेक्टरों का बोर्ड कम्पनी की व्यवस्था की रीढ़ है, इस पर कोई विवाद नहीं हो सकता। इसके निश्चय सामूहिक निश्चय होते हैं। हमेशा सर्व-सम्मत निर्णय करने की कोशिश की जाती है। यदि कदाचित किसी बात पर सर्वसम्मति से निश्चय न हो सका और असहमत सदस्य को मनाने का प्रयास असफल रहा तो उस सम्बन्ध में और विस्तृत जानकारी की माँग के साथ उस प्रश्न पर निश्चय स्थगित कर दिया जाता है। बोर्ड के सदस्य की हैसियत से कम्पनी के प्रधान और बोर्ड के अध्यक्ष वादविवाद में भाग लेते हैं। सदस्य भी तो आखिर मानवीय जीव है, इसलिए यह संभव है कि प्रधान और अध्यक्ष की राय ज्यादा वजन रखती हो। परन्तु इसका यह मतलब कदापि नहीं कि वे दोनों बोर्ड पर हावी रहते हैं।

अब नयी शैली के व्यवस्थापकों से सम्बन्ध में भी थोड़ा विचार किया जाना चाहिए। इस सम्बन्ध में कोई खास मत बनाने से पूर्व सतर्कतापूर्वक विचार करना होगा। फिर भी इतना तो कहा ही जा सकता है कि इनके दृष्टिकोण में भी परिवर्तन है।

इन व्यवस्थापकों का दृष्टिकोण बदलने में पिछली घोर मन्दी का बड़ा हाथ है। अमेरिका के बड़े-बड़े व्यवसायियों को भली प्रकार याद है कि उन दिनों उन्हें किसी मुसीबत का सामना करना पड़ा था। ऐसे कुछ बड़े बूढ़े लोग आज भी हैं, जिनमें वाशिंगटन के प्रति घृणा की भावना अब भी बनी हुई है। और ऐसा व्यक्ति

तो शायद ही कोई हो, जो सरकारी प्रतिबन्धों से यदाकदा चिढ़ न जाता हो, फिर भी उनसे अपेक्षाकृत कम उम्र के उदारवृत्ति के लोगों में १६२०-२६ की व्यावसायिक प्रणालियों से वास्तविक अरुचि पैदा हो गयी है। वे जीवन के राजनीतिक और सामाजिक तथ्यों में अपनी नाक बिना मतलब घुसाना नहीं चाहते। वे अनुभव करते हैं कि,' जैसा कि पीटर एफ. ड्रकर ने कहा है, "जिस नीति से समाज का हित नहीं होता हो, उस से स्वयं व्यापार को भी कोई लाभ नहीं हो सकता।" इधर युद्ध ने भी लोगों का हृदय परिवर्तन करने में कुछ कम योगदान नहीं दिया। युद्ध ने व्यापारियों, सरकारी अधिकारियों, मज़दूर नेताओं, भौतिक वैज्ञानिकों, सामाजिक वैज्ञानिकों और विभिन्न व्यवसाय में लगे लोगों को एक मंच पर आने को बाध्य कर दिया। वे एक दूसरे के विचारों को समझना तथा एक दूसरे की योग्यता को पहचानना सीख गये। मेरे कहने का तात्पर्य यह नहीं कि व्यापारिक अधिकारियों ने अपने पर पवित्रता और उत्कृष्टता की मुहर लगा ली है।

४

आज का अमेरिकी कारपोरेशन — बड़ा अथवा छोटा — केवल आर्थिक इकाई नहीं है। एक माने में वह राजनीतिक इकाई भी है। किसी भी कारपोरेशन में काम करनेवाला मज़दूर बराबर मन ही मन अनुभव करता है कि किसी नियमित राजनीतिक दल से सम्बद्ध न होने पर भी राजनीति कुछ अंशों में उस पर हावी है। उसका अफ़सर चाहे वह कारपोरेशन का अध्यक्ष हो, या विभागीय प्रधान, या निरीक्षक अथवा फोरमैन — उसके लिए गवर्नर या मेयर से अधिक महत्त्व रखता है। उस पर जितना कम्पनी के आचार नियम का प्रभाव पड़ता है, उतना नगर, राज्य और राष्ट्र के नियमों का नहीं पड़ता। क्योंकि कम्पनी के नियमान्तर्गत उसे जितना लाभ मिलता है ; उतना उसे अपनी किसी अन्य सम्पत्ति से नहीं मिलता। वह अपने काम से कितना संतुष्ट है, इसका निर्णय भी कुछ अंशों में कम्पनी के नियमों से ही होता है। ये नियम न केवल मज़दूर के बल्कि उसके परिवार का भी नियमन करते हैं।

ये कारपोरेशन सामाजिक इकाई भी हैं। उदाहरणार्थ, कल्पना कीजिये कि

ओहायो के किसी कस्बे से एक लड़की फिलाडेल्फिया में काम करने आयी। वह भली प्रकार जानती है कि अपने नये सहकर्मियों और उनके मित्रों में से ही एक ऐसा आदमी निकल आ सकता है, जिससे वह विवाह करना चाहेगी। जब अन्य लड़कियों के साथ वह दोपहर का भोजन करने जाती है, तो उसका धीरे-धीरे एक नये समाज से परिचय होने लगता है।

लेकिन इस 'समाज' का स्वरूप कई बातों पर निर्भर है। कम्पनी विशेष के कर्मचारियों का विचार साम्य, कम्पनी शहर में अकेली है अथवा कई कम्पनियों में से एक, सभी कर्मचारी काम के बाद उपनगरों में चले जाते हैं या नहीं, मज़दूरों के एकत्र होने पर कोई प्रतिबन्ध तो नहीं है, आदि आदि।

कई कारपोरेशनों में तो यह 'समाज' विचित्र रूप ग्रहण कर लेता है। १९५१ के 'फारचून' में दो लेख प्रकाशित हुए थे, जिनमें बताया गया था कि कुछ प्रतिष्ठानों के अधिकारियों पर दबाव डाला जाता है कि वे अपनी पत्नियों को प्रतिष्ठान के आचार नियम के अनुरूप बना लें। इन लेखों का निचोड़ बाद में 'लाइफ़' नामक पत्रिका में प्रकाशित हुआ, जिसमें कहा गया था कि कुछ कम्पनियों में पदाधिकारी का चुनाव या उन्नति तब तक नहीं होती, जब तक उसकी पत्नी की योग्यता एवं अनुरूपता का पता न लग जाये।

उन लेखों में जो टिप्पणियाँ दी गई हैं उनसे यह स्पष्ट हो जाता है कि अमेरिका में ऐसे कई कारपोरेशन हैं, जिनमें मनुष्य के व्यक्तित्व को नष्ट करने के लिए ऐसा कोई षड्यंत्र नहीं चलता। ये लेख अप्रत्यक्षरूप से यह भी बताते हैं कि इस रिवाज का समाज पर कितना घातक असर पड़ सकता है। इससे तो अधिकारियों में सहकारिता तथा समाज के रूप में कारपोरेशन का सिद्धांत ही विद्रूप हो जायेगा।

आज के इस व्यावसायिक समाज में मज़दूर संगठनों का स्थान बेतुका है। ये संगठन स्वभाव से ही फूट डालनेवाले, व्यवस्था विरोधी, कम्पनी विरोधी और उद्योग विरोधी होते हैं। मजदूर नेता की स्थिति तो और भी विचित्र है। वह जिन बातों के लिए आन्दोलन करता है, उसे स्वयं अपने जीवन में उतार नहीं सकता। वह केवल शिकायतें करने, अविश्वास पैदा करने, कुछ मामलों में हड़ताल की धमकी को बनाये रखने के लिए विवश है।

यह ठीक हो सकता है कि औद्योगिक समाज में हड़ताल करने का अधिकार बुनियादी स्वतन्त्रता का एक अंग है। यह भी ठीक हो सकता है कि जीवन स्तर को उठाने में इन मजदूर संगठनों और नेताओं का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। यह स्वीकार किया जा सकता है कि कारपोरेशन के कोष के व्यय पर अंकुश रखने के लिए उसमें सभी कर्मचारियों का उचित प्रतिनिधित्व जरूरी है। फिर भी ये मजदूर संगठन अप्रासंगिक इसलिए हैं कि आज जब कि अमेरिकी जीवन का मानदण्ड एकरूपता की ओर अग्रसर हो रहा है, इन मजदूर संगठनों के कारण लोगों की निष्ठा बँट जाती है।

इन परिस्थितियों में यह बात महत्त्वपूर्ण है कि अमेरिका में आज कई सुव्यवस्थित और ज़िम्मेदार मजदूर संगठन हैं तथा मालिक मजदूर सम्बन्ध के मामलों में दोनों ओर धैर्य और सद्भावना पायी जाती है। विमान दुर्घटना की तरह हड़ताल सनसनीपूर्ण समाचार बन जाती है, पर जिस प्रकार विमानों की हज़ारों लाखों सफल उड़ानों की तरफ़ लोगों का ध्यान नहीं जाता, उसी प्रकार उचित समझौतों की ओर लोगों की नजर नहीं जाती। ब्रिटिश उत्पादकों का जो दल अमेरिका आया था, उसकी रिपोर्ट में कई स्थानों पर इस बात का उल्लेख किया गया है कि निर्माण तथा प्रशासन विधि के सुधार में व्यवस्थापक और मज़दूर किस हद तक एक दूसरे का हाथ बँटाते हैं। इसका एक कारण तो यह है कि हर विवेकशील आदमी यह मानता है कि उसका काम बढ़िया और उसका जीवन सुखी तभी होगा जब उसकी निष्ठा और कर्तव्यपरायणता संघर्षशील न होकर एक दूसरे की पूरक होगी।

पिछले कुछ समय से यह स्पष्ट होता जा रहा है कि उक्त तथ्य की जानकारी के फलस्वरूप हड़ताल का स्वरूप भी परिवर्तन की ओर अग्रसर हो रहा है। यह बात जरूर है कि कुछ हड़तालें हिंसात्मक और संघर्षपूर्ण रही हैं, लेकिन ये अपवाद हैं। वैसे पहले की हड़तालों और अब की हड़तालें में महान अन्तर आ गया है।

इधर, मौजूदा स्थिति में और अधिक सुधार के आसार नजर आने लगे हैं। एक तो यह कि उत्पादन के अनुसार वेतन निर्धारण मूलक कई समझौते हुए हैं। दूसरे, अच्छे उत्पादन के लिए पुरस्कार देने की परिपाटी चल पड़ी है, तीसरे कुछ कम्पनियों ने मुनाफ़े में हिस्सा बँटाने की परम्परा शुरू की है। कहीं-कहीं तो

इसका परिणाम कल्पनातीत रहा है। इसी प्रकार मजदूरों और मालिकों का सम्पर्क सुन्दर बनाये रखने के लिए व्यापक अध्ययन और खोज जारी है और यह उत्साहवर्द्धक है। हो सकता है कि एक पीढ़ी के बाद ही वह दिन आ जायेगा जब मजदूर संगठन मजदूरों की निष्ठा के भंजक न होकर अमेरिकी व्यवसाय के संगठन यंत्र का एक पुर्जा बन जायेंगे। क्योंकि इसका वर्तमान स्वरूप आज के परिष्कृत उद्योगों को देखते हुए बेतुका होता जा रहा है।

कारपोरेशन ने काफ़ी प्रगति की है, परन्तु इसके सामने और भी अधूरे काम पड़े हैं।

१७

समय की माग

हार्वार्ड के भूतपूर्व अध्यक्ष ए. लारेंस लावेल अपूर्व वक्ता थे। वह भाषण के पूर्व कोई नोट तैयार नहीं करते थे। अपने पहले दो तीन वक्ताओं के भाषण सुनते और तब स्वयं बोलने के लिए खड़े होते थे। पहले वह पूर्व वक्ताओं द्वारा व्यक्त विचारों की टीका टिप्पणी करते और तब अपना मन्तव्य व्यक्त करने लगते। उन का भाषण इतना प्रभावशाली होता कि लोग हैरत में पड़ जाते। उनकी इस चमत्कारपूर्ण भाषणकला का एक कारण यह था कि उन्होंने कई भाषणों के सारांश और उक्तियाँ कंठाग्र कर लिये थे। उनमें ही थोड़ा हेरफेर कर वह अपना मन्तव्य स्थापित करते थे। वह अवसर दो महान प्राचीन सभ्यताओं — यूनानी और कार्थेज — का विश्लेषण बड़े योग्यतापूर्ण ढंग से करते। वह कहा करते कि इनमें से एक सभ्यता (यूनानी) सबको स्मरण है और वह हम सबको प्रभावित कर रही है, पर दूसरी सभ्यता (कार्थेज) का कोई चिह्न बाद के युगों में शेष नह रह गय , क्योंकि कार्थेज की सभ्यता, यूनानी सभ्यता के विपरीत बिलकुल व्यावसायिक सभ्यता थी। इसमें विद्या, दर्शन अथवा कला का कोई स्थान न था।

"क्या अमेरिका का भी कार्थेज बन जाने का खतरा है?" लावेल पूछा करते और फिर विश्वविद्यालयों के प्रभावशाली महत्त्व का विश्लेषण करने लगते।

अमेरिका में ऐसे बहुत से लोग हो गये हैं और आज भी हैं, जिनकी धारणा है कि अमेरिका कार्थेज के मार्ग का ही अनुकरण कर रहा है। और यहाँ जो सभ्यता अभिव्यक्त हो रही है, उसमें धर्म और दर्शन का अभाव है, सार्वजनिक मनोरंजन की बर्बरतापूर्ण माँग के पंजे के नीचे कला का दम घुट रहा है, सार्वजनिक राय के दबाव से व्यक्ति की स्वतंत्रता दबी जा रही है तथा आध्यात्म मरता जा रहा है। आज अनेक अमेरिकनों — वृद्ध और युवक — की धारणा है कि हाल के वर्षों में मानसिक तथा आध्यात्मिक सफलता प्राप्त करना कठिन हो गया है और हमारी यांत्रिक तथा आर्थिक सफलताएँ व्यर्थ हैं, क्योंकि इनसे हमें आंतरिक शांति प्राप्त नहीं हुई है।

वर्तमान अमेरिकी संस्कृति पर लगाये गये कुछ आरोपों का अग्रिम खंडन किया जा सकता है। इस प्रकार उन लोगों की, जो अपने आश्वासनपूर्ण जीवन से अधिक सम्पन्न अन्य व्यक्तियों की परिस्थितियों एवं आचरण की तुलना करते हैं, भ्रांति का प्रतिवाद करना पड़ेगा। बहुत से लोगों के लिए यह समझना अति कठिन है कि अमेरिका की आज की परिस्थिति की सबसे बड़ी विलक्षणता यह है कि लोगों के लिए हर प्रकार के अवसरों का विस्तार हो गया है।

हम पहले एक ऐसे व्यक्ति की बात सुनेंगे, जो अपेक्षाकृत अधिक विवेकशील है, पर जो पिछली अर्द्धशताब्दी की सफलताओं का बड़ा आलोचक भी है।

"ट्वेन्टीअथ सेंच्युरी अनलिमिटेड" नामक पुस्तक की प्रस्तावना में ब्रूस ब्लाइवेन ने लिखा है, "१६५० के आरंभ में अनेक पत्र-पत्रिकाओं ने १६०० की सचित्र समीक्षा छापी थी, जिसमें मेकिन्ली युग की पोशाकों, बाइसिकलों की कतारें, नाई की दुकानों, जहाँ बड़ी-बड़ी मूछें बनायी जाती थीं और कीचड़-भरी सड़कों में उस ज़माने की मोटरकारें चलती दिखायी गयी थीं। परन्तु उनमें से किसी पत्र ने अर्द्धशताब्दी के परिवर्तनों की चर्चा न की थी — वे परिवर्तन, जिनमें अटूट आशावाद ने प्रायः नैराश्य का रूप ग्रहण कर लिया था।"

"आधी सदी के पहले मानव-जाति, खासकर अमेरिकी मानव-जाति की धारणा थी कि सभी संभव संसारों में यह संसार अच्छा है और हर क्षण अधिक सुन्दर

होता जा रहा है। स्वर्ग में परम दयालु ईश्वर बैठा है, जिसका एकमात्र काम मानव-जाति का कल्याण करना और उसकी दशा सुधारना है।"

श्री क्लाइवेन ने आगे लिखा है, कि आज हमारा विश्वास जाता रहा। हम डर के मारे मरणासन्न हो रहे हैं — हम पर युद्ध, अणुबम और मानव-जाति के ह्रास तथा पाशविकता के व्यापक प्रसार का भय हावी हो रहा है।

तो क्या हम धर्मविहीन हो गये हैं — क्या हम पतवार रहित नौका पर सवार हैं ?

इस प्रश्न का पूरा जवाब हमें चर्च के आँकड़ों में नहीं मिलता। इन आँकड़ों से चर्च जाने वाले लोगों की संख्या में वृद्धि का संकेत मिलता है। परन्तु ये आँकड़े संदिग्ध इसलिए हैं कि चर्च में ऐसे लोगों के नाम भी टँके रहते हैं, जो विवाहों और अन्त्येष्टि के अवसरों के अतिरिक्त वहाँ कभी नहीं जाते। और यह भी जानने का कोई तरीका नहीं है कि पिछली कुछ दशाब्दियों में चर्च संबंधी आँकड़ों के संग्रहकर्त्ताओं की चतुराई कम या अधिक हो गयी है। मेरा यह व्यक्तिगत अनुभव रहा है कि प्रस्तुत शताब्दी के प्रथम ३०-४० वर्ष में चर्च में लोगों की दिलचस्पी और आस्था पतनोन्मुख थी। खासकर सम्पन्न अमेरिकनों में यह भावना अधिक स्पष्ट थी। (कैथलिकों की बात और थी, उन पर विशेष अनुशासन का प्रतिबंध जो था।)

कुछ लोगों की यह धारणा भी बन चली थी कि विज्ञान और विशेषकर जीवों के क्रमिक विकास के सिद्धांत को देखते हुए पुराने जमाने से ईश्वर के लिए कोई स्थान नहीं रह गया है। उनकी दृष्टि में यह बात कल्पनातीत थी कि विज्ञान के करतबों और ईश्वर में तालमेल बैठ भी सकता है। (औपचारिक कार्य से पलायन की यह धारा अब भी चाहे हो या न हो।)

१९४०-४९ की अवधि में इस धारणा के विरुद्ध एक आन्दोलन-सा उठता दिखायी देने लगा। बहुत से पुरुष और स्त्री संकटकाल में एक विशेष अभाव महसूस करने लगे। उनमें यह इच्छा जाग्रत होने लगी कि हमें अतिरिक्त शांति और सुरक्षा प्राप्ति के लिए कोई उपयुक्त साधन मिल जाये। 'दि रोब', 'दि कार्डिनल', 'पीस आफ माइंड' और 'दि सेव्न स्टोरी माउन्टेन' नामक पुस्तकों में इसी जिज्ञासा और लालसा का प्रतिनिधित्व किया गया है। कुछ लोग पुनः चर्च जाने लगे और

कुछ के लिए चर्च जाने का पहला अवसर था। कुछ परिवारों में विचित्र स्थिति देखी जा सकती थी ; जिन माता-पिताओं ने पुराने धार्मिक रिवाजों के प्रति विद्रोह के कारण चर्च जाना छोड़ दिया था, उनकी संतति को स्वयं उनका आचार विचार पुराना लगा और उस (संतति) ने उसके प्रति विद्रोह कर दिया। कैथलिक चर्च के अनुयायियों की संख्या सबसे अधिक बढ़ने लगी। भूतपूर्व कम्युनिस्ट भी सनातनी का जामा पहनने लगे — एक अनुशासन को छोड़ कर दूसरे अनुशासन के नीचे आ गये। फिर भी सदी के मध्य तक निश्चित रूप से यह नहीं कहा जा सकता था कि चर्च आने वालों की संख्या अधिक है अथवा छोड़ने वालों की। परन्तु कम-से-कम इतना प्रकट होने लगा था कि धार्मिक भावना और आचरण का प्रभाव एक प्रकार से उलझ-सा गया है।

इधर, बहुत से परिवारों को चर्च से अपना संबंध कर लेने के फलस्वरूप एक बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ रहा था। उनके बच्चों को उचित आचरण सिखाने के लिए उपयुक्त शिक्षक नहीं मिल रहे थे। कुछ माता-पिता स्वयं इस अभाव को पूरा कर रहे थे, लेकिन अन्य ऐसा नहीं कर रहे थे। यह स्पष्ट होने लगा था कि उनके बच्चे न केवल बाइबिल के उद्धरण नहीं समझ पाते हैं बल्कि उनमें कोई स्पष्ट नैतिक आचार-विधि भी पनप नहीं पायी है। अब वे यह सोचने लगे कि इसके लिए दोषी किसको ठहराया जाये ?

मेरा विश्वास है कि इस निर्णय की सचाई संदेहास्पद है। शायद ऐसी एक भी पीढ़ी नहीं हुई होगी, जिसके कुछ सदस्यों की यह धारणा न रही हो कि अगली पीढ़ी पतन के गर्त में जाने वाली है। यह तर्क दिया जा सकता है कि वर्तमान सदी के मध्य में अनेक-अनेक अल्पवयस्कों के आचार-विचार पर उनके माता-पिता के कड़ी कारवाई में अविश्वास का प्रभाव पड़ा। लेकिन यह कहना कि उनका नैतिक मानदंड उनके पूर्वजों की अपेक्षा गिरा हुआ है, मुझे असंगत प्रतीत होता है। जहाँ तक आज के वयस्कों का सम्बन्ध है, उनमें से अनेक ऐसे हो सकते हैं, जिनका किसी संगठित धर्म से संबंध न होने के कारण कोई सुरक्षित मानदंड न हो। लेकिन, जिन लोगों से मेरा साबका पड़ता रहा है, उनमें मैंने आत्मपतन के कोई चिन्ह नहीं देखे हैं। वे आज कई काम ऐसे करते हैं, जिन्हें उनके पुरखा अनुचित मानते। पर ऐसी प्रायः

एक भी बात नहीं, जिसे उनके पुरखा निम्न अथवा जघन्य करते। मेरी राय में सबसे महत्त्वपूर्ण बात तो यह है कि पिछली अर्द्धशताब्दी में लोगों के दृष्टिकोण में बड़ा परिवर्तन हुआ है। 'मेरा पड़ोसी कौन है ?' का व्यापक से व्यापकतर उत्तर प्रस्तुत किया जाने लगा है।

आज भी ऐसे लोगों का अभाव नहीं, जो अपने को श्रेष्ठ और जनसाधारण को महत्त्वहीन मानते हैं। लेकिन आज उनके इस दंभ का उतना महत्त्व नहीं जितना उस समय था, जब समाज का अपना विशिष्ट स्थान था।

जो पुरानी अट्टालिकाओं में स्थित नौकरों के घर को अथवा १९३० के भड़कीले भवनों के मृत्पावास को देखते हैं, उन्हें उसकी संकुचितता तथा दुरवस्था पर दुख होता है। वे अपने मन में सोचते हैं कि क्या भद्र नर-नारी अपने पास ही रहनेवाले मानव प्राणियों की मानवीय आवश्यकताओं के प्रति इतने उदासीन हो सकते थे।

राष्ट्रीय आय, इस आय के वितरण, राष्ट्रीय अर्थतंत्र की बात तथा अमेरिका भर में सामाजिक सर्वेक्षण में बढ़ती हुई दिलचस्पी इसी अर्द्धशताब्दी की उपज हैं। शिक्षा के समान अवसर के सिद्धांत को आज जितनी मान्यता मिल रही है, उतनी कभी नहीं मिली। पिछले अध्यायों में मैंने यह दिखाने की कोशिश की है कि हाल के वर्षों में सर्वाधिक उपेक्षित जन समुदाय, उदाहरणार्थ, नीग्रो के प्रति लोगों के दृष्टिकोण में स्पष्ट परिवर्तन हुआ है। बड़े-बड़े व्यवसायों के मैनेजर जनता के प्रति अपने गुरु उत्तरदायित्व को अनुभव करने लगे हैं। अच्छे कामों, चर्च के कामों, अस्पताल के लिए स्वैच्छिक श्रम, बालचर संस्था और रेडक्रास सोसाइटी आदि के कामों में पुरुष और स्त्री आज जितना समय देते हैं, उसका सामूहिक तौर पर हिसाब भी नहीं लगाया जा सकता। (मुझे बताया गया है कि कहीं-कहीं तो चर्च में शामिल होने वाले लोगों की संख्या से चर्च के लिए धन-संग्रह करने वालों की संख्या अधिक है। संक्षेप में यह कि जनता के प्रति हमारी जिम्मेदारी की भावना पहले की अपेक्षा आज अधिक व्यापक हो गयी है।)

इन परिवर्तनों का थोड़ा बहुत विरोध स्वाभाविक है। यही कारण है कि जहाँ तहाँ यहूदी तथा नीग्रो विरोधी उग्र भावना देखने को मिली है।

लोकतंत्री सिद्धांत मानव की सहिष्णुता और समझदारी पर बड़ा दबाव

डाल देता है। यही कारण है कि अनेक उपगरीब समाजों में, जो पहले अपनी समानता पर कार्य करते थे, मगर अब महसूस करते हैं कि वे अकेले नहीं रह सकते, यहूदी-विरोधी चेतना एवं सक्रिय पवित्रता पाते हैं। इसी प्रकार जिस औद्योगिक नगरों में पहले नीग्रो की संख्या कम थी, वहाँ हम नीग्रो विरोधी लहर देखते हैं।

इन कुछ प्रतिकूल बातों के बावजूद मेरा विश्वास है और जैसा कि डा० फ्रैंक टेनेनबाम ने कहा है, अमेरिका में आज "समानता अध्यात्मिक समानता" को विशेष मान्यता दी जा रही है। अपना तथा अपने पड़ोसी के हितों के एकात्मवाद की इस बढ़ती हुई भावना को धार्मिक कहना मुझे शब्दों का खेल-सा प्रतीत होता है। फिर भी इतना तो कहा ही जा सकता है कि यद्यपि एक जाति के रूप में हम प्रथम और महान आदेश का आज उतना पालन नहीं कर रहे, जितना कि पहले करते थे, फिर भी हम दूसरे आदेश का पालन तो अधिकांशतः करते ही रहे हैं।

२

अब हम एक दूसरे प्रश्न पर आते हैं, जिसका उत्तर द्विपक्षीय और अनिश्चित होना अनिवार्य है। जिस निखिल अमेरिकी स्टैंडर्ड [मानदंड] और निखिल अमेरिकी संस्कृति की चर्चा १५ वें अध्याय में की गयी है, क्या वह हमारी उत्कृष्टता के लिए खतरनाक है? क्या हमारी शिक्षा दीक्षा, हमारी संस्कृति, हमारे विचार घटिया दर्जे के हैं?

हम वास्तव में यही कर रहे हैं, ऐसा आरोप प्रायः लगाया जाता रहा है। स्वयं ही टी० एस० इलियट ने कहा है, "हम कुछ विश्वास के साथ कह सकते हैं कि हमारा यह जमाना पतन का युग है और पचास वर्ष पूर्व की अपेक्षा आज हमारा सांस्कृतिक मानदंड गिर गया है और इस पतन का प्रमाण मानव कार्यकलाप के हर क्षेत्र में विद्यमान है।" यद्यपि यह आरोप केवल अमेरिका पर नहीं है, फिर भी यहाँ इतना और कह देना चाहिए कि श्री इलियट ने इस बात का पर्याप्त प्रमाण दिया है कि अमेरिकी दृष्टिकोण से उनकी सहानुभूति नहीं है। वह "श्रेणीबद्ध समाज" को चाहते हैं, जिसमें 'निम्न वर्ग' भी

बना रहे ।"

अमेरिकी प्रवाह के आलोचकों के विचारों के ऐसे उद्धरणों का अम्बार लगाया जा सकता है, जिसमें उन्होंने कहा है कि मौलिक लेखकों, चित्रकारों, संगीतज्ञों, वास्तुकला विशारदों, दार्शनिकों तथा आध्यात्मिक दृष्टाओं को बड़ी प्रतिकूल स्थिति का सामना करना पड़ रहा है। आज 'सेक्सी रोमांस' के रचयिता ही सर्वाधिक पुरस्कृत होते हैं । सिनेमा ने रंगमंच को दबा दिया है तथा टेलिविजन सिनेमा को दबा रहा है। और टेलिविजन पर भी सर्वाधिक वाहवाही मूर्ख विदूषकों को ही मिलती है । आज कवियों के लिए बाजार रहा ही नहीं । इन आरोपों का निचोड़ इन शब्दों में रखा जा सकता है : सामूहिक उत्पादन सिद्धांत ने जहाँ हमें अच्छी मोटर कारें दीं और अच्छे कपड़े दिये हैं, वहाँ बुद्धिपूरक वस्तुओं के बाज़ार में मध्यम दर्जे का माल ही उपलब्ध है।

यह बड़ा गंभीर आरोप है । इस पर निर्णय करने से पूर्व अनेक बातों पर विचार कर लेना आवश्यक है ।

प्रथम महायुद्ध के कुछ वर्ष पूर्व तक साहित्यिक आविष्कारकों एवं सुधारकों के मन में नैराश्य की कोई तीव्र भावना न थी। इसके विपरीत, पहले की तरह ही उनकी पूछ थी। शिकागो में वाचेल लिंडसे, एडगर ली मास्टर्स, शेरवूड एंडर्सन, एरिंग लार्डनर और कार्ल सैंडबर्ग विश्वास और उत्साह के साथ नये-नये परीक्षण कर रहे थे। इधर न्यूयार्क में कविता से लेकर राजनीतिक विषयों, जैसे समाजवाद और साम्यवाद (वह रूप नहीं जो मास्को में स्थापित किया गया) पर नयी-नयी स्वच्छंद पुस्तकें लिखी जा रही थीं । अल्फ्रेड स्टिग्लिट्ज आधुनिक कला का विश्लेषण कर रहे थे, मेक्स ईस्टमन और जान रीड ने मजदूरों के लिए जेहाद छेड़ रखा था, और फलायड डेल साहित्य की मुक्ति का गीत गा रहे थे । उन सब का विश्वास था कि यथा समय ये सारी अरण्य धाराएँ विजयी होकर रहेंगी ।

परन्तु प्रथम महायुद्ध के आरम्भ के साथ उनकी भ्रांति दूर हो गई और उनका मूड बदलने लगा ।

अब उपन्यासकारों के तत्कालीन अमेरिकी जीवन की व्यर्थता और निष्ठुर-

ताओं पर ही अपना ध्यान केन्द्रित कर दिया। उनका निष्कर्ष प्रायः नैराश्य पर दम तोड़ता होता। इस काल में साहित्य निर्माण की जो पद्धति निर्धारित हो चली, वह १६१० की साहित्यिक परम्परा से भिन्न थी।

१६३०-३६ में इस परम्परा को एक नयी भावुक शक्ति से मोर्चा लेना पड़ा। देश की आर्थिक व्यवस्था विशृंखलित हो गयी थी। बहुत से लोगों को ऐसा प्रतीत होने लगा था कि क्रांति होकर ही रहेगी। और बहुत से लेखकों ने पूँजीवाद की निष्ठुरता के विरुद्ध आवाज़ उठाने और मज़दूरों के हितों की हिमायत करने की अपने से प्रेरणा-सी अनुभव की। उन्होंने नैराश्य से अपना पल्ला छुड़ाकर संघर्ष का दामन पकड़ लिया। फलस्वरूप सर्वहारा वर्ग को लेकर वे उपन्यास पर उपन्यास निकालने लगे। उनमें से कई लेखक ऐसे भी थे, जिनकी मज़दूर-बस्तियों की वास्तविक स्थिति संबंधी जानकारी बड़ी सीमित थी।

द्वितीय महायुद्ध काल में यह दृष्टिकोण बदल गया और इस बात का विश्लेषण शुरू हुआ कि युद्धरत व्यक्ति कितना क्रूर हो सकता है। लेखकों के इस विश्वास ने कि, उनकी कृति की उत्कृष्टता मुट्ठी भर लोग ही पहचान सकते हैं, निराशावाद का रूप अपना लिया। भावी संस्कृति के प्रति नैराश्य ही नैराश्य दृष्टिगोचर होने लगा।

१६४८ में इस स्थिति की टीका करते हुए डब्ल्यू. एच. आडेन ने लिखा : "जीवित अमेरिकी उपन्यासकारों को यह सुन कर परेशानी होगी कि........ दो महायुद्धों के बीच उन्होंने केवल अर्थपूर्ण साहित्य की रचना की है।........ यूरोप से आने पर मेरी प्रथम और प्रबलतम धारणा जो बनी वह यह थी कि इस काल में जैसा निराशापूर्ण साहित्य रचा गया, वैसा किसी काल में नहीं लिखा गया। मेरे लिए यह बड़े आश्चर्य की बात है कि सर्वाधिक आशावादी, समूह के रूप में रहने तथा पृथ्वीतल पर अधिकतम स्वतन्त्र राष्ट्र के रूप में विख्यात अमेरिका को उसके ही सर्वाधिक भावुक सदस्य निस्सहाय और पीड़ित, संदिग्ध चरित्रवाले तथा विस्थापित लोगों के देश के रूप में देखते हैं।....ऐसे उपन्यास प्रकाशित होते रहे हैं, जिनके नायक को न तो कोई सम्मान प्राप्त है और न जिनका कोई इतिहास है। ऐसे नायक जो बड़ी आसानी से लालच के वशीभूत हो जाते हैं, ऐसे नायक जो सांसारिक अर्थों में सफल होने पर भी समृद्धि के निष्क्रिय

प्राप्तकर्ता ही दिखायी पड़ते हैं, ऐसे नायक जिनका एकमात्र नैतिक गुण वेदना और संकट का निस्पृह हो कर सामना करना है।"

क्या यह कहा जा सकता है कि ये उपन्यासकार जिस परम्परा पर चल रहे हैं, वह पूर्व निर्धारित है ? हाल के वर्षों में उपन्यासों की बिक्री घटने का एकमात्र कारण यह है कि "लेखकों ने पाठकों से पूर्व अपनी पराजय स्वीकार कर ली है" और, या यह भी हो सकता है कि पाठक लेखकों से आगे निकल गये हैं। अनेक लेखकों की यह धारणा बनी हुई है कि कठिन लिखना ही अच्छा लिखना है। अपनी इस धारणा के कारण वे साधारण पाठकों तक अपने विचार पहुँचाने की कला की उपेक्षा करने लगे हैं। लेखकवर्ग में इस प्रकार की पराजय-भावना घर कर गई है और अमेरिकी संस्कृति के संबंध में उनकी असुखद धारणा का कारण भी यही है। इसलिए अंशतः उनके इस विचार को स्वीकार किया जा सकता है।

उनके इस परिताप पर दृष्टि डालने के बाद अब हम आगे बढ़ें।

२

मेरे जैसा व्यक्ति, जो स्वयं एक ऐसी पत्रिका में काम कर चुका है, जो अपने लेखकों को अब उतना पैसा नहीं दे सकती, जितना आज से एक दशाब्दी पूर्व देती रही थी (क्योंकि कुछ मदों पर अब बहुत खर्च करना पड़ता है), साहित्यिकों की वर्तमान स्थिति पर संतोष प्रकट नहीं कर सकता। इसी प्रकार साहित्यिक संस्थाओं की मौजूदा हालत से वह व्यक्ति संतुष्ट नहीं हो सकता जो अपनी समझ से विशिष्ट पत्रकारिता के लिए संघर्ष करता रहा है। संघर्ष इसलिए कि ऐसी-ऐसी नयी पत्रिकाएँ प्रकाशित होती जा रही हैं, जिनकी बिक्री-संख्या लाखों में है और विज्ञापनदाता उनके ही माध्यम से लाखों पाठकों तक पहुँचना चाहता है। इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि इन व्यापक बिक्रीवाली पत्रिकाओं और अपने कर्मचारियों द्वारा निर्मित सामग्रियों को लेकर निकालने वाली पत्रिकाओं ने कम लोकप्रिय स्वतन्त्र लेखकों को सुखमय जीवन व्यतीत करने से वंचित कर दिया है। फिर, यह बात भी है कि ऐसे लेखकों की स्थिति आर्थिक दृष्टि से कभी अच्छी नहीं रही है। अब एक प्रश्न और आता है कि

आखिर अति उच्च स्तर वाली पत्रिकाओं की खपत अधिक क्यों नहीं होती ? इसका एक कारण यह है कि अब उत्कृष्ट सामग्रियों पर उनका ही एकाधिकार नहीं रह गया है । पिछली कुछ दशाब्दियों से बड़ी विक्रीवाली पत्रिकाओं में भी अति उत्कृष्ट सामग्री प्रकाशित होती रही हैं । तिस पर ऐसे योग्य लेखकों की संख्या अधिक है, जो अपने सिद्धांत का गला घोंटे बिना ही लोकप्रिय पत्रों में लिखकर अच्छा धनोपार्जन कर रहे हैं । स्थिति मिलीजुली है ।

पुस्तकों के बारे में भी प्रायः यही बात कही जा सकती है । स्टैंडर्ड मूल्य पर बिकनेवाली पुस्तकों का बाजार पहले की अपेक्षा कुछ बढ़ा है । परन्तु यह भी सत्य है कि बढ़ी हुई मजदूरी के खर्च को पूरा करने के लिए पुस्तकों की मूल्य-वृद्धि के कारण बहुत से ग्राहक ऐसी किताबें खरीद नहीं पाते । सभी लेखकों की आय का एक हिस्सा थोड़े से अति सफल लेखक ले मारते हैं और जिन लेखकों की पुस्तक की बिक्री केवल कुछ हजार की होने की संभावना रहती है, उसके स्वीकार किये जाने की आशा बहुत कम होती है, (इनमें प्रायः सभी कवि शामिल हैं) । फिर भी, स्थिति उतनी अंधकारपूर्ण नहीं है, जितनी कि दिखाई जाती है ।

बहुत से ऐसे प्रकाशन गृह हैं, जो हल्के काग़ज़ की जिल्दवाली किताबें सस्ते मूल्य (२५ या ३५ सेंट अथवा डेढ़-दो रु०) पर बेचते हैं । इनकी बिक्री संख्या अत्यधिक है ।

इनमें कोई दो-तिहाई निश्चित रूप से केवल उपन्यास अथवा पहेलियाँ थे । इनमें कुछ तो ऐसी रचनाएँ थीं, जिन्हें किसी भी दृष्टि से स्टैन्डर्ड नहीं माना जा सकता । यह बात जरूर है कि इन सस्ते संस्करणों से लेखकों को ज्यादा लाभ नहीं होता । ऐसी १० लाख प्रतियों की बिक्री से उन्हें जो आमदनी होती है, उससे अधिक आमदनी उसकी २० हजार स्टैंडर्ड प्रतियों से ही हो जाती है । फिर भी यह एक बड़ी दिलचस्प चीज है । पुस्तकें अच्छी हों और उनका मूल्य जनसाधारण के बूते की बात हो, तो अमेरिका में उनके लिए अब भी अच्छा बाज़ार है ।

अब हम कला के बारे में विचार करेंगे । आज के चित्रकार के सामने दो बड़ी कठिनाइयाँ हैं । प्रथम कठिनाई यह है कि वह अधिक मूल्य पर ही अपनी कलाकृति को बेच सकता है, क्योंकि वह अपनी मौलिक कृति को ही बेचता है,

जिसे कोई शौकीन पाठक अथवा संस्थाएँ ही खरीद सकते हैं और ऐसे मालदार ग्राहक इन दिनों बड़ी मुश्किल से मिलते हैं। दूसरी कठिनाई यह है कि योग्य नये चित्रकार अधिकतर अव्यावहारिक कला बिन्दु को लेकर चलते हैं। इस कारण ग्राहक थोड़ा घबराता है। इसके बावजूद कला के प्रति जनता की अभी जो दिलचस्पी है, वह काफ़ी चमत्कारपूर्ण है। फोब्स वॉट्सन के अनुसार १९४०-४९ की अवधि में जितने कलात्मक चित्र बिके, उतने अमेरिका के इतिहास में कभी नहीं बिके। १९४८ में अमेरिका में कोई एक सौ कला-प्रदर्शनियाँ आयोजित हुईं, जिन्हें कोई ५ करोड़ लोगों ने देखा। स्थानीय संग्रहालयों की संख्या में जो वृद्धि हुई है, उसे भी ध्यान में रखना होगा। विभिन्न विद्यालयों और कालेजों में भी चित्रकारी को प्रोत्साहन दिया जाने लगा है। लीमन ब्राइसन के अनुसार आज अमेरिका में अनुमानतः छोटे-बड़े कोई ३ लाख चित्रकार हैं। वाणिज्य विभाग के अनुसार १९४९ में ४ करोड़ डालर का चित्रकारी का सामान बिका, जबकि १९३९ में केवल ४० लाख डालर का बिका था।

अब संगीत। १९०० में देश में बहुत थोड़े से समस्वर आर्केस्ट्रा थे। १९५१ तक ६५९ आर्केस्ट्रा वादक दल बन गये। इनमें ३२ दल ऐसे थे, जो पेशा के रूप में उसे अपनाये हुए थे। ३४३ आर्केस्ट्रा सामुदायिक और २३१ कालेज-आर्केस्ट्रा थे। इसके अतिरिक्त विविध प्रकार के नौसिखुओं के दल हैं। अमेरिका के कोई १५ सौ शहरों और कस्बों में वार्षिक संगीत समारोह होते हैं। ग्रीष्म कालीन संगीत समारोह में आज जितने लोग शामिल होते हैं, उतने की आज से ३० वर्ष पूर्व कल्पना भी नहीं की जा सकती।

ऐसी असाधारण स्थिति उत्पन्न करने का श्रेय रेडियो को है। प्रायः सभी महत्त्वपूर्ण संगीत समारोहों का आयोजन रेडियो द्वारा हुआ। १९२६ में प्रथम बार समस्वर वाद्यवृन्द रेडियो से प्रसारित किया गया। १९१९ मे प्रथम सुनियोजित आर्केस्ट्रा प्रसारित किया गया। १९३१ में मेट्रोपोलिटन ओपेरा रेडियो से सुनाया गया। १९३७ में नेशनल ब्राडकास्टिंग कारपोरेशन ने अपने आर्केस्ट्रा का निर्देशक टास्कमिनी को नियुक्त किया। अनुमान लगाया गया है कि १९२८ तक वाल्टर डेमरोश द्वारा संचालित 'म्यूज़िक एप्रिसियेशन आवर' को कोई ७० हज़ार स्कूलों के ७० लाख बच्चे प्रति सप्ताह सुना करते थे। १९४०-४९ के उत्तरार्द्ध

में टेलिविज़न के आविष्कार ने रेडियो के शास्त्रीय संगीत कार्यक्रम को ढीला कर दिया। परन्तु इससे बहुत पहले हो संगीत सुनाने का एक और तरीका प्रमुखता प्राप्त करने लगा था।

१६२०-२६ में रेडियो के उत्थान के साथ फोनोग्राफ व्यवसाय का पतन आरम्भ हो गया था। परन्तु हाल में यह व्यवसाय फिर पनपने लगा है। धीरे-धीरे लोगों को संगीत का ऐसा चस्का लगा कि वे अपने घर में उसका आनन्द लेने के लिए प्रसिद्ध गीतों और वाद्य संगीत के रेकार्ड खरीदने लगे। बिल बोर्ड पत्रिका के अनुसार १६५१ में अमेरिका में १६ करोड़ रेकार्ड बिके। जो जनसंख्या के अनुपात से प्रति अमेरिकन पर एक रेकार्ड से अधिक पड़ता है। इनमें १० से १५ प्रतिशत रेकार्ड शास्त्रीय संगीत के थे।

निश्चय ही, अमेरिकी कला क्षेत्र का यह चित्र कुछ अस्त व्यस्त लगता है। संगीत में जनता की रुचि तो बढ़ ही रही है, संगीत नृत्य भी बड़ा लोकप्रिय होता जा रहा है। ब्राडवे जैसे व्यावसायिक रंगमंच के अतिरिक्त स्कूलों और कालेजों के अपने रंगमंच हैं। करोड़ों लोगों का प्रिय सिनेमा टेलिविजन के आगे दबता-सा जा रहा है। स्थापत्य कला ने नया मोड़ लिया है। अब यूरोपियन पद्धति की नकल नहीं होती। नित्य नये अपूर्व औद्योगिक भवन और कभी-कभी, परीक्षणात्मक और पर कल्पनातीत निवास-गृह बनते आ रहे हैं।

सम्पूर्ण स्थिति का तथ्य संभवतः यह है : यह राष्ट्र एक अपूर्व परीक्षण कर रहा है। इसने असंख्य लोगों को समृद्ध बनाया है। जो कोई भी इनकी समझ में आने योग्य तथा इन्हें आनन्द प्रदान करने लायक सामान और मनोरंजन की सामग्री प्रस्तुत करेगा, उसके लिए व्यापक बाजार तैयार है। दूसरे देशों के साहित्य तथा कला-प्रेमियों से इनकी तुलना करना उचित नहीं। हम इसका विश्लेषण इन शब्दों में कर सकते हैं : **यह एक नयी चीज है, इस तरह की कोई बात पहले कभी नहीं हुई।**

जो अमेरिकन को 'कार्थेज' नहीं, बल्कि 'यूनान' बनते देखना चाहते हैं, उन्हें लोगों के मनोरंजन तथा सामान की वर्तमान आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ-साथ उन अन्य सांस्कृतिक साधनों का भी विकास करना होगा, जो अधिक परिष्कृत रुचि को संतुष्ट कर सकेंगे। यह समस्या न केवल कला की है,

बल्कि आर्थिक भी। इसका समाधान होगा या नहीं, यह अभी नहीं कहा जा सकता। लेकिन, आज के इस युग में, जब कि उचित प्रोत्साहन के अभाव के बावजूद अधिकांश उत्कृष्ट साहित्यिक रचनाएँ अमेरिका में हो रही हैं, जब कि शिक्षा के क्षेत्र में परिस्थितियों ने अमेरिका को अग्रणी बना दिया है, और, चाहे जो कारण भी हो, जब कि विश्व की सांस्कृतिक गति की ज़िम्मेदारी अमेरिका पर आ पड़ी है, हमें अपने इन संगीत प्रेमियों की ओर देखना होगा, जिन्हें हमने ही तैयार किया है; क्योंकि यदि संदिग्ध आर्थिक परिस्थितियों में भी अमेरिका ने कला के इस क्षेत्र में इतनी चमत्कारपूर्ण प्रगति की है तो अन्य जगहों में भी ऐसा जादू हो सकता है। और निखिल अमेरिकी संस्कृति अपने को उत्कृष्टता की दुश्मन प्रमाणित न कर, उसका उपयुक्त क्षेत्र साबित होगी।

४

एक प्रश्न और है।

पिछले दिन मैं अपने पुराने कागजात देख रहा था कि मेरी दृष्टि मेरे एक पुराने भाषण पर पड़ी। इसका शीर्षक था 'आशंका के क्षण में।' इसमें मैंने कहा था कि बहुत से लोग विपत्ति और प्रलय की कल्पना से आशंकित हो रहे हैं। उस समय मैंने जो कुछ कहा था, वह बहुत अंश में इस शताब्दी के मध्य काल के लिए भी उपयुक्त था। परन्तु उस पांडुलिपि पर तिथि जून, १९३८ की पड़ी थी — न केवल अणु बम और शीत युद्ध के पहले की, बल्कि द्वितीय महायुद्ध के आरंभ से भी पूर्व की तिथि।

उससे भी बहुत पहले से समय-समय पर अमेरिकनों के मस्तिष्क में तनाव तथा नैराश्य की भावनाएँ घनीभूत होती रही हैं। वह महसूस करते हैं कि शक्तिशाली और कल्पनातीत तत्व लोगों को विपत्ति की ओर घसीट ले सकते हैं। और इससे बचाव के लिए कुछ किया भी नहीं जा सकता। इस मनःदशा का एक कारण यह हो सकता है कि ग्राहम वालस के शब्दों में, लोग इस 'महान समाज' से अपना सामंजस्य स्थापित करने में कठिनाई अनुभव करते हैं। समाज पेचीदा बन गया है — इतना पेचीदा कि न्यूयार्क शेयर बाजार की किसी घटना का जितना असर किसी सिराक्युज दवा विक्रेता पर पड़ सकता है, उतना ही

कंसास के किसान पर भी। पिछली घोर मंदी भी अपनी छाप छोड़ गयी है। उसने लाखों लोगों को तबाह कर दिया था। लोग सँभल भी न पाये थे कि हिटलर ने द्वितीय महायुद्ध का शंख बजा दिया। इसके कारण नवजवानों को विनाशकारी युद्ध में कूदना पड़ा। वे ऐसे देशों में गये और लड़े जिनकी कभी कल्पना भी न की होगी। उसके बाद एक दूसरा संकट — सोवियट रूस का खतरा — सामने आने लगा। लोगों के मन में यह भय घर करने लगा कि युद्ध कहीं फिर शुरू न हो जाये। तिस पर अणुअ्रम की विभीषिका। और पिछले वर्षों में सरकार ने जो संकटकालीन नियम पास किये, वह अनेक युवक अमेरिकनों को विचार स्वातन्त्र्य के प्रतिकूल लग रहे थे।

लोगों की दशा उस विमान के यात्री की तरह है, जो घनघोर कुहासे को छेदता हुआ भारी गर्जन के साथ आगे बढ़ता रहा हो। यह मानसिक स्थिति प्रायः सबकी है। जो कोई भी यह कहता है कि पिछले ५० वर्ष में हमने अमेरिका को समृद्ध किया है, उसके सामने प्रायः यही प्रश्न रखा जाता है: "आप ऐसा कैसे कह सकते हैं? हम तो वस्तुतः निश्चितता के समय को छोड़ कर शाश्वत संकट की घड़ी में आ पहुँचे हैं।" हमारे जीवन पर कल्पनातीत आशंकाओं की छाया पड़ गयी है।

१९३८ के अपने उस भाषण में मैंने कहा था कि हम आतंक और तज्जनित विवेकरहित धारणाओं के युग में रह रहे हैं। मैंने यह भी कहा था कि ऐसे समय में हम प्रायः ऐसे लोगों को खोजते हैं, जिनको इसके लिए जिम्मेदार ठहराया जा सके। और जब से सोवियट रूस के आक्रमणात्मक इरादे स्पष्ट हुए हैं, तब से अमेरिका में ऐसा होने भी लगा है। हम उन व्यक्तियों की तलाश में हैं, जिनके कारण आज यह संकट उपस्थित हुआ और जिनका पता लग जाने पर एवं दण्डित होने पर हम शायद अपने को पुनः सुरक्षित अनुभव कर सकते हैं। यह तलाश इतनी आतंकपूर्ण, विवेकहीन और इतने लम्बे समय से होती आ रही है तथा इसके कारण संदेह की भावना और आशंकाएँ इतनी व्यापक हो गयी हैं कि अमेरिकनों के सामने आज एक बड़ा प्रश्न उपस्थित हो गया है। वह यह कि क्या ऐसी परिस्थितियों में हम अपनी चिरपोषित स्वतन्त्रता को अक्षुण्ण बनाये रख सकते हैं?

यह प्रश्न केवल आज का नहीं है। क्योंकि हम सब जानते हैं कि संगठित कम्युनिज्म से हमारा यह मुकाबला एक दो या तीन दशाब्दी तक चल सकता है, अथवा हो सकता है इसकी समाप्ति युद्ध में हो। कुछ लोगों का कहना है कि अधिकांश अमेरिकनों को जीवन पर्यंत इस संघर्ष को देखना पड़ेगा। इसका अर्थ होगा तनाव, दुविधा और अनिश्चितता विद्यमान रहना। और इस तनाव की विवेकहीन प्रतिक्रिया होने का खतरा भी मौजूद है।

दोषों की तलाश ने जो विशिष्ट रूप धारण कर लिया है, उसका प्रधान कारण अमेरिका में कम्युनिस्ट पार्टी का विलक्षण इतिहास है। मंदी के ज़माने में लोग कम्युनिस्ट पार्टी को तत्कालीन समस्या के आमूल समाधान के लिए उद्यत एक संगठन मानते थे। उन्हें इस बात की चिन्ता न थी कि इसका सम्बन्ध रूस से है, क्योंकि उस समय तक वे यही समझते थे कि रूस ने मंदी का निदान ढूँढ़ लिया है। इसके अतिरिक्त १९३०-३९ के उत्तरार्द्ध में रूस हिटलर के नाज़ीवाद के विरुद्ध अन्य लोकतन्त्री देशों का साथ दे रहा था। अमेरिकी कम्युनिस्ट पार्टी के अनुयायियों की संख्या कम न थी और तिस पर उनके अधिकांश सदस्य बुद्धिजीवी थे और जो सरकारी महत्त्वपूर्ण पदों पर काम करने के लिए प्रोत्साहित किये जा सकते थे। वे मज़दूर नेता के रूप में यूनियनों पर अपना नियंत्रण स्थापित कर सकते थे।

जैसा कि ११४० में अपनी पुस्तक "सिस यस्टर्डे" में मैंने लिखा था, "सचाई यह है कि तब बहुत से युवक विद्रोहियों ने इसलिए कम्युनिज्म को अपनाया कि इसमें उन्होंने अपने निस्तार की मंजिल देखी थी। पहले तो लोगों ने यह देखा कि तत्कालीन व्यवस्था ठीक-ठीक नहीं चल रही, तब उन्होंने उसमें सुधार के प्रश्न पर विचार किया और इस निश्चय पर पहुँचे कि कुछ इधर-उधर की कार्रवाई कर देने से अमेरिका का निस्तार संभव नहीं और फिर उनमें यह विचार उत्पन्न हुआ कि क्रांति के बिना इस उद्देश्य की सिद्धि नहीं हो सकती। उनके इस रास्ते के अन्तिम छोर पर बैठा कार्ल मार्क्स उनकी प्रतीक्षा कर रहा था। फिर, अमेरिकी जीवन की सारी त्रुटियों को दूर करने का आश्वासन लिये कम्युनिस्ट पार्टी थी। इससे बढ़ कर सहज रास्ता क्या हो सकता था भला ? हर अवांछित चीज को पूँजीवाद के मत्थे मढ़ना कितना आसान हो गया !!

क्योंकि कम्युनिस्ट पार्टी षड्यन्त्री थी और इसकी गतिविधियों को गुप्त रखना इसके सदस्यों के लिए अनिवार्य था, इसलिए सरकारी विभागों और संस्थाओं इनको निकालना आसान न था। चूँकि सरकारी विभागों, संस्थाओं और मज़-दूर यूनियनों में कुछ अत्यन्त सज्जन और देशभक्त लोग काम कर चुके थे, इस-लिए कुछ ऐसे नागरिकों पर भी संदेह होना अनिवार्य था। चूँकि कम्युनिस्ट लोग अपने सम्बन्धों के बारे में अक्सर झूठ बोल दिया करते हैं, इसलिए यह संदेह होना स्वाभाविक है कि ये राजभक्त नागरिक भी अपनी राजभक्ति की पुष्टि करते हुए असत्य भाषण का सहारा ले रहे हों। फलस्वरूप अनेक निर्दोष नागरिकों पर भी लाञ्छन लगाये गये, जिसे वे शायद जीवन पर्यंत न भूलेंगे। कम्युनिस्ट रहस्य के साथ जो घटनाक्रम शुरू हुआ, वह वास्तव में बहुत आगे चला गया।

इतना ही नहीं। अनेक कांग्रेस समितियों की पूछताछ तथा सरकारी नौकरों की राजभक्ति की जाँच ; एल्जर हिस्स् का नाटकीय प्रकरण, सिनेटर मेकार्थी की बौछार तथा अनेक स्कूलों और कालेजों के अध्यापकों पर लगाये गये आरोपों ने एक विषम परिस्थिति पैदा कर दी है। एक प्रकार की मानसिक अशांति फैल गयी है।

दोषी की इस अंध तलाश के पीछे तनावपूर्ण स्थिति जन्य नैराश्य का कितना बड़ा हाथ है, यह १९५१ में जनरल मेकार्थर की बर्खास्तगी पर उत्पन्न हँगामे से स्पष्ट हो जाता है। प्रतिनिधि सभा अथवा कांग्रेस की अन्य समितियों में दिये गये भाषण, आरोप प्रत्यारोप का उतना महत्त्व नहीं है, जितना कि मेकार्थर विरोधी समाचार पत्रों, रेडियो, आलोचकों आदि के पास भेजे गये असंख्य ज़हरीले पत्रों का है। ऐसा लगता था, मानो विष का कोई झरना फूट पड़ा हो। तभी लोगों ने अनुभव किया कि अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति तथा विशेष कर कोरिया युद्ध ने कितने व्यक्तियों को उनकी सामर्थ्य के बाहर कर दिया है। इतने पर भी वह मूल प्रश्न बना ही हुआ है : जिस राष्ट्र को अनिश्चितकाल तक अपने अस्पष्ट अन्त-र्राष्ट्रीय उत्तरदायित्व निभाने के साथ-साथ अपनी सैनिक शक्ति को सुदृढ़ बनाये रखना है, वहाँ आखिर पारस्परिक विश्वास और प्रेरणापूर्ण चिंतन तथा विचार स्वातंत्र्य को कैसे बनाये रखा जाये ?

हमारा राष्ट्र स्वभाव से आशावादी है परन्तु हम पर तनाव का भार आज जितना है, उतना कभी न पड़ा था। हमारा धैर्य, हमारा मिजाज और हमारा

साहस कठिन परीक्षा से गुजर रहा है।

१८
हमारा अपना रास्ता

"दिस वीक" नामक पत्रिका (रविवारीय समाचार पत्रों के करोड़ से अधिक पाठकों तक यह परिशिष्टांक के रूप में पहुँचती है) के ४ मार्च, १९५१ के अंक में उसके सम्पादक विलियम आई. निकोल्स ने "पूँजीवाद के लिए एक नया नाम चाहिए" शीर्षक से एक लेख लिखा था (बाद में यह रीडर्स डाइजेस्ट में भी छपा।) उसमें उन्होंने बताया था कि अमेरिका की आज की आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक पद्धति को 'पूंजीवादी' कहना युक्तिसंगत नहीं ; क्योंकि अनेक लोग, खासकर विदेशी लोग, पूँजीवाद से जो अर्थ लेते हैं, वह १९वीं शताब्दी की हमारी पुरानी आर्थिक व्यवस्था के लिए ही ज्यादा उपयुक्त है। श्री निकोल्स ने यह प्रश्न रखा था, "क्या हम अपनी मौजूदा प्रणाली को उस अपूर्ण पद्धति की संज्ञा दें, जो उत्तरोत्तर विकसित होती जा रही है। तथा जिसमें और सुधार होना सम्भव है, जिसमें लोग एक साथ काम करते, एक साथ निर्माण करते, उत्पादन दिन-दिन बढ़ाते और अपने परिश्रम का फल मिलजुल कर बाँटते हुए एक साथ चल रहे हैं।" उन्होंने बताया था कि इस प्रश्न के उत्तर में कई सुझाव सुनने में आये, जैसे, 'नया पूँजीवाद', 'लोकतांत्रिक पूँजीवाद', 'आर्थिक लोकतंत्र', 'औद्योगिक लोकतंत्र', 'वितरण', 'पारस्परिकतावाद' और 'उत्पादनवाद' लेकिन फिर भी वह सोचते रहे कि क्या इससे भी अधिक उपयुक्त कोई शब्द नहीं मिल सकता ? उन्होंने पाठकों से पत्रिका में नत्थी छपे कूपनों पर अपने सुझाव भेजने का अनुरोध किया।

इस संबंध में १५ हजार सुझाव पत्र उनके पास आये। यह इस बात का भी प्रमाण है कि अमेरिका में आज यह भावना व्यापक है कि हमारे पास भी कुछ है,

जो अच्छे ढंग से कार्य करता जा रहा है। यह सभी प्राचीन प्रणालियों से भिन्न है।

और, मेरे ख्याल में लोगों की इस भावना का एक कारण यह है कि हम अमेरिकावासी किसी प्रणाली का निर्माण नहीं कर रहे, बल्कि पुरानी परम्परा को ही अधिक उपयोगी बनाने के लिए उसमें आवश्यकतानुसार हल्के-हल्के छिटपुट संशोधन कर रहे हैं। यही दिखाने की कोशिश मैंने 'अमेरिकी अन्तःकरण का विद्रोह' शीर्षक अध्याय में भी की है।

इस पुस्तक के विभिन्न अध्यायों में मैंने यह दिखाने का प्रयास किया है कि यह संशोधन-कार्य किस तरह सम्पादित होता आया है। १९वीं शताब्दी में अमेरिका में संघीय, राज्य एवं स्थानीय सरकारों का एक समूह कार्य कर रहा था। संघीय सरकार का क्षेत्र एवं कर्तव्य सीमित थे। उसमें व्यवसाय को मनमाने ढंग पर चलने की छूट थी। इन सरकारों ने व्यवसायियों को कारपोरेशन बनाने की अनुमति दे रखी थी और उन कारपोरेशनों के अधिकार और सुविधायें निर्धारित कर दिये थे। इन अधिकारों और सुविधाओं ने स्फूर्ति एवं प्रोत्साहनपूर्ण व्यवसाय के विकास में आश्चर्यजनक कार्य किया। यही नहीं, इसके कुछ अप्रत्याशित परिणाम भी हुए। इसके फलस्वरूप मजदूर जिनकी मजदूरी उसी लौह-कानून के आधार पर निर्धारित होती थी, अपने मालिकों की इच्छा पर चलने को विवश हो गये। उद्योग के फल का अधिकांश हिस्सा मालिक की जेब में जाने लगा। धन-प्रवाह के नियंत्रकों को व्यापक अधिकार मिल गये। इसके बिना व्यवसाय-संचालकों का त्राण न था। २०वीं शताब्दी के आरंभ तक तो ऐसा लगने लगा था कि अमेरिका पर चन्द करोड़पतियों का अधिकार हो जायेगा, उनकी आमदनी बढ़ती जायेगी और शेष लोगों की स्थिति दिन-दिन गिरती जायेगी ; अमेरिका वह देश बन जायेगा, जहाँ मुट्ठी भर पूँजीपतियों का न केवल देश के अर्थतंत्र पर एकाधिकार स्थापित हो जायेगा, बल्कि राजनीतिक प्रणाली पर भी उनका नियंत्रण होगा।

इसने देश की लोकतांत्रिक भावना को चुनौती दी, न्याय की राष्ट्रीय भावना जाग्रत हो गयी। इसलिए हम परिवर्तन की ओर अग्रसर हुए। यह रास्ता विद्रोह का नहीं था, बल्कि देश की पद्धति में परीक्षणात्मक संशोधन का रास्ता था। पिछली बड़ी मंदी के समय हमारा यह कार्यक्रम बुरी तरह विशृङ्खलित हो गया

और तब हमारे संशोधन और पुनर्निर्माण कार्य में किंचित कड़ाई बरती गयी ; कोई-कोई संशोधन तो मूर्खतापूर्ण भी रहा, फिर भी क्रांतिकारी और परीक्षणात्मक परिवर्तन का हमारा मूलभूत सिद्धांत बना रहा। इसके कुछ वर्ष उपरान्त भी यह प्रायः अनिश्चित था कि बिना अच्छी तरह ठोक-पीट किये इंजिन आगे बढ़ेगा भी या नहीं। परन्तु, जब द्वितीय महायुद्ध छिड़ा, तो हमने अनुभव किया कि वाशिंगटन के पूरा प्रोत्साहन देने पर इंजिन काफ़ी तेजी से चल पड़ा। युद्ध समाप्ति के पश्चात् भी इंजिन की धमधमाहट बनी रही। यह आश्चर्यजनक परिणाम आखिर हुआ कैसे ? संक्षेप में उत्तर यह है कि कर कानून, निम्नतम मजदूरी कानून, सरकारी सहायता और आश्वासन, विभिन्न प्रकार की नियमन व्यवस्थाओं, मजदूर यूनियनों के दबाव तथा व्यवस्थापकों के परिवर्तित दृष्टिकोण के कारण 'मजदूरी का लौह कानून' समाप्त हो गया। आय का पुनर्वितरण आपसे आप होने लगा। लेकिन इससे उद्योग बन्द न हुआ, बल्कि वह वस्तुतः आगे बढ़ गया। और गरीबों की क्रय-शक्ति बढ़ाने का रास्ता भी सामने आ गया।

मेरी समझ में नये अमेरिका की कहानी का यही सारांश है। इसका एक उपसिद्धांत भी है और वह यह कि यदि आप पहले से दलित लोगों को इस प्रकार सहायता पहुँचायें, तो वे अपने अवसर को पहचान लेंगे और देश के समझदार नागरिक बन जायेंगे।

२

अभी हमारे देश के बहुत विस्तृत और शक्तिशाली केन्द्रीय सरकार है। इसका विस्तार-क्रम जारी है। इसका कारण न केवल युद्ध और शीतयुद्ध जनित हमारी जिम्मेदारियाँ हैं, बल्कि हमारी निरंतर बढ़ती हुई पारिस्पारिक निर्भरता। इसकी एक वजह है। व्यवसाय का नियमन सरकार असंख्य तरीकों से करती है। साथ-साथ सरकार आज मानती है कि उसके दो प्रमुख उत्तरदायित्व हैं, एक तो यह कि आर्थिक संकट में पड़े लोगों को अपने पैरों पर खड़े होने में वह उनकी मदद करे और दूसरा यह कि देश का अर्थतंत्र विश्रृंखलित न होने पाये।

इसीलिए सरकार ने राष्ट्रीय अर्थतंत्र के नियंत्रण का अधिकार अपने हाथ में ले रखा है। और संकट की घड़ियों में, जैसा कि कोरिया युद्ध के समय हुआ, वह

अपने इस नियंत्रण अधिकार का विस्तार कर देती है। लेकिन वह वैयक्तिक व्यवसाय को स्वयं चलाने की चेष्टा नहीं करती (अणुशक्ति उद्योग इसका अपवाद है); क्योंकि हम यह मानते हैं कि निजी हाथों में रह कर ही व्यवसाय अधिक उत्तम ढंग से चलते हैं।

इसी प्रकार संघीय सरकार, राज्य तथा स्थानीय शासनों के अधिकार अपने हाथ में नहीं लेती, हालाँकि वह कई विशेष कार्यों के लिए उक्त शासनों को भारी आर्थिक सहायता देती रहती है। अमेरिका में सरकारी अधिकारों का व्यापक वितरण हो गया है।

यही नहीं, हमारे यहाँ अनेक स्वैच्छिक संस्थाएँ, संघ और सोसाइटियाँ हैं, जो अनेक प्रकार से सार्वजनिक हित के लिए कार्यरत हैं। न केवल विश्वविद्यालय, स्कूल, चर्च, अस्पताल, संग्रहालय, पुस्तकालय और सामाजिक संस्थाएँ हैं, बल्कि हर चीज की रक्षा एवं संवर्द्धन के लिए कोई न कोई संस्था विद्यमान है। यदि हम यूरोपियन बच्चों के लिए खाद्य पहुँचाना चाहें या अपने जंगली बत्तकों की हिफ़ाजत करना चाहें, या कारपोरेशनों को अधिक अधिकार दिलाने का आन्दोलन करें, अथवा लड़कों को बालचर बनाना चाहें, हमें एक न एक ऐसी संस्था मिल ही जायेगी, जो उस कार्य में दिलचस्पी लेती हो। फाउंडेशन (प्रतिष्ठान) हैं, आदर्शवाद और सम्पदा कर जिनकी जननी है। इसी प्रकार व्यापारिक संस्थाओं, व्यावसायिक संगठनों, सेवा संघों और सार्वजनिक निवास-गृहों की भरमार है। एक राष्ट्र के रूप में हम महान सहयोगी, आन्दोलनकारी, स्वैच्छिक सेवा संस्थाओं के सहायक, रक्षक, प्रचारक और प्रोत्साहक हैं।

इसी प्रकार, स्वैच्छिक सेवा संस्थाओं तथा व्यावसायिक अथवा सरकारी संगठनों के बीच कोई तीक्ष्ण रेखा नहीं खींची जा सकती। आज जब कि 'कम्युनिटी चेस्ट' आन्दोलन में अधिकांश चंदा कारपोरेशन से आता है, जब कि महान प्रतिष्ठान (फाउंडेशन) के साधन एक मोटरकार कम्पनी से उपलब्ध हैं, जब कि गैरसरकारी विमान सर्विसें सरकार द्वारा संरक्षित विमान मार्गों पर चलती हैं, जब कि सरकारी और निजी विश्वविद्यालय साथ-साथ चल रहे हैं, इनके बीच के रेखाओं का टेढ़ामेढ़ा और अस्पष्ट हो जाना स्वाभाविक है।

इन परिस्थितियों को देखते हुए यह कहना अनुचित न होगा कि अमेरिका की

नैतिक और बौद्धिक शक्ति का आधार बहुत अंशों में ये निजी संस्थाएँ हैं। इनका ध्यान भी सार्वजनिक हित पर उतना ही केन्द्रित है, जितना कि किसी सरकारी संगठन का हो सकता है। और कभी-कभी तो उनकी और सरकार की सेवाओं में कोई अंतर ढूंढ़ निकालना भी मुश्किल हो जाता है। साथ-साथ ये संस्थाएँ दृष्टिकोण की भिन्नता तथा वैयक्तिक योग्यता तथा रुचि के विकास के व्यापक अवसर प्रदान करती हैं। ऐसा किसी अन्य तरीके से नहीं हो सकता। अमेरिकी पद्धति विभिन्न तरीकों के समिश्रणों से बनी है। इनका निर्माण इतने भिन्न तथा विशृंखलित तरीकों से हुआ है कि इसका कोई खास नाम रखा ही नहीं जा सकता।

राष्ट्रीय अर्थतंत्र के इस पेचीदे ढाँचे में और परिवर्तन के हर प्रस्ताव पर तीव्र विवाद हो जाता है। प्रश्न उठने लगता है कि अमुक कार्रवाई से काम करने, बचत करने, पूंजी लगाने तथा नये-नये आविष्कार करने की प्रेरणा कहीं समाप्त तो न हो जायेगी? क्या इससे सरकार को निरंकुश अधिकार मिल जायेंगे? क्या अमुक व्यक्ति समुदाय अथवा उद्योग को वास्तव में सहायता की आवश्यकता है? और, क्या सरकार सहायता देने में समर्थ हैं? आदि आदि।

यहाँ हम कुछ अनिश्चितताओं पर दृष्टिपात करेंगे।

युद्धोत्तर काल में मुद्रास्फीति निरन्तर बनी रही है और हमारी आर्थिक स्थिति पर इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। हम यह नहीं जानते कि मुद्रास्फीति के बिना हमारी यह तीव्र गति बनी रहेगी या नहीं।

कोरिया युद्ध से पहले ही हमारे देश की कर-व्यवस्था अपनी उच्चतम सीमा पर पहुँच गयी थी। अधिक कर लगाने का परिणाम यह होगा कि अधिक उत्पादन करने का प्रोत्साहन क्षीण हो जायेगा और कर की चोरी को समस्या छोटी न रह कर बहुत बड़ी बन जायगी। हम नहीं जानते कि हम यह कर-भार घटा सकते हैं अथवा हमारा उत्पादन इतना बढ़ाया जा सकेगा कि स्थिति आपसे आप सुधर जाये।

यदि रूस ने अपनी नीति में इतना विश्वसनीय परिवर्तन किया कि जिसके फलस्वरूप हम अपना सैनिक व्यय घटा सकें, तो यह निश्चित नहीं कि हमारा उत्पादन इतनी तीव्र गति से चल सकेगा कि मंदी न आने पाये।

हम नहीं जानते कि विश्वयुद्ध होने पर संघीय ऋण इतना बढ़ जायेगा कि सरकार की साख में जनता का विश्वास हिल जायेगा या नहीं।

संघीय सरकार ने अनेक नये वित्तीय उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले लिये हैं। उसने वाल स्ट्रीट के भी कुछ अधिकार अपने हाथ में कर लिये हैं। हम नहीं जानते कि इसके फलस्वरूप भविष्य में कोई नये प्रकार का आतंक अथवा आर्थिक विशृंखलता निर्माण होगी या नहीं।

एक बात और है। हम निश्चित रूप से नहीं जानते कि पिछड़े हुए लोगों को सरकारी सहायता देने की नीति किस क्षण उन लोगों को परमुखापेक्षी बनाने की अनीतिपूर्ण नीति का रूप धारण कर लेगी। कुछ लोगों का कहना है कि हम यह रेखा पार कर चुके हैं; जब कि अन्य लोग ऐसा नहीं मानते।

यही कारण है कि जब कभी मौजूदा व्यवस्था में परिवर्तन का कोई प्रस्ताव रखा जाता है, गर्म और लम्बा विवाद शुरू हो जाता है।

लेकिन हमारे राजनीतिक अभियानों की उग्रता, कांग्रेस के विधेयकों पर चलने वाला कड़वा विवाद एक महत्त्वपूर्ण बात की ओर से हमारा ध्यान खींच लेते हैं। जोशीली और चमत्कारपूर्ण भाषण-शैली के प्रयोग के बावजूद शायद ही कोई अमेरिकन इस वर्त्तमान प्रणाली में आमूलचूल परिवर्तन करने की अपेक्षा रखता है। ऐसे बहुत से लोग हैं, जो संघीय अधिकार कम करना, विभिन्न क़ानूनों को समाप्त करवाना, नौकरशाही पर अंकुश रखना अथवा सहायता में कमी करना चाहेंगे। ऐसे भी लोग हैं, जो चाहते हैं कि सरकार नये काम और नये अधिकार अपने हाथ में ले; उदाहरणार्थ, मेडिकल बीमा का कार्यक्रम, तथापि बहुसंख्यक अमेरिकनों की राय यह है कि, सरकार राष्ट्रीय अर्थतंत्र के सही संचालन का अपना उत्तरदायित्व स्वीकार करे, आवश्यकता पड़ने पर उचित सहायता देने का भार भी वह वहन करे, कुछ हद तक वाणिज्य व्यवसायों का निरीक्षण और नियमन करे; लेकिन फिर भी वह अपना हस्तक्षेप सीमित रखें और उद्योग-व्यवसाय का अधिकांश प्राइवेट (गैरसरकारी) व्यवस्था के अन्तर्गत छोड़ दे। बहस मूलतः इस बात पर हुआ करती है कि सरकार किसमें कितना हस्तक्षेप करे; वैसे समझौते का क्षेत्र वस्तुतः प्रशस्त बना ही रहता है। इस सहमति में यह बात भी शामिल है कि निजी व्यवसाय को वैयक्तिक स्वामित्व के अन्तर्गत रहने दिया जाये।

क्योंकि, हमारा विश्वास है कि हमने यह साबित कर दिया है कि निजी व्यवस्था के अन्तर्गत उद्योग-व्यवसाय अधिक सफलतापूर्वक चल सकते हैं। यही नहीं,

ये निजी व्यवस्थापक सरकार की तरह ही सार्वजनिक हित का ख्याल तो रख ही सकते हैं, उनके तत्वावधान में योग्यता, मानसिक लचीलापन और साहसिकता का विकास होता रहेगा, जो सरकार नहीं कर सकती। साथ-साथ निजी व्यवस्थापकत्व में वह धांधली नहीं चल सकती, जो सरकारी स्वामित्व के अन्तर्गत चल सकती है।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि बहुसंख्यक अमेरिकन मन ही मन यह मानते हैं कि अमेरिका समाजवाद की ओर अग्रसर ही नहीं हो रहा, बल्कि वह समाजवाद से भी आगे जा रहा है।

३

मैंने इसे अधिचेतन सहमति की संज्ञा इसलिए दी है कि हम में से अधिकांश लोग अपने चेतन चिंतन में उसी प्राचीन विचारधारा के शिकार हैं, जो अब एक भ्रांति मात्र रह गयी है। यह विचारधारा है : समाजवाद की ओर विश्व का झुकाव अनिवार्य है।

इतिहास की दृष्टि से राजनीतिक रंगमंच के इस चित्र की जरूरत अरसे से है। पिछली शताब्दी अथवा उसके आसपास सरकार पर बारबार जनहित के लिए अधिक काम करने के लिए दबाव डाला जाता रहा। जो लोग ऐसा नहीं चाहते थे और इस कारण सरकार का पैर पीछे खींचने की कोशिश करते थे, उनको अनुदार अथवा रूढ़िवादी कहना ठीक ही था। इसके विपरीत, जो लोग निजी उद्योग तक पर सरकारी नियंत्रण चाहते थे उनको उग्रपंथी कहना अथवा आमूल परिवर्तनवादी (रेडिकल) की संज्ञा देना सही था। और, जो लोग यह चाहते थे कि सरकार हर चीज़ अपने अधिकार में ले ले, और यदि आवश्यक हो तो इसके लिए हिंसक क्रांति की जाये (संक्षेप में कम्युनिस्ट) उनको उग्र आमूल परिवर्तनवादी कहना भी वाजिब था। लेकिन, अब अमेरिका ने बता दिया है कि सब से अच्छा तरीका वह है, जिसमें सीमित सरकारी हस्तक्षेप हो और निजी उद्योग तथा निजी संस्थाओं को अधिक स्वतन्त्रता हो। इसमें सरकारी उत्तरदायित्व और वैयक्तिक प्रेरणा दोनों का लाभ मिलता है तथा दोनों की हानिकर बातों से बचा जा सकता है। इस प्रणाली से सब से बड़ा फायदा यह है कि इसके अन्तर्गत निर्णायक अधिकार और अवसर का व्यापक विकेन्द्रीकरण

होता है। संक्षेप में यह कि, लोगों ने पहले जो कल्पना की थी, आज प्रगति की दिशा उससे भिन्न है।

फिर भी यह भ्रांति बनी हुई है कि, समय का झुकाव समाजवाद की ओर ही क्यों, संभवतः साम्यवाद की ओर है। यद्यपि हमारा उत्पादन, हमारा धन, हमारा जीवन स्तर दुनिया के लिए आश्चर्यजनक है; यद्यपि, आइजावेल लुडबर्ग के शब्दों में, हम अन्य राष्ट्रों को महत्त्वपूर्ण सामान और यांत्रिक सेवाएँ प्रदान करने की स्थिति में हैं (जब कि रूस अपनी घोषणाओं के बावजूद जूते का फीता तक नहीं भेज सकता), यद्यपि हमारे इस तरीके का मर्म अत्यन्त क्रांतिकारी है, फिर भी हमारे मन में यह भ्रांति इस क़दर बैठ गयी है कि जब कभी हमारा सामना विदेशी मामलों से होता है, हम अपने को कट्टरपंथियों के पक्ष में ही रखने की अन्तःप्रेरणा पाते हैं; और हमारा काम कुछ इस प्रकार का होता है, मानो हम अधिक अच्छा जीवन स्तर प्राप्त करने की मानव-जाति की इच्छा को कुचल डालना चाहते हैं। अन्तः प्रेरणावश हम परिवर्तन का विरोध करते हैं। हम रूस के बारे में ऐसा सोचते हैं, मानो वह और उसके पिट्ठू आमूल परिवर्तनवाद के प्रतिनिधि हों; मानो वे उस धारा का प्रतिनिधित्व करते हों, जिस ओर, यदि परिवर्तन का विरोध न किया, तो हम भी चले जा सकते हैं, मानो रूस निरंकुश तानाशाही के सिवा और कुछ है। हम यह नहीं समझने की कोशिश करते कि सर्वसाधारण का जीवन सुखमय बनने का ऐतिहासिक साम्यवादी लक्ष्य बर्बरतापूर्ण कार्रवाई द्वारा राष्ट्रीय हित-साधन के लक्ष्य के रूप में परिवर्तित हो गया है। रूस की इस परम्परा का जन्म १९ वीं सदी की समस्याओं के समाधान के लिए हुआ था, जिन पर हम लोग बहुत पहले ही विजय पा चुके हैं।

अब भी समय है कि रूस के बारे में हम अपनी उक्त धारणा अपने दिल से निकाल दें। अब भी समय है कि हम यह समझ लें कि साम्यवाद के साथ हमारा संघर्ष अतीत के साथ का संघर्ष है, न कि भविष्य के साथ का। हम यह भी जान लें कि हमारे देश में जो परिवर्तन हुए और हो रहे हैं, उनकी दिशा समाजवाद अथवा साम्यवाद की ओर नहीं है। यह धारणा हमारे जीवन का विद्रूप तत्व है। इससे शुभेच्छुक लोगों के मन में भी यह बात पैदा होने लगती है कि अकट्टरपंथी विचार के हर व्यक्ति पर षड़यंत्र का संदेह किया जा सकता है।

इससे एक राष्ट्र के रूप में हमारी उदार भावनाएँ कुंठित होती हैं। व्यापक युद्ध, विशेषकर आणविक युद्ध के भय के साथ मिलकर तो यह हमारे सबल आत्म-विश्वास और अपने भविष्य के प्रति हमारी आस्था की जड़ ही कुरेदती है।

अपने दिमाग से इसे निकाल देना ही अच्छा है। हम समझ लें कि संसार में नेतृत्व का हमारा स्थान इस कारण है कि हम चुपचाप हाथ पर हाथ धरे बैठे नहीं रहे हैं। इस शताब्दी के पूर्वार्द्ध में अमेरिकी जीवन में परिवर्तन की कहानी विजय की कहानी है। यह जरूर है कि बीच में हमारा अनुभव कुछ कटु रहा है और भविष्य का नक़शा भी स्पष्ट नहीं है। लेकिन इससे हमारा कोई मतलब नहीं। यदि हम यह समझें कि शताब्दी के पूर्वार्द्ध में हमने जो कुछ किया है, वह शताब्दी के उत्तरार्द्ध में हमारे द्वारा सम्पन्न होनेवाले कार्यों की भूमिका मात्र है, तो अच्छा हो! यह तभी होगा, जब आविष्कार, सुधार तथा परिवर्तन की हमारी गति बनी रहेगी और हमारा हृदय उदार बना रहेगा। एक बहादुर आदमी भी एक बहादुर राष्ट्र के आगे के खतरों से घबराता नहीं, बल्कि अपने साहसपूर्ण मार्ग में उनकी उपस्थिति का स्वागत करता है।